THE BOOK WAS DRENCHED

चर्म बनाने के सिद्धांत

चर्म बनाने के सिद्धांत

अर्थात्

चमड़ा तैयार करने और सिझाने
के तरीक़े

लेखक

श्रीयुत देवदत्त अरोड़ा, बी० एस-सी०

डिप्लोमा-होल्डर इन लेदर टेकनोलॉजी

प्रयाग

हिंदुस्तानी एकेडेमी

संयुक्त प्रान्त

१९३०

Published by
The Hindustani Academy, U. P.,
Allahabad.

Printed by
Dularey Lal Bhargava,
at the Ganga Fine Art Press,
Lucknow.

सूचना

हिंदुस्तानी एकेडेमी ने अपनी तरफ़ से किताबें लिखने और छपाने के सिवा यह भी तय किया है कि उन लेखकों की रचनाएँ भी प्रकाशित की जाएँ जिन्होंने अपने शौक़ और उत्साह से कुछ लिखने का परिश्रम उठाया है।

मन्शा यह है कि स्वतंत्र लेखकों की किताबों को प्रकाशित करके उन्हें बढ़ावा दिया जाय! इस ग़रज़ से एकेडेमी ने सन् १९२७-२८ में यह तय किया था कि कुछ ऐसे ग्रंथों को छापने का विज्ञापन दिया जाय, और लोगों से उनकी लिखी हुई किताबें माँगी जाएँ। इस तरह हिंदी को जो किताबें छापने के लिये चुनी गईं, उनमें एक "चर्म बनाने के सिद्धांत" भी है। इस मज़मून पर हिंदी में बहुत कम किताबें देखने में आती हैं; यह किताबें बहुत अच्छी लिखी हुई जँचीं। चर्म बनाने के सिद्धांत में श्रीयुत देवदत्त अरोड़ा ने इस उपयोगी धंधे पर बड़ी मेहनत और योग्यता से लिखा है। अब हमारे देश में इसकी बड़ी ज़रूरत है कि हमारे पुराने उद्योग धंधों को नए तरीक़ों पर सीखने और चलाने के लिये हमारे पास अच्छी-अच्छी किताबें हों। इस नए युग में नई-नई बातों की जानकारी हासिल करने के लिये किताबों को छोड़ और कोई उतना सरल साधन नहीं है। विद्या के प्रचार की बाढ़ के साथ-साथ यह ज़रूरी

भी है कि हर तरह के लोगों के लिये उनके मतलब की किताबें अपनी भाषा में हों। हिंदुस्तानी एकेडेमी इसकी भी कोशिश कर रही है कि विज्ञान के हरएक विषय पर सरल हिंदी और उर्दू में ऐसी किताबें लिखाई जायँ जिनसे हरएक उद्योग-धंधे के लोगों के काम में सहायता पहुँचे।

इस पुस्तक में अरोड़ा साहेब ने सरल भाषा में चमड़ा बनाने के नए तरीक़ों को बड़ी योग्यता से लिखा है। किताब बड़े काम की होगी, इसमें तनिक संदेह नहीं। हमें उम्मेद है कि हमारे देश के लोग इससे लाभ उठावेंगे।

ताराचंद
मंत्री

FOREWORD.

India is one of the biggest markets that are known for their hides and skins, and Indian goats are considered the best for the manufacture of Glace-kid. The following few figures, the average of export for five years, 1923 to 28, will show what a vast field there exists for the development of Leather Trade in our country.

Export of Raw Hides and Skins :—

Buffalo ...	...	...	Rs.	42,07,188
Cow ...	...	...	,,	2,66,28,226
Calf ...	...	...	,,	7,43,090
Goats ...	...	...	,,	3,96,03,030
Sheep ...	...	...	,,	5,58,623
Other Skins	...	...	,,	17,02,938
	Total	...	Rs.	7,34,43,095

Total hides and skins tanned or dressed (known as half-tans.) :—

Hides	...	...	...	Rs. 3,29,11,818
Skins	...	...	...	„ 4,00,98,869
		Total	...	Rs. 7,30,10,687

Total of both raw and half-tans :—

Rs. 14,64,53,782

It is interesting to note that in the year 1921 inspite of slump in the trade, exports by rail from different blocks of United Provinces amounted to Rs. 1,23,73,698.

Unfortunately we in U. P. have not established the half-tans trade, mainly due to the unsuitable indigenous tanning materials and also due to the ignorance, on the part of the manufacturers of such goods, of the properties of existing materials and consequently the importance of blending these. Such lack of knowledge can be improved, as stated below, only through publications in vernaculars.

The expression "Leather" is applied to hides and skins of animals, which have undergone a change by treatment with a variety of tanning materials both of vegetable and mineral origin and which in the new form can stand without deterioration the action of atmospheric moisture, air, and heat. The fibres of interwoven network, of which

the skin or hide is made are detached, and so changed that they do not stick and form lumps, as is the case with raw hides. The processes to bring about this change are divided into three groups; (*a*) Vegetable Tanning process, (*b*) Mineral Tanning process, (*c*) Oil and Aldehyde Tanning process.

(*a*) Vegetable tanning processes differ considerably in details, depending on raw materials used and also on the ultimate products, to be aimed at. There are more than 350 different kinds of tanning materials known so far, and these differ from one another in various degrees. Thus it is evident that unless a workman has knowledge of materials to be used by him, he is sure to make unreparable mistakes.

(*b*) Mineral tannages are those of Chromium, Aluminium, and Iron salts. The workman requires a thorough knowledge and certain control of the processes for successfully using these materials.

(*c*) Oil and Aldehyde tannages are brought about by uses of drying oils under certain conditions. All the processes are of skill and experience and require a thorough knowledge of changes that are taking place.

Over and above the complexities created by the

variety of tanning materials, the goods are to be treated at various stages with a variety of materials, and mistakes made at any stage are entirely irreparable.

The bulk of Leather trade in our country is in the hands of the most backward class of chamars, who are neither literate nor have any knowledge of various processes at various stages of manufacture. The processes that they are practising are the most primitive and of putrefactive nature and it is for this reason that they can not turn out any good leather. In the modern Leather trade, along with the scientific processes, they have introduced a variety of machinery, the knowledge of which is quite essential to make good and faultless leather.

All the above mentioned points show the importance of the book which would throw light on the processes. So far there is not even one book in any vernacular of our vast country, while in foreign countries they are bringing out scores of volumes on the subject, and elucidating the processes, so far, considered trade secrets, and thus enabling the trade to expand and to improve. It must be admitted that there are innumerable difficulties in writing such original works in Vernaculars, as the terminologies

are new, and too technical. I congratulate Mr. D. D. Arora, B. Sc., and a Diploma holder of the H.B. Technological Institute, for the lucid and intelligible way in which he has explained and described the various technical and scientific processes. He has done a good service to our country by giving us this valuable volume, which I feel will be of immense use to those who do not understand English.

M. B. HUDLEKAR.

LEATHER DEPARTMENT,
H. B. Technological Institute, U. P.,
1st January, 1930.

प्राक्कथन

खालों के व्यापार के लिए, भारतवर्ष संसार की बड़ी मंडियों में से है। ग्लासी किड चमड़ा बनाने के लिए यहाँ की बकरी की खालें सबसे अच्छी समझी जाती हैं। निम्न लिखित सूची से जिसमें पाँच साल (१९२३—२८) की निर्यात का औसत दिया है ज्ञात हो जाएगा कि हमारे देश में चर्म बनाने के व्यवसाय की उन्नति का कितना बड़ा क्षेत्र है।

कच्ची खालों की निर्यात

भैंस की		४२,०७,१८८ रु०
गाय ,,		२,६६,२८,२२६ ,,
बछड़े ,,		७,४३,०९० ,,
बकरी ,,		३,९६,०३,०३० ,,
भेड़ ,,		५,५८,६२३ ,,
अन्य पशुओं ,,		१७,०२,९३८ ,,
	जोड़	७,३४,४३,०९५ ,,

पकी हुई खालों [हाफ़ टैन्स] की निर्यात

भारी खालें (हाइड्स)		३,२९,११,८१८ रु०
हल्की ,, (स्किन्स)		४,००,९८,८६९ ,,
	जोड़	७,३०,१०,६८७ ,,
	कच्ची और पकी दोनों का जोड़	१४,६४,५३,७८२ ,,

यह ध्यान देने योग्य बात है कि सन् १९२१ में यद्यपि व्यापार मंदा था, फिर

भी संयुक्तप्रान्त के भिन्न-भिन्न भागों से रेल द्वारा १,२३,७३,११८ रु० की खालें बाहर भेजी गईं।

दुर्भाग्यवश हमारे संयुक्त प्रान्त में हाफ़ टैन्स का व्यवसाय नहीं जम पाया है : इसका मुख्य कारण यही है कि एक तो यहाँ खाल पकानेवाले पदार्थ अनुपयुक्त हैं, दूसरे यहाँ के चमार उन पदार्थों के जो यहाँ मिलते हैं गुणों को ही नहीं जानते। इन पदार्थों को ठीक-ठीक मात्रा में मिलाकर प्रयोग करने की आवश्यकता है। यह जानकारी तभी आ सकती है (जैसा आगे कहा है) कि जब देसी भाषाओं में इस विषय की पुस्तकें निकलें।

शब्द चर्म या चमड़ा पशुओं की उन खालों (हाइड्स और स्किन्स) के लिए प्रयोग होता है, जो भिन्न-भिन्न प्रकार के वनस्पतिक या खनिज पकानेवाले पदार्थों के प्रयोग से ऐसी दशा में बदल गई हैं कि वे अब वायुमंडल की नमी, हवा, और गर्मी का असर बिना बिगड़े सह सकती हैं। जाल के समान फैले या गुँथे हुए रेशे, जिनसे कि खाल बनी है अलग-अलग हो जाते हैं और ऐसे रूप में बदल दिये जाते हैं कि वे फिर चिपकते नहीं और न उनकी गाँठें-सी बनती हैं जैसा कि कच्ची खालों के साथ होता है। खाल को इस रूप में बदलने की तीन विधियें हैं : (क) वनस्पति पदार्थों द्वारा पकाने की विधि (ख) खनिज पदार्थों द्वारा पकाने की विधि (ग) तेल और एल्डीहाइड से पकाने की विधि।

(क) वनस्पति पदार्थों से पकाने की विधियों के विस्तार में प्रयुक्त होनेवाले कच्चे माल तथा बनाई जानेवाली वस्तुओं के कारण बड़ी विभिन्नता है। अब तक ३५० से अधिक प्रकार के पकानेवाले पदार्थ मिले हैं और इनमें एक दूसरे से बड़ा अन्तर है। इससे स्पष्ट है कि जब तक कार्य-कर्ता को उन पदार्थों का पूरा पूरा ज्ञान नहीं है वह अवश्य ऐसी अशुद्धियें करेगा जो फिर ठीक नहीं हो सकतीं।

(ख) पकानेवाले खनिज पदार्थ क्रोमियम, एल्यूमिनियम और लोहे के नमक हैं। इन पदार्थों को सफलता से काम में लाने के लिए कार्य-कर्ता को इनका पूरा पूरा ज्ञान होना और विधियों की देख-भाल में दक्ष होना आवश्यक है।

(ग) तेल और एल्डीहाइड द्वारा खालों की पकाई सूखनेवाले तेलों को ख़ास विधि से प्रयोग करने से होती है। यह सब विधियें चतुरता और अनुभव पर निर्भर हैं; उनमें की रसायनिक क्रियाओं का जानना भी अति आवश्यक है।

पकानेवाले पदार्थों की अनेकता से विधियां में जो पेचीदगी होती हैं उनके अतिरिक्त खाल को कितने ही प्रकार के मसालों में डालना पड़ता है; और यदि कहीं भी ग़लती हुई तो उसका सँभालना कठिन हो जाता है।

हमारे देश में चर्म बनाने के व्यवसाय का बहुत बड़ा हिस्सा बिल्कुल अनाड़ी चमारों के हाथ में है, जो न तो शिक्षित हैं और न जिनको चमड़ा बनाने की अनेक विधियों की विविध अवस्थाओं का ज्ञान है। जिन विधियां से वे काम करते हैं बहुत ही प्राचीन और सड़ायँदवाली हैं : और इसी कारण से वे अच्छा चमड़ा नहीं निकाल सकते। आधुनिक चर्म व्यवसाय में वैज्ञानिक विधियों के साथ साथ बहुत सी मशीनें प्रयुक्त होने लगी हैं जिनका जानना अच्छा और निर्दोष चमड़ा निकालने के लिए आवश्यक है।

ऊपर लिखी बातों से विदित होगा कि ऐसी एक पुस्तक की कितनी आवश्यकता है, जो इन विधियों के तत्वों को समझाए। अब तक हमारे इतने बड़े देश की किसी भी भाषा में ऐसी एक भी पुस्तक नहीं है। इसके विपरीत बाहर के देशों में इस विषय पर कोड़ियों पुस्तकें छप रही हैं और उन विधियों को समझाया जा रहा है जिनको अब तक व्यापारिक भेद कहते थे। इस प्रकार वहाँ के लोग इस व्यापार की वृद्धि तथा उन्नति में मदद दे रहे हैं। यह मानना होगा कि भाषा में ऐसी प्रारम्भिक पुस्तक लिखने में अनगिन्त असुविधायें होंगी क्योंकि व्यवसायिक शब्द नए हैं और केवल व्यवसाय से ही सम्बन्ध रखनेवाले हैं। मैं डी० डी० अरोड़ा बी० एस-सी० को जो कि हा० ब० टेकनोलॉजिकल इंस्टीट्यूट से डिप्लोमा प्राप्त हैं, इन विविध व्यवसायिक तथा वैज्ञानिक विधियों को ऐसी साफ़ और सरल भाषा में लिखने पर बधाई देता हूँ। ऐसी

अपनी पुस्तक लिखकर उन्होंने देश की बड़ी सेवा की है और मैं आशा करता हूँ कि यह उन लोगों के बड़े लाभ की होगी जो अँगरेज़ी नहीं जानते।

एम० बी० हुबलिकर

चर्म व्यवसाय विभाग

हा० ब० टेकनोलॉजिकल इंस्टीट्यूट

(औद्योगिक शिक्षा का कॉलेज)

संयुक्त प्रान्त, कानपुर

१ जनवरी १९३०

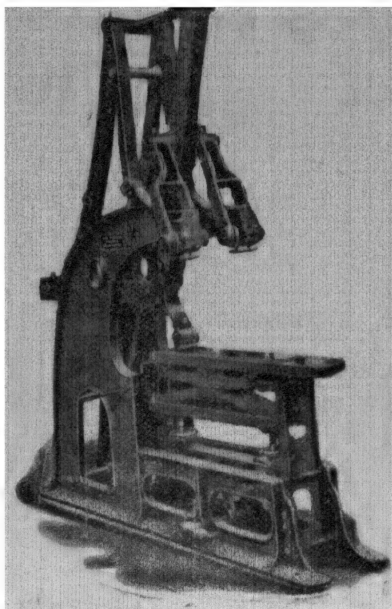
नोट—श्रीमान् हुबलिकर साहब ने जो कि हारकोर्ट बटलर टेकनोलॉजिकल इंस्टीट्यूट कानपुर में चर्म व्यवसाय विभाग के प्रधान अफ़सर हैं इस प्राक्कथन (Foreword) को अँगरेज़ी में लिखा है। यह उसका अनुवाद है।

देवदत्त अरोड़ा

वक्तव्य

प्राक्कथन में श्रीमान् हुडलिकर साहेब ने ऐसी पुस्तक की आवश्यकता काफ़ी ज़ोरदार शब्दों में प्रकट की है, उसको दोहराने की मुझको ज़रूरत नहीं है। इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए, मैंने यह पुस्तक मातृभाषा में लिखी है। यदि इससे चर्म व्यवसाय को कुछ भी लाभ हुआ तथा इस विषय पर और पुस्तकें लिखी गईं, तो मैं अपना प्रयत्न सफल समझूँगा।

इस पुस्तक में मैंने चमड़ा बनाने के सिद्धान्तों को भली प्रकार समझाया है। साथ ही हर प्रकार के चमड़ा बनाने की विधि भी दी है। रसायनिक क्रियाओं को यथासम्भव बताया है। रसायनिक देखभाल (chemical control) की विधियों को, संकेतमात्र, हर जगह दिया है: अधिक विस्तार से इनको इसलिए नहीं लिखा है कि इनको करने के लिए विज्ञान की जानकारी तथा उसके अभ्यास की भी आवश्यकता है। दूसरे इससे पुस्तक का विस्तार बहुत बढ़ जाता। रसायनिक पदार्थों के नाम जिस प्रकार अँगरेज़ी या हिन्दी में प्रचलित हैं वैसे ही दिए हैं: उनकी हिन्दी बनाने का मैंने प्रयत्न नहीं किया है क्योंकि इससे उनका समझना कठिन हो जाता। मशीनों का वर्णन भी, विस्तार आदि का ध्यान रखते हुए, यथासम्भव किया है। दिग्दर्शन से कुछ बचा नहीं है। 'पानी' और 'संयुक्तप्रान्त के चर्म-व्यवसाय का वर्णन तथा कुछ सम्मतियाँ' दो अच्छे अध्याय भी लिख दिए हैं। इतने पर भी ऐसी पुस्तक में त्रुटि का होना असम्भव नहीं है। अतः मैं उन



१. घोटा फेरने की मशीन (पृ० १६४)

(Glazing Machine)

महानुभावों का कृतज्ञ हूँगा जो मुझे इन त्रुटियों से सूचित करेंगे । साथ ही मेरी प्रार्थना यह है कि त्रुटियों की ओर ध्यान न देकर सज्जन इससे लाभ उठाने का प्रयत्न करेंगे, क्योंकि इस आशय की इसमें बहुत सी बातें हैं ।

अन्त में मैं प्रोफ़ेसर हुडलिकर साहेब को जिनकी सलाह, सहानुभूति तथा सहायता से मैं यह पुस्तक इतनी उपयोगी बना सका अनेकशः धन्यवाद देता हूँ । और जिन सज्जनों ने इस पुस्तक की तैयारी में सहायता दी है उनको भी धन्यवाद देता हूँ ।

देवदत्त अरोड़ा

विषय-सूची

चित्र-सूची



पहला अध्याय

भूमिका

चर्म या चमड़ा (Leather) क्या है ? अक्सर मनुष्य चमड़े से खाल का मतलब लेते हैं। इसलिए सवाल होता है कि चमड़ा क्या वस्तु है ? पशुओं की खाल की उस बदली हुई हालत को चमड़ा कहते हैं जो सड़ता गलता नहीं और जिससे मनुष्य के काम की चीजें बनती हैं। सब जाति के पशुओं की खाल से चमड़ा बनाया जा सकता है ; पर ज्यादातर गाय, बैल, भैंस, भेड़ और बकरी की खाल का चमड़ा काम में आता है। ये पशु खाने के लिए बड़ी तादाद में रोज़ाना मारे जाते हैं, उनका गोश्त खाया जाता है और उनकी खाल का चमड़ा बनता है। मगर, नील-गाय, हिरन आदि शिकारियों द्वारा मारे जाते हैं, इसीलिए इनकी खालें इतनी अधिक संख्या में नहीं मिलतीं ; तो भी बहुत काफ़ी मिल जाती हैं। मगर और नील-गाय की खालों के सूट-केस आदि बनाये जाते हैं। हिरन की खालें यहाँ पर मृगछाला और छोटी २ चीजें बनाने या अस्तर आदि के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। मछली की खाल का भी चमड़ा बनाया जाता है और यह ख़ूब-सूरत, फ़ैन्सी चीजों के बनाने में काम आता है। योरप में यह बहुत पसन्द किया जाता है। पशु के मरने या हलाली होने के बाद जब खाल पशु पर से उतारी जाती है उसके ऊपर बाल होते हैं और उसके अन्दर

की तरफ़ ख़ून, गोश्त लगा रहता है। यदि वे ऐसी ही छोड़ दी जावें तो सड़ जाती हैं। इनको एक ऐसे रूप में बदल देना जिसमें न वे सड़ें और न गलें तथा काम में आ सकें चर्म बनाना (Leather-manufacturing या Tanning) कहलाता है। और ऐसी वस्तु को चमड़ा कहते हैं।

गाय, बैल, भैंस आदि पशुओं की खाल को अँगरेज़ी में हाइड (Hide), और बकरी, भेड़ आदि छोटे पशुओं की खाल को स्किन (Skin) कहते हैं। हाइड और स्किन में अन्तर इतना ही है कि हाइड भारी और स्किन हल्की होती है। मगर की खाल को अक्सर स्किन ही कहते हैं। उन भिन्न २ जाति के पशुओं की, जो स्तन से दूध पिलाते हैं (Mammalians स्तनपोषित पशुसमूह) खाल की बनावट बहुत कुछ एकसी होती है। उनमें हिस्से एकसे ही हैं पर जातिभेद से थोड़ा २ अन्तर पाया जाता है। जैसा चमड़ा गाय की खाल से बन सकता है वैसा भैंस की खाल से नहीं। इसी कारण से उनके इस्तेमाल में भी फ़र्क़ होता है। भैंस की खाल से काठी, साज़, बिस्तरबन्द, सूट-केस, तले आदि का चमड़ा बनता है। गाय का चमड़ा हल्के काठी, साज़, बिस्तरबन्द, सूट-केस, तले, जूतों के ऊपर आदि में प्रयोग होता है। भेड़ का चमड़ा अधिकतर अस्तर लगाने के काम में और बकरी का जूतों के ऊपर के लिए या हल्के कामों में प्रयोग होता है।

जैसा चमड़ा बनाना हो उसी के अनुसार उसके बनाने की विधि में अन्तर करना पड़ता है। बनाने की विधि प्रायः दो हैं व आजकल कई नई विधियों से भी चमड़ा बनाया जाता है। पुराने ज़माने से वनस्पति पदार्थों से यानी पेड़ों की छाल, फल आदि से चमड़ा बनाने की विधि चली आ रही है। इन वस्तुओं से अब भी बहुतसा चमड़ा बनता है। कुछ चमड़ों के बनाने में तो यह पदार्थ अब तक अनिवार्य हैं, अर्थात् इनसे बनाया हुआ ही चमड़ा इन कामों में आ सकता है। किसी

दूसरी विधि से बना चमड़ा उतना अच्छा काम नहीं देता। दूसरी मशहूर विधि क्रोमियम (Chromium) से बनाने की है। अक्सर आपने बाजारों में सुना होगा कि "क्या यह क्रोम का चमड़ा है ?" क्रोमियम के प्रयोग से बना हुआ चमड़ा क्रोम लेदर (Chrome Leather) कहलाता है। किसी भी खाल से क्रोम का चमड़ा बन सकता है। परंतु हर चमड़े का, जैसा ऊपर दिखाया जा चुका है, एकसा प्रयोग नहीं हो सकता, न अलग २ कामों के लिए एक विधि से बनाया हुआ चमड़ा काम आ सकता है। हर काम के लिए ख़ास विधि से चमड़ा बनता है।

चमड़ा बनाना कोई नया काम नहीं है। इस देश में भी चमार जाति चली आती है। ऐसा मालूम होता है कि सृष्टि के आदि ही से यह काम होता आ रहा है। कृषि-कर्म से पहिले मनुष्यों का भोजन केवल मांस ही था। उस समय शरीर ढकने के लिए मनुष्य का एकमात्र उपाय चमड़ा ही था। भारतवर्ष के इतिहासों में जो चर्मकार का नाम आता है, उससे भी यही मालूम होता है कि यहाँ पुराने ज़माने में चमड़ा बनता था। रामायण में मृगछाला का वर्णन है। इससे पूर्व, शंकरजी स्वयं बाघम्बर काम में लाते थे। मिस्र देश के कुछ ऐसे चमड़े मिले हैं जिनके विषय में पता लगता है कि वे सन् ईसा से ३०० वर्ष पूर्व बने थे।

अब प्रश्न होता है कि क्या उस समय में भी यह व्यवसाय इस उन्नति के शिखर को पहुँचा था, और तब किस २ उपाय से चमड़ा बनता था ? सबसे शुरू में खाल को सिर्फ़ सुखाकर फिर पशुओं के सिर के गूदे को तथा चर्बी को लगाकर चमड़ा बनाते रहे होंगे। धीरे २ धुएँ से, फिर वनस्पति पदार्थों से चमड़ा बनना शुरू हुआ होगा। ठीक जानना कठिन है; क्योंकि कोई ऐसी पुस्तक नहीं है जिससे यह मालूम हो सके। जो कुछ उस समय के पदार्थ मिले हैं उनसे साफ़ प्रकट है कि

किसी समय में यह व्यवसाय उन्नति के शिखर पर पहुँचा था। मिस्र देश के जो जूते तथा शिला-लेख मिले हैं उनसे पता लगता है कि उस समय वहाँ पर आजकल का सा अच्छा चमड़ा अवश्य बनता था। क्रोम आदि से चमड़ा बनाना हाल का ही आविष्कार है; इसको एक शताब्दि भी नहीं हुई।

चमड़ा बनाने का संक्षिप्त विवरण—खालें चाहे जिस पशु की भी क्यों न हों और चाहे जिस दशा में हों जब वे टेनरी (Tannery चर्मकार्यालय) में पहुँचती हैं, उनको पहिले पानी में भिगोया जाता है। जब तक वे भीगकर ऐसी नर्म न हो जायँ जैसी पशु पर से उतारने के समय होती हैं वे पानी में ही रहती हैं। आम तौर पर बारह घंटे काफ़ी होते हैं पर कुछ खालों के लिए दो तीन या उससे भी अधिक दिन लग जाते हैं।

फिर उनको चूने के घोल में डाला जाता है। चूने का घोल हौद में पानी भरकर उसमें कुछ बुझा हुआ चूना मिलाकर बनाया जाता है। प्रति दिन खालें हौद में से निकालकर उल्टी पल्टी जाती हैं और आवश्यकतानुसार एक हौद से दूसरे हौद में बदली जाती हैं। कभी २ चूने के घोल में सोडा भी दे देते हैं। कुछ दिनों में जब खाल पर के बाल उँगली से हटाने के लायक़ हो जाते हैं तब खालों को बीम (Beam) पर डालकर, कुन्द छुरे से रगड़कर, बाल को हटा देते हैं। इसको बाल कढ़ाई (Dehairing or unhairing) कहते हैं। इसके बाद खालों को चूने में डाल देते हैं। जब वे ठीक फूल जाती हैं, तब बीम पर डालकर तेज़ छुरी से फ़जूल गोश्त छील देते हैं। अब खाल का सिर्फ़ चमड़ा बनानेवाला हिस्सा रह जाता है।

चूने से इस प्रकार काम निकालकर खाल को चूना-रहित कर देते हैं। इस चूना निकालने की विधि को चोकर देना (Bating बेटिंग) कहते

हैं ; इसको भी भिन्न-भिन्न रीतियाँ हैं। जैसे चोंकर में डालकर या बोरिक ऐसिड आदि ऐसिड से या ख़मोर उठते हुए घोलों से चूना निकाला जाता है। जब खाल बिल्कुल ढोली हो जाती है और आवश्यकतानुसार चूना निकल जाता है तब खालों को निकाल लेते हैं और बीम पर डालकर कुंद छुरी से उनकी सफ़ाई करते हैं ; इसे छुरी लगाना (Scudding स्कडिंग) कहते हैं।

छुरी लगाकर खालों को पकाने के घोलों में डालते हैं। ये घोल वनस्पति या खनिज पदार्थों से बनाये जाते हैं। वनस्पति पदार्थों के प्रयोग में दो हफ़्ते से साल तक लग जाता है, परंतु खनिज पदार्थों के प्रयोग से एक दो दिन ही में खाल पक जाती है। जब केवल वनस्पति पदार्थ से चमड़ा बनता था तब इतनी विधि को टैनिंग (Tanning) और इस तैयार खाल को टैंड हाइड (Tanned hide) कहते थे ; क्योंकि इन पदार्थों में जो असल पकानेवाली चीज़ है उसे टैनिन (Tannin) कहते हैं। क्रोम से पके हुए को क्रोम टैंड (Chrome-tanned) कहते हैं।

पकी हुई खालों से प्रयोग में आने योग्य चमड़ा बनाने की विधि को फ़िनिशिंग प्रोसेस (Finishing process) कहते हैं। वनस्पति से पके भारी चमड़े जैसे ज़ीन, साज़, तला आदि के बनाने की इस अंतिम विधि को करीइंग (Currying) कहते हैं। करीइंग में पहला काम स्काउरिंग (Scouring) है। इसमें धोकर चमड़े पर से बेकाम पदार्थ निकाला जाता है। उसके बाद चमड़ों को छीलकर (Shaving) चमड़े की मोटाई ठीक करते हैं और गोश्तवाली सतह को बराबर करते हैं, फिर चर्बी लगाते हैं। इसे बिठलाई (Setting) कहते हैं। और अच्छी तरह सुखाकर काँच से घोटते हैं जिसे काँच लगाना या ग्लासिंग (Glassing) कहते हैं।

क्रोम से पकी खाल को कुछ सुखा कर (Sam सैम कर) छीलते हैं। छीलकर बराबर कर उसमें का ऐसिड दूर करते हैं। इसे शिथिलीकरण (Neutralization न्युट्रेलाइज़ेशन) कहते हैं। ऐसिड दूर करके खालों को रँगते हैं और उनमें तेल (Fat liquor फ़ेट लिकर) देते हैं, फिर कुछ सुखाकर बिठलाई करके उन्हें तख्तों पर कीलों से गाड़ देते हैं। सूखने पर उखाड़ लेते हैं और तोड़ाई की मशीन (Staking Machine स्टेकिंग मशीन) पर उनकी तोड़ाई कर उन्हें मुलायम करते हैं। फिर साफ़कर दानेवाली सितह पर सोज़न (Season) लगाते हैं और घोंटा फेरने की मशीन (Glazing Machine ग्लेज़िङ्ग मशीन) से घोंटते हैं, जिससे चमक और चिकनाहट आ जाती है। फिर दाना (Grain ग्रेन) उठाकर, नापकर, बिकने को भेज देते हैं।

दूसरा अध्याय

पानी (WATER)

जितनी चीजें चर्म्मकार्यालय (Tannery टैनरी) में प्रयोग होती हैं, उनमें पानी एक बड़ी जरूरी चीज है। चमड़ा बनाने के हर काम में पानी की बहुतायत से जरूरत होती है। पानी के ठीक होने पर अच्छे चमड़े का बनना बहुत कुछ निर्भर है। पानी कुएँ या नदी से लिया जाता है। पानी में बहुतसी चीजें घुल सकती हैं। इसलिए वर्षा का शुद्ध पानी जब तक कुएँ तक पहुँचता है उसमें बहुतसी चीजें जैसे खनिज (Mineral), चेतन पदार्थ (Organic matter) और कीटाणु घुल मिल जाते हैं। डिस्टिल्ड वाटर (Distilled water भाप के पानी) में कुछ नहीं घुला होता है। पर जब इतना पानी चाहिए इससे काम नहीं चल सकता और ऐसे पानी की जरूरत भी नहीं है। चर्म्म-कार्यालय के उपयोग के लिए यदि पानी में कुछ लवण (Salts साल्ट्स) जो आगे बताये जायँगे, न हों, या उसमें से निकाल दिये जायँ तो पानी इस्तेमाल के लायक़ हो जाता है। लोहे की नलियों द्वारा आई हुई भाप को ठंडाकर जो पानी बनाते हैं उसमें लोहा चला आता है; इसलिए ऐसा पानी काम का नहीं है; इस लोहे से चमड़े पर धब्बे पड़ जाते हैं।

जिस पानी में कैल्शियम (Calcium) और मैग्नीशियम (Mag-

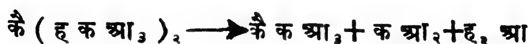
nesium) के लवण (Salts) होते हैं उसे भारी पानी (Hard water हार्ड वाटर) कहते हैं। इनकी मामूली पहचान यह है कि यदि ऐसे पानी में साबुन घोला जाय तो कुछ साबुन फुटकी सा ऊपर आ जाता है। हल्के पानी (Soft water साफ्ट वाटर) में ऐसा नहीं होता, क्योंकि उसमें ये लवण नहीं होते। भारीपन (Hardness हार्डनेस) दो प्रकार का है एक अस्थायी (Temporary टेम्पोरेरी) और दूसरा स्थायी (Permanent परमैनेन्ट)।

अस्थायी भारीपन कैल्शियम बाइकार्बोनेट (Calcium Bicarbonate) और मैग्नीशियम बाइकार्बोनेट (Magnesium Bicarbonate) के कारण होता है। स्थायी भारीपन कैल्शियम सल्फेट (Calcium Sulphate) और मैग्नीशियम सल्फेट (Magnesium Sulphate) और कभी २ क्लोराइडस् (Chlorides) और नाइट्रेटस् (Nitrates) के कारण होता है। भारीपन चाहे कैल्शियम के और चाहे मैग्नीशियम के लवण के कारण हो, चर्मकार के लिए दोनों का एकसा ही असर होता है; दोनों ही नुक़सान करनेवाले हैं। इनके सिवाय पानी में और भी कुछ बुराइयाँ होती हैं जिन्हें गंदापन (Contamination) के नाम से संबोधित कर सकते हैं। सड़े हुए पशु या वनस्पति पदार्थ पर बहने से ये बुराई पानी में आ जाती हैं। इनमें सड़ानेवाले (Putrefying) कीटाणु होते हैं। चमड़े को भारीपन के कारण जो हानि हो, उससे भी अधिक हानि, इनसे पहुँच सकती है।

प्रकृति में बिल्कुल शुद्ध पानी नहीं मिलता, उसमें कुछ-न-कुछ मिला होता है। इसलिए हानि करनेवाली बुराइयों को इस्तेमाल करने से पहले दूर कर लेना चाहिए।

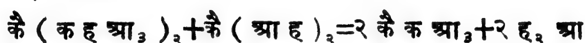
यदि अस्थायी "भारी" पानी (Temporary hard water) को उबाल दें तो कार्बन डाइआक्साइड (क आ$_2$ Carbon Dioxide

CO_2) निकल जाती है, और शिथिल कार्बोनेट बनता है जो घुलता नहीं। तली पर गाद के रूप में बैठने लगता है (तलछट हो जाता है Precipitate) यथा—


कै (ह क आ$_3$)$_2$ ⟶ कै क आ$_3$ + क आ$_2$ + ह$_2$ आ


$$Ca(HCO_3)_2 \longrightarrow CaCO_3 + CO_2 + H_2O$$

पर ऐसी दशा में मैग्नीशियम बाइकार्बोनेट की सारी कार्बन डाइ-आक्साइड निकल जाती है और वह मैग्नीशियम हाइड्राक्साइड मग्न (आ ह)$_2$ —$Mg(OH)_2$ के रूप में तली पर बैठ जाता है। चूना मिलाने से बाइकार्बोनेट की यह कार्बन डाइ आक्साइड जो उबालने से निकल जाती है, चूने से मिल जाती है। चूने से मिलने से इसका भी शिथिल लवण (Neutral Salt) कार्बोनेट बनता है जो तलछट हो जाता है। यथा—


कै (क ह आ$_3$)$_2$ + कै (आ ह)$_2$ = २ कै क आ$_3$ + २ ह$_2$ आ


कै० बाइकार्बोनेट　　चूना　　कै० कार्बोनेट　　पानी

मैग्नीशियम का भी पहिले कार्बोनेट बनता है जो और चूने से मिलकर मैग्नीशियम हाइड्राक्साइड (मग्न (आ· ह)$_2$) में बदलकर तलछट हो जाता है ; साथ ही इतना चूना कैल्शियम कार्बोनेट के रूप में तलछट हो जाता है। यथा—


मग्न क आ$_3$ + कै (आ· ह·)$_2$ = मग्न (आ· ह·)$_2$ + कै क आ$_3$

इस तरह मैग्नीशियम के लवण को तोड़ने में कैल्शियम के लवण की अपेक्षा दूना चूना लगता है।

चूने से पानी को हल्का (Soft) करने के लिए बड़े २ हौदों में पानी भर कर उसमें आवश्यकतानुसार चूना देते हैं। खब हिलाकर बारह घंटे छोड़ देने से कैल्शियम कार्बोनेट और मैग्नीशियम हाइड्राक्साइड दोनों तली पर बैठ जाते हैं। निथरा पानी काम में लाया जाता है।

जहाँ बहुत सा हल्का पानी चाहिए वहाँ के लिए बहुत सी ऐसी कलें हैं जिनमें तलछट जल्दो बैठ जाता है और बहुत सा पानी आसानी से ठीक किया जा सकता है। इस तरह को मशहूर विधियें आर्क डैली (Arch Deeley) की, पोर्टर क्लार्क (Porter-Clark) की, और परम्यूटाइट (Permutite) की हैं। भारत में अक्सर चूना मिला कर ही काम निकाल लेते हैं या ऐसेही प्रयोग करते हैं, ज्यादा झंझट नहीं करते।

अस्थायी भारीपन (Temporary hardness) से जो हानि होती हैं ये हैं:—(१) कहते हैं कि इसके कारण खालों को भीगने में देर लगती है, पर यह ठीक नहीं मालूम होता है।—(२) चूना बुझाने, घोलने, और चूने का हौदा बनाने में कितना ही चूना कैल्शियम-कार्बोनेट बनकर ख़राब जाता है।—(३) चूने की खालों (Limed pelts) को ऐसे पानी में धोने से जो कैल्शियम-कार्बोनेट बनता है वह दाने पर जम जाता है, और दाना खरखरा हो जाता है।—(४) वनस्पति के घोलों में यह टैनिन से मिलकर टैनिन को बेकाम कर देता है, क्योंकि इससे जो कैल्शियम-टैनेट (Calcium Tannate) बनता है उसमें पकाने की शक्ति नहीं होती। साथ ही ऐसे घोल जिनमें कैल्शियम-टैनेट होता है हवा लगने पर काले पड़ जाते हैं और घोल की रंगत ख़राब हो जाती है। यद्यपि पानी में यह लवण बहुत ही थोड़ा होता है परंतु जितना पानी प्रति दिन ख़र्च होता है उस हिसाब से टैनिन जो कैल्शियम से बहुत भारी पदार्थ है बहुत सा ख़राब जाता है।—(५) स्काउरिंग में जहाँ साबुन प्रयोग होता है, साबुन कैल्शियम का साबुन बनकर ख़राब जाता है।—(६) खारी रंगों से भी ये लवण सम्मेलन (Compound) बनाते हैं, इतना रंग ख़राब जाता है। जब ये सम्मेलन दाने पर बनते हैं तो रंगत हमवार नहीं आती, धब्बे और धारियाँ पड़ जाती हैं। खारी रंगों के प्रयोग में इन कार्बोनेटस् को और कुछ नहीं तो काफ़ी ऐसेटिक

एसिड देकर ठीक कर देना चाहिए।—(७)क्योंकि यह लवण साबुन को भी तलछट करते हैं, इसलिये ऐसे पानी से फ़ैट-लिकर फट जाती है, तेल अलग हो जाता है। यह चिपचिपा चूने का साबुन दाने पर जम जाता है तो घोटा ठीक नहीं फिर पाता।—(८)बायलर (Boiler) को भी इस से बड़ी हानि होती है। ऊपर बता चुके हैं कि पानी को उबालने पर ये लवण तलछट हो जाते हैं। यही बात बायलर में होती है। बायलर की प्लेटों पर इनकी पपड़ी जम जाती है जो यदि उखाड़ न दी जाए, तो बायलर फट तक जाता है।पानी के साथ यदि कुछ वनस्पति तेल बायलर में चले जाएँ तो यह पपड़ी प्लेट से चिपट जाती है। खनिज तेलों से यह पपड़ी चिपकने नहीं पाती।

स्थायी भारीपन (Permanent hardness) कैल्शियम और मैग्नीशियम के सल्फ़ेट(Calcium and Magnesium Sulphates) के कारण होती है। ऐसे पानी में सोडा (Sodium carbonate) देने से कैल्शियम सल्फ़ेट तो कैल्शियम कार्बोनेट के रूप में बदलकर तलछट हो जाता है। मैग्नीशियम सल्फ़ेट का भी कार्बोनेट बनता है, पर उसे हाइड्राक्साइड के रूप में तलछट करने के लिये सोडे के साथ में चूना इस्तेमाल करना पड़ता है। सोडे के बजाय कास्टिक-सोडा प्रयोग हो सकता है और उससे दोनों प्रकार का भारीपन दूर हो जाता है। पर क्योंकि यह मँहगा पड़ता है, सोडा और चूना ही इस्तेमाल करते हैं। अस्थायी भारीपन दूर करने के लिये चूना दिया ही जाता है; साथ में सोडा और दे देने से दोनों ही भारीपन दूर हो जाते हैं।

स्थायी भारीपन से भिगोने में, चूने पर और टैनिन पर कोई असर नहीं होता। रंगने में वही ख़राबी होती है जो अस्थायी भारीपन के पानी से। फ़ैटलिकर और स्काउरिंग में भी वही हाल है। बायलर में ऐसे पानी से बहुत हानि होती है। १५०° श और ५५ पा० प्रति वर्ग इंच के

दबाव पर कैल्शियम सल्फ़ेट पानी में बिल्कुल नहीं घुलता। इससे प्लेटों पर इसकी बड़ी कड़ी पपड़ी जम जाती है, जिसको हथौड़े से ठोंककर उतारना पड़ता है। इसलिये बायलर में ऐसा पानी नहीं देना चाहिए। इस काम के लिये भारीपन को दूर करने के वास्ते कई मसाले हैं। इनको बायलर कम्पोज़िशन (Boiler Composition) कहते हैं। इनमें अधिकतर सोडा ही होता है।

पानी में गाद (Mud) का होना अच्छा नहीं। इसमें कीटाणु (Bacteria) आदि चेतन जीव (Organisms) होते हैं। जब खालें ऐसे पानी में भीगने को डाली जाती हैं तो वे सड़ने लगती हैं। गाद के साथ में लोहा भी होता है। गाद छानने से आसानी से नहीं छनती। इसको छानने में ख़र्चा बहुत पड़ जाता है।

लोहे से कुछ और हानि नहीं होती सिर्फ़ चमड़े की रंगत ख़राब हो जाती है। चूने में लोहे से कोई हानि नहीं होती पर बेट्स (Bates, चोकर) में इससे खालों पर धब्बे पड़ जाते हैं, जो पकाने के घोलों में जाने पर काले हो जाते हैं। रँगने के पानी में लोहा न होना चाहिए। घुली अवस्था में लोहा आयरन बाइकार्बोनेट (Iron bicarbonate) के रूप में होता है। उबालने पर यह आयरन हाइड्राक्साइड (Iron hydroxide) के रूप में तलछट होता है। यदि लोहा हो तो तलछट को अच्छी तरह बैठ जाने देना चाहिए क्योंकि यदि तलछट के रूप में यह पानी के साथ चला जाए तो यह लोहा पकाने के घोलों (Tanning liquors) के अम्ल से फिर घुल जाता है और घोल की रंगत बिगाड़ता है।

जिस पानी में छुट्टा (Free) कार्बन डाइआक्साइड होती है उस पानी से चूने में वही ख़राबी होती है जो अस्थायी भारीपन के पानी से : चूना कैल्शियम कार्बोनेट बन जाता है। अल्यूमिना (Alumina) कभी-कभी पानी में होता है। इसके होने से पकाने में कोई हानि नहीं होती।

सोडियम क्लोराइड (Sodium Chloride नमक) के होने से पतला और नर्म चमड़ा बनता है। यदि यह बहुत हो तो पकाने के पदार्थों में से पूरा टैनिन नहीं निकल पाता। जिस पानी में सोडा (सोडियम कार्बोनेट) होगा उससे हानि वही होती है जो अस्थायी भारीपन के पानी से। परंतु उस पानी में स्थायी भारीपन नहीं हो सकता। चूने में सोडा खालों को फुलाता है; पर पकाने के घोलों के अम्लों को जो पकाने के लिए ज़रूरी हैं शिथिल (Neutralise) कर देता है। पानी में और भी कितनी ही चीजें होती हैं, जिनको यहाँ लिखने की ज़रूरत नहीं क्योंकि वे इतनी हानि नहीं करतीं।

पानी को रसायनिक जाँच से उसमें की चीज़ों का पता लग जाता है। तथा उनकी मात्रा भी मालूम हो जाती है। भारीपन को प्रायः डिग्री में बताते हैं। १ लाख (१,००, ०००) हिस्से पानी में जितने हिस्से कैल्शियम कार्बोनेट हो, उतने ही को भारीपन की डिग्री कहते हैं। जैसे, अगर १,००,००० हिस्से पानी में कुल कैल्शियम और मैग्नीशियम बाइकार्बोनेट और सल्फेट ५० हिस्से कैल्शियम कार्बोनेट के बराबर हों, तो उस पानी को ५० डिग्री का भारी पानी कहते हैं। जिस पानी में एक डिग्री भारीपन हो उसके १००० सेर से २ छटाक साबुन ख़राब हो जाता है।

तीसरा अध्याय

खालों की उत्पत्ति, रक्षा तथा बनावट

(ORIGIN, CURING AND STRUCTURE OF HIDES)

जितनी खालें बाज़ार में आती हैं उनमें से ज्यादातर उन पशुओं की होती हैं, जो कि भोजन के लिये क़साई से मारे जाते हैं। इनको हलाली की (Butchered) कहते हैं। मरे हुए पशुओं की भी खालें आती हैं और उन्हें मुर्दार कहते हैं। शिकारियों द्वारा शिकार के पशुओं की खालें प्राप्त होती हैं, जैसे मगर, हिरन, नीलगाय, चीता, शेर, लोमड़ी आदि की; गो, साँप और मछली की खालें भी बहुधा मिल जाती हैं।

पशू पर से उतरने के बाद खाल इसी दशा में बहुत समय तक नहीं रह सकती। गर्मियों में कुछ घंटों में ही, और जाड़े में कुछ देर से, वे सड़ने लगती हैं। उनको इसी दशा में रखने व सड़ने से बचाने के लिये जो तरकीबें करते हैं, उन्हें रक्षा-विधान (Curing क्योरिंग) कहते हैं। रक्षा के लिये खालों पर नमक लगाते हैं, जो गीली नमक लगी बाज़ार में आती हैं उन्हें गीली नमकीन (Wet salted वेट साल्टेड) कहते हैं। और जो नमक लगाकर सुखा ली जाती हैं, उन्हें सूखी नमकीन (Dry salted ड्राई साल्टेड) कहते हैं। सुखाने से तोल घट जाती है और रेल आदि सवारी से भेजने में महसूल कम देना पड़ता है। इसीलिये रक्षा के

लिये नमक लगाकर और सुखाकर बेचते हैं। यू० पी० के बड़े-बड़े कारख़ानों में ज्यादातर गीली नमकीन खालों से ही चमड़ा बनाया जाता है। इनसे चमड़ा अच्छा बनता है।

खालें ज्यादातर तोल से बिकती हैं, पर भेड़ बकरी आदि की सैकड़े व कोड़ी के हिसाब से बिकती हैं। सूखी नमकीन, गीली नमकीन, आदि सबका भाव भिन्न-भिन्न होता है, खाल की नस्ल (Breed), छिलाई (Flaying फ्लेइंग), सफ़ाई, साइज़, तोल, लिंग (Sex सेक्स) आदि बातों का भी ख़याल दाम लगाते वक्त रखते हैं। कानपुर के बड़े-बड़े कारख़ानों में खालें चूने की तौल पर ली जाती हैं, अर्थात् खाल बेचनेवाला खालें कारख़ानें में भेज देता है; वहाँ उनको चमड़ा बनाने के प्रयोग में डाल देते हैं—भिगोते व चूने में देते हैं। जब वे चूने में तैयार हो जाती हैं, बाल निकल जाते हैं, और छिलाई (Fleshing) हो जाती है, तब उनको छाँटते हैं। हल्की, भारी, नंबर एक की, नंबर दो की, अलग-अलग करते हैं और तौलते हैं। इस तौल पर छँटाई (Sorting) के अनुसार दाम मिलते हैं। बेचनेवाले से इस तरह ठेका होता है कि इस-इस तरह की इस दाम की होंगी। जो बिल्कुल साफ़ बिना कटी हों, जिसमें छेद, ढील, दाग़, निशान (Brands), मीरू न हो, पहले नंबर की होती है। ख़राब वापस हो जाती हैं, ठेकेदार उनको कहीं और ले जाकर पकवाता है।

खाल पर नमक लगाने की सब से अच्छी विधि, जिससे नमक सारे में लग जाता है कोई जगह नहीं बचती और पूरा-पूरा असर हो जाता है, वह है जो शिकागो (Chicago) के गुदामों में प्रयोग होती है। वहाँ का तरीक़ा यह है:—पशु पर से उतरने के बाद खालें जब ठंडी हो जाती हैं, उनको फैलाकर बाल नीचे की तरफ़ कर बड़े-बड़े हौदों में इस तरह डालते हैं कि जिससे वे १५ या २० फुट लंबी और उतनी ही चौड़ी

जगह घेर लें। फिर नमक छिड़ककर इस चौकोर के किनारे अंदर को मोड़कर ऊँचे कर देते हैं, जिससे नमक का घोल बह न जाय बल्कि खालों में पुर जाय। जैसे २ खालों की तह डाली जाती है उनके ऊपर तौल पर २५ फ़ी सदी नमक एक नमक डालनेवाला फावड़े से छिड़कता जाता है। बनाया हुआ नमक काम में लाया जाता है, क्योंकि सेंधे नमक में, जो ज्यादातर काम में आता है, लोहा और कैल्शियम सल्फेट (Calcium Sulphate) होता है। इससे खाल पर धब्बे पड़ जाते हैं। इन्हीं धब्बों को नमक के धब्बे (साल्ट स्टेन्स Salt Stains) कहते हैं। जब हौदे में ढेर इतना ऊँचा हो जाता है कि उससे ऊपर नमक फेंकनेवाला नमक नहीं फेंक सकता, तो उसको बराबर-कर नमक की तह से ढक देते हैं। इस दशा में सामान दो हफ़्ते या और अधिक पड़ा रहता है, जब तक कि खालें नमक के घोल से आर पार न पुर जायँ। इसके बाद खालों को इस तरह निकाला जाता है कि साथ-ही-साथ उनकी तह हो जाती है और छुट्टा नमक हौदे ही में गिर जाता है। यह नमक नए नमक के साथ मिलाकर दूसरी गठरी पर काम में लाया जाता है। पर यह दो-तीन बार से अधिक काम में न लाना चाहिए, क्योंकि उसमें कीटाणु (बैक्टीरिया Bacteria) पैदा हो जाते हैं जो हानि करते हैं।

अशुद्ध नमक के प्रयोग से दो बुराइयाँ आ जाती हैं।—(१) उसमें जो लोहा होता है वह चमड़े में घुस जाता है; धोने चूने आदि में फिर वह नहीं निकलता। इसी के कारण वनस्पति पदार्थ से पकाने के प्रयोग में खाल पर नीले-नीले धब्बे पड़ जाते हैं; यही आयरन स्टेन्स (Iron Stains) हैं। (२) साल्ट स्टेन्स पड़ जाते हैं; इनके बारे में ऊपर लिख ही चुके हैं। यह भी आगे के मसालों में साफ़ नहीं होते और तैयार चमड़े में बने रहते हैं। इनमें भी लोहा होता है। यह किस कारण हो

जाते हैं, ठीक पता नहीं। कुछ भी हो, लोगों का ख़याल है कि खाल पर का ख़ून बिना भली प्रकार धोए नमक लगाने से ऐसा हो जाता है। ख़ून में भी लोहे का अंश होता ही है; इसलिये यह सब चीज़ें नमक लगाने से पहले धो डालनी चाहिए।

जब कि खालें बहुत दूर भेजनी होती हैं, नमक और पानी का भी वज़न घटाने के लिये उनको केवल सुखा लेते हैं। जब तक उनको पानी नहीं लगता या नमी नहीं लगती तब तक वे इस दशा में भली प्रकार बहुत दिन तक रह सकती हैं। पानी लगने से कीटाणु पैदा हो जाते हैं और ख़राब कर देते हैं। इन खालों को सूखी (ड्राइड Dried) या फ़्रेम्ड (Framed) हाईड कहते हैं। ऐसी खालों के कीड़ों द्वारा नष्ट होने की बहुत सम्भावना रहती है। इसलिये सुखाने से पहले इनको संखिया (आरसेनिक Arsenic) के घोल में डुबो लेते हैं। सूखी खालों का इतना अच्छा चमड़ा नहीं बनता जितना नमकीन का, क्योंकि इनमें अक्सर ख़राबियाँ हो जाती हैं। कारण यह है कि चाहे कितनी अच्छी प्रकार भी सुखाएँ उनको भिगोकर नर्म करने में उनका कुछ-न-कुछ हिस्सा जिलैटीन (Gelatin) बनकर निकल ही जाता है। यदि साए में जल्दी सुखा ली जाएँ, तो ठीक है; परंतु यदि धीरे-धीरे या धूप में सुखाई जाएँ तो ख़राबी बहुत बढ़ जाती है। इतने समय में कीटाणु अपना काम किए जाते हैं। धूप के कारण ऊपर का हिस्सा जल्दी सूखकर पपड़ी बन जाता है; अंदर का हिस्सा फिर सूखने नहीं पाता, वहाँ पर कीटाणु पैदा होकर उसको खाते हैं। ऊपर से देखने में किसी बुराई का पता नहीं चलता, पर भिगोने पर कुछ पता चलता है। जिनमें यह बात बहुत बढ़ जाती है, उनमें बाल की तह नीचे के हिस्से से अलग हो जाती है और उसमें छेद हो जाते हैं। दूसरे नमी के होते धूप की गर्मी से खाल का कुछ हिस्सा सरेस बन जाता है, जो भिगोने में व चूने में घुलकर निकल जाता है।

भारत में किसी-किसी जगह खारी मिट्टी को घोलकर गोश्त की तरफ़ खालों पर लगाकर खालों को सुखा लेते हैं। इन्हें मिट्टी से रक्षित (Earth-cured or plastered) या खारीलगी कहते हैं। इस मिट्टी में सोडियम सल्फ़ेट (Sodium Sulphate) और सोडियम कार्बोनेट (Sodium Carbonate) होता है।

खालों की परख भी टेढ़ा काम है। चूने के बाद तो बहुत-सी बुराइयाँ साफ़ झलक आती हैं और बुरी भली खाल पहचानना आसान हो जाता है, पर रक्षित दशा (कच्ची खाल) में बुराइयों को पहचानना कठिन है। करते २ अटकल आती है। खालों में जो बुराइयाँ होती हैं वे ये हैं:—(१) छेद जो खाल को पशु पर से उतारने में क़साई से हो जाते हैं। (२) गढ़े (Cuts) जो खाल में छुरी के घुस जाने से कटे हुए के निशान होते हैं। इस हालत में गो आर पार न कटी हों पर उसमें से एक सी मोटाई का चमड़ा नहीं बन सकता। यदि क़साई इन दो बातों में काम ठीक कर दें तो दाम अच्छे मिल सकते हैं। (३) कोड़े के निशान। कोड़े मारने से जहाँ जहाँ निशान पड़ जाते हैं, वहाँ का दाना साफ़ नहीं आता। (४) पहचान के निशान—ब्रैन्डस (Brands)। (५) छिले के निशान (Scratches) जो पेड़ों के काँटों से या नोकीले बाड़े से या आपस में लड़ने से खाल पर पड़ जाते हैं। (६) खालों में सूराख़ जो कीड़ों के कारण हो जाएँ। जैसे, बकरी में मीरू से व भेड़ी में टिक्स (Ticks) आदि से। बीमारी, उम्र, नस्ल, व लिङ्ग (Sex) आदि का भी पशुओं की खाल पर बहुत कुछ असर होता है। बीमारी से खाल पतली हो जाती है, बूढ़े पशु की खाल ढीली होती है। हर नस्ल के पशु की खाल एक सी नहीं होती। गाय की खाल पतली और साफ़ (Fine) होती है, सांड (Bull) की ढीली पीठ पर पतली बहुत खुरदरी और पेट पर व सिर पर मोटी होती है। बैल (Ox)

की पीठ पर, ख़ासकर गुर्दे के ऊपर, मोटी, पेट पर व सिर पर पतली होती है। यूरोप के बैलों की खाल इतनी काफ़ी मोटी होती है कि वहाँ यह तले का चमड़ा बनाने में प्रयोग होती है। जंगली पशुओं की खाल पालतुओं की खाल की अपेक्षा मोटी होती है, क्योंकि वायुमंडल के ताप आदि से उनकी रक्षा का एकमात्र साधन यही है। जो पशु दूध व गोश्त के लिये पाले जाते हैं, उनकी खाल पतली, बड़ी और बारीक दाने की (Fine) होती है। जो भेड़ें बड़ी खाल के व बारीक लम्बे ऊन के लिये पाली जाती हैं, उनकी खाल की बनावट में भी बहुत अंतर पड़ जाता है। पशुओं को भी कितने ही रोग हो जाते हैं जिनके कारण उनकी खाल ख़राब हो जाती है। सैमूर जोन्स (Seymour Jones) ने अंग्रेजी में "भेड़ी और उसकी खाल" (Sheep and its Skin) नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें आपने भेड़ की बीमारियों का तथा उनका खाल पर जो असर पड़ता है उसका सविस्तार वर्णन किया है।

खाल की बनावट

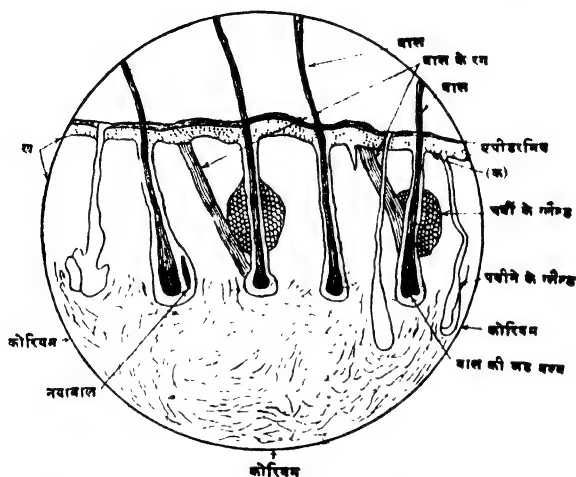
मामूली तौर से देखने में तो यह मालूम होता है, कि भिन्न २ जाति के पशुओं की खाल की बनावट में कुछ एकता नहीं है, पर जन्तु-विज्ञान-वेत्ताओं (Zoologists) ने मालूम किया है कि उन सब पशुओं की जो अपने बच्चों को स्तन से दूध पिलाते हैं (Mammals) खाल में हिस्से एक से ही हैं, अंतर इतना ही है कि हर एक में उसकी जरूरत के हिसाब से कोई हिस्सा कम कोई अधिक है, कोई मोटी है कोई पतली। इन्हीं बातों पर उनका इस्तेमाल भी भिन्न २ है, जैसा पहले बता चुके हैं। गोह, मगर, मछली, साँप आदि की खाल में भी हिस्से वेही हैं जो गाय की में, अंतर इतना ही है कि इनकी एपीडरमिस (Epidermis) बहुत कठोर हो गई है ; उसके छिलके (Scales) बन गए हैं और रेशे (Fibres) तिरछे बिरछे हो गये हैं।

पशु पर रहते, खाल पशु के गोश्त और हड्डी को ढकन ही नहीं है बल्कि स्पर्श, साँस व सफ़ाई के इंद्रियों की गोलक भी है। इसी कारण इसकी बनावट में चक्कर है। खाल में मुख्यतया दो हिस्से होते हैं; एक एपीडरमिस (Epidermis), दूसरा कोरियम (Corium)।

एपीडरमिस कोरियम की अपेक्षा बहुत ही पतली होती है। इसकी मोटाई १/५०० इंच के लगभग है। बाल उतारने के प्रयोग में यह बिल्कुल निकल जाती है, और इसके साथ ही पसीने के ग्लेन्डस (Sweat glands), तेल के ग्लेन्डस (Sebacious glands) भी निकल जाते हैं। ये सब एपीडरमिस से ही बनते हैं। नाख़ून, सींग, खुर भी एपीडरमिस से ही बनते हैं। चूने में एपीडरमिस और उससे बने पदार्थ घुलनशील हैं, कोरियम के नहीं घुलते। अतः वे सब ढीले पड़ जाते हैं और छुरे से निकल जाते हैं। चमड़ा केवल कोरियम का ही बनता है। खाल की इस बनावट को देखने के लिये, खाल का छोटा सा टुकड़ा धो साफ़कर मद्यसार (Alcohol) में कड़ा करते हैं। मोम में जमाकर उसके क़तले काटनेवाली मशीन (माईक्रोटोम Microtome) से पतले २ कतले (Sections) काटते हैं। इन कतलों को काँच की पट्टी (Slide) पर जमा देते हैं और फिर अणुवीक्षण यंत्र (माइक्रासकोप Microscope) द्वारा देखते हैं। इस यंत्र के साथ कई लेन्स (Lens) होते हैं, जिनकी बढ़ाने की शक्ति (Magnifying power) भिन्न २ होती है, इस यंत्र में देखने पर क़तले बड़े २ दिखाई देते हैं; व उसका हर एक हिस्सा भली प्रकार देखा जा सकता है। जितना बढ़ाकर देखना हो या जिस हिस्से को बहुत बारीकी से देखना हो, उसके लिये उतना ही बढ़ानेवाला लेन्स लगाते हैं।

चित्र १ में खाल के एक क़तले का इस प्रकार यंत्र द्वारा बढ़ाकर देखा हुआ चित्र है। किनारेवाला पतला हिस्सा ही एपीडरमिस कहलाता है।

यही खाल का बाहिरी हिस्सा है। इसके अन्दरवाला बड़ा हिस्सा ही



चित्र २ (Section of Skin खाल के क़तले का चित्र)

कोरियम है। जरा और बढ़ाकर देखने से मालूम होता है कि एपीडरमिस में दो भाग हैं। ऊपर के हिस्से में पतले चपटे-चपटे छिल्के से सेल (Cell) हैं व नीचे की तरफ़ गोल जीते सेल हैं। एपीडरमिस में .खून की नलिएँ (Blood vessels) नर्वतन्तु (Nerve fibres) व रेशे (Tissue fibres) नहीं हैं। इसमें से बाल और कुछ नलिएँ बाहर को जाती दिखाई देती हैं, यह सतह पर खुलती हैं।

कोरियम ख़ासकर रेशों का बना है। सफ़ेद जोड़नेवाले रेशे (White connective tissue fibres) रेशों व बंडलों के रूप में गुथे हुए से पड़े हैं। जिस पदार्थ में रेशे जमे हैं उसे सीमेंट पदार्थ (Cement substance) कहते हैं। कोरियम में एपीडरमिस के नीचे रेशों के बंडलों की अपेक्षा रेशे ही हैं, जिससे

इस हिस्से में सुदृढ़ता, घनावट और सफ़ाई मालूम होती है। इन रेशों के सिवा कोरियम में एक और प्रकार के रेशों का भी जाल फैला हुआ है, जिन्हें पीले लचलचे रेशे (Yellow elastic fibres) कहते हैं। ये कोरियम में बहुतायत से नहीं पाये जाते। कोरियम में ख़ून की नलिएँ (blood vessels), नर्वतंतु (Nerve fibres), व लिम्फ़ की नलिएँ (Lymphatic vessels), और एपीडरमिस से बने हुए पदार्थ—बाल (Hair), चर्बीवाले ग्लैंडस (Sebacious Glands) और पसीनेवाले (Sudoriferous Glands) ग्लैंडस होते हैं। बाल आदि की उत्पत्ति देखने से पता चलता है कि ये तीनों तथा नख, स्केल्स (Scales) आदि एपीडरमिस के पदार्थ से पैदा होते हैं गो वे कोरियम के अंदर दिखाई देते हैं। बाल एपीडरमिस में होकर बदन की सतह पर आ जाते हैं। ये ग्लैन्डस अपना २ पदार्थ नलियों द्वारा जो एपीडरमिस में होकर सतह पर निकलती हैं बाहर छोड़ते हैं।

बाल कढ़ाई में खाल में बाल जो रह जाते हैं इसका सबब यह है कि एक तो छोटे २ बाल छोटे होने के कारण पकड़ में नहीं आते, दूसरे गड़े अधिक दूरी पर होते हैं। बाल के अंदर का रेशेदार हिस्सा ही बाल का मुख्य हिस्सा है। यह लम्बे २ सेलों का बना होता है, जिनमें बाल का रंग रहता है। सफ़ेद बालों के इन सेलों में केवल हवा भरी रहती है। काले बालों में बाल में और उसकी खोली में भी रंग होता है। बालों के चूने से निकल जाने पर जो रंग खाल पर कभी २ दिखाई देता है, वह खोली के वहाँ ही रह जाने के कारण है। चोकर में छुरी लगाने पर यह निकल जाता है।

हर बाल के पास उसकी जड़ से एपीडरमिस तक एक रग इरेक्टर मस्ल (Erector muscle) नामी होता है। इसके और बाल के बीच में चर्बीवाले ग्लैन्डस होते हैं, जो अपना मोम सा तेल बाल की खोली में

होकर सतह पर छोड़ते हैं। इससे बाल चिकना रहता है। चूने से यह ग्लैंडस टूट जाते हैं; तथा बाल निकालते समय गाढ़े मसाले के रूप में जो पदार्थ निकलता है वह ये ही हैं। भेड़ की खाल में यह इतने अधिक होते हैं, कि इनके निकल जाने से वह जगह खोखली हो जाती है और इसी तरह से खाल दो पर्तों में चीरी जा सकती है। इनके सिवाय कोरियम के मध्य भाग में पसीनेवाले ग्लैंडस हैं, जिनका बना पदार्थ-पसीना पतली नलियों द्वारा सतह पर आता है।

कोरियम और एपीडरमिस के बीच में एक इतना पतला भाग है कि बहुत से उसकी सत्ता ही नहीं मानते, यह अलग नहीं हो सकता। चर्म्मकार को तमाम हिस्सों से जरूरी हिस्सा यह है। इसको हयालीन (Hyaline) कहते हैं। चूने से एपीडरमिस के हट जाने के पश्चात् यह सतह बहुत साफ़ निकल आती है। यदि यह कहीं पर से छिल जाय तो नीचे का हिस्सा खुरदरा भद्दा सा दिखाई देता है। पकाने व रँगने में जहाँ यह ठीक है, रंगत साफ़ आती है। घोटा फेरने में चमक केवल इसी पर आती है, इस कारण इसका साफ़ बनाना बड़ा जरूरी है। इसको बोलचाल में प्रायः दाना कहते हैं। दाने से अक्सर दाने की सतह व दाने के नक़्शे (Pattern of the grain) से मतलब होता है। यथा दाना साफ़ है (सतह); मगर का दाना है अर्थात् दाने का नक़्शा मगर की खाल के दाने का-सा है। हर जाति के पशु की खाल के दाने को देखने से पता चलेगा कि वह दूसरे पशुओं की खाल के दाने से भिन्न है। इसी को दाने का नक़्शा कहते हैं। इससे यह पहचाना जाता है कि कोई चमड़ा किस जाति के पशु की खाल से बना है। बहुधा एक पशु की खाल के चमड़े पर दूसरे की खाल का-सा दाना बना देते हैं। जैसे, गाय की खाल पर मगर का दाना। इसे बनावटी दाना (इमीटेशन ग्रेन Imitation grain) कहते हैं। चमड़े को भिगो के खैंचकर हाथ के लेन्स से देखने से पता

चलता है कि असली दाना किसका सा है अर्थात् यह चमड़ा किस पशु की खाल से बना है।

कोरियम को पशु के शरीर से जो हिस्सा जोड़े रहता है, जो कोरियम का नीचे का हिस्सा है, एरियोलरटिशू (Areolar tissue) कहलाता है। छिलाई में इसे कोरियम से अलग कर देते हैं। चमड़ा बनाने में खाल का जो हिस्सा काम आता है वह कोरियम है। दाना इसी का ऊपरी हिस्सा है।

खाल की रसायनिक बनावट
(Chemical Composition)

गर्मी, सर्दी, जल, अम्ल (एसिड acid), खार (एल्कैली alkali) आदि का जो असर किसी वस्तु पर होता है, उसे उसका रसायनिक गुण (Chemical properties) कहते हैं। खाल में जितने ही हिस्से हैं, वैसे ही उनके रसायनिक गुण भी भिन्न २ हैं। ये गुण उन सम्मेलनों के ऊपर निर्भर हैं जिनसे वे (हिस्से) बने हैं। कार्बन (Carbon), हाइड्रोजन (Hydrogen), आक्सीजन (Oxygen), और नाइट्रोजन (Nitrogen) से एक सम्मिलित पदार्थ (Compound) बनते हैं, जिन्हें प्रोटीड (Proteid) कहते हैं। सरेस, अंडे की सफ़ेदी आदि प्रोटीड हैं। यह नाइट्रोजन युक्त चेतन सम्मेलन (Organic compounds) कॉलायड (Colloid) दशा में रहते हैं—अर्थात् घोलक में यह न तो तलछट होते हैं और न साफ़ घोल बनाते हैं—बीच की दशा में रहते हैं। नमक को पानी में घोलने से नमक का साफ़ घोल तैयार होता है, पर इनका घोल दूध का सा रहता है। अभिद्रवी पृथक्ता (हाइड्रालिसिस hydrolysis) होने पर इनके अमाइनो एसिड (Amino Acid) बनते हैं। यह दुभेदिये (Amphoteric) होते हैं—अर्थात् खार के साथ अम्ल का सा व अम्ल के साथ खार का सा बर्ताव करते हैं। प्रोटीड कितने ही प्रकार के होते हैं। खाल भिन्न २ प्रकार के प्रोटीडों (Proteids) की ही बनी है।

एपीडरमिस और उससे बने हुए पदार्थ किरेटीन (Keratin) नामी प्रोटीड के बने हैं। कोरियम अर्थात् सफ़ेद जोड़नेवाला तंतु और उसके रेशे कोलेजिन नामक प्रोटीड के बने हैं। किरेटीन पानी में नहीं घुलती है, कुछ नर्म अवश्य हो जाती है; खौलते पानी में भी नहीं घुलती। पानी के साथ १६०° श. पर बहुत देर में यह छोटे २ टुकड़ों में (जो बनावट में इससे छोटे हैं और जिनसे मिल कर यह बनी है) बदल कर घुल जाती है। साथ ही इसमें से सल्फ़्यूरेटेड हाइड्रोजिन (Sulphuretted Hydrogen) नामक गैस (Gas) निकलती है। किरेटीन से बने नर्म पदार्थ खार (alkali) से जल्दी अभिद्रवी पृथक् (हाइड्रोलाइज Hydrolyse) हो जाते हैं; पर कठोर पदार्थ जैसे बाल सींग आदि को अधिक खार का पानी और गर्मी चाहिए। सोडियम सल्फ़ाइड (Sodium Sulphide) से कठोर किरेटीन तक आसानी से घुल जाते हैं। चूना भी खार है। १०,००० हिस्से पानी में केवल १४ हिस्सा चूना घुल सकता है। चूने के इतने ही हल्के खार से एपीडरमिस कुछ दिनों में ढीली हो जाती है, यहाँ तक कि हाथ से हटाई जा सकती है। यदि इस घोल में थोड़ा सा सोडियम सल्फ़ाइड दे दें तो यह काम अति शीघ्रता से पूरा हो जाता है, यहाँ तक कि तेज़ घोल से बाल आदि हलुआ हो जाते हैं। किरेटीन में गंधक बहुत होती है। यदि किरेटीन के खार के घोल में अम्ल या टैनिन (Tannin) डाल दिया जाय तो यह प्रोटीड तलछट हो जाते हैं।

कोलेजिन (Collagen) पानी में बिल्कुल नहीं घुलती, चाहे जितनी गर्मी या दबाव (Pressure) दिया जाय। ठंडे, हल्के, अम्ल व खार तक में यह नहीं घुलती; सिर्फ़ फूल जाती है, जैसे सरेस पानी में फूल जाता है। सरेस और कोलेजिन बहुत हद तक एक से हैं। कोलेजिन में पानी मिलने से सरेस हो जाता है, दोनों में केवल एक अणु (Molecule)

पानी का अन्तर है। सरेस को यदि १००° श. से ऊपर गर्म किया जाय, तो एक न घुलनेवाला पदार्थ बनता है, जो कोलेजिन से मिलता-जुलता है; इसमें रेशे नहीं होते। यदि खार व अम्ल बली (Strong) हों, या गर्म किए जाएँ, या कीटाणु हों तभी कोलेजिन घुल सकता है। मद्यसार (Alcohol) से यह कठोर हो जाता है। जब यह धीमे (Weak) अम्ल व खार में फूलती है तो उस खार व अम्ल को दूर करने पर यह फिर पहिली दशा में पहुँच जाती है। खाल को (अर्थात् कोलेजिन) बहुत काल (कभी घंटों, कभी दिनों) तक उबालने से, इसका सरेस बन जाता है। अभिद्रवी पृथक्ता (Hydrolysis) होने पर एमाइनो अम्ल (Amino Acid) नामी छोटे २ अम्ल बनते हैं।

पीले लचलचे रेशे इलासटीन (Elastin) नामी प्रोटीड के बने हैं, यह भी खौलते हुए पानी में नहीं घुलती। गर्म अम्ल व खार में धीरे २ घुलती है, यह टैनिन में नहीं मिलती। चोकर में व ट्रिप्सिन जामुन (Trypsin Enzyme) से घुल जाती है।

इनके अतिरिक्त खाल में म्यूसिन (Mucin) और अल्ब्यूमिन (Albumin) नामक प्रोटीड और होती हैं। म्यूसिन खार के हल्के घोल में आसानी से घुल जाती है। अर्थात् खाल को चूने में देने से म्यूसिन खाल में से घुलकर निकल जाती है। म्यूसिनवाले खारी घोल में अम्ल देने से म्यूसिन तलछट हो जाती है।

अल्ब्यूमिन (Albumin) पानी में, नमक के हल्के घोल में, अम्लों में और खारों में घुलनशील है। यह आसानी से जम जाते हैं (Coagulate)। गर्मी से जमा हुआ अल्ब्यूमिन किरेटीन से मिलता-जुलता है; क्योंकि इस दशा में यह बिना अम्ल व खार से पृथक् हुए (Without hydrolysis) बिल्कुल अनघुलन है। अंडे की सफ़ेदी अल्ब्यूमिन ही है; इसे अंडे की अल्ब्यूमिन कहते हैं। खून में भी अल्ब्यूमिन

होती है। अंडे की सफ़ेदी हल्का सा खारी द्रव है जिसमें १/८ हिस्सा ठोस पदार्थ और ७/८ हिस्सा जल है। प्रोटीड झिल्लियों में रहती है जो कि मथने से टूट जाती हैं। अल्ब्यूमिन को घोलने में पानी को इतना गर्म न करना चाहिए कि यह जम जाय। ७०° श. से ऊपर गर्म करने से ऐसा होता है। अल्ब्यूमिन के साथ ग्लोब्यूलिन (Globulin) नामक प्रोटीड भी थोड़ी बहुत होती है।

चौथा अध्याय

भिगोना (SOAKING)

पहिले कह चुके हैं कि चर्म्मकार के पास खालें या तो ताज़ी (क़साई के से), या गीली नमकीन, या सूखी नमकीन, या सूखी दशा में आती हैं। उसका पहिला काम यह होता है कि उन पर का ख़ून, धूल, गोबर, नमक या और जो कुछ रक्षा हेतु लगा हो उसे धोए और उनको ऐसा नर्म कर दे जैसी कि वे पशु के ऊपर थीं। यह फल वह उन्हें पानी में भिगो कर सिद्ध करता है। इसे भिगोना कहते हैं। इन सब तरह की खालों को एक सी ही रीति से नहीं भिगोया जा सकता। हर एक के साथ उचित परिवर्तन करना होता है।

ताज़ी खालें :—इनके लिए सिर्फ़ ख़ून, धूल, लिम्फ (Lymph), गोबर आदि जो इन पर लगा हो उसे दूर कर साफ़ कर डालना काफ़ी होता है, क्योंकि यह सब सड़ा देनेवाली वस्तुएँ हैं। दूसरे, ख़ून में लोहे का अंश होता है जिससे रँगने में कठिनता पड़ती है। इसलिए इन खालों को चंद घंटे पानी में भिगो देते हैं ; ठंडा पानी अच्छा होता है क्योंकि यह सड़न (Putrefaction) को रोकता है। १०° श. से अधिक गर्म न होना चाहिए, परंतु भारत में प्रायः जल का ताप इससे कहीं अधिक होता है ; गर्मियों में जाड़ों की अपेक्षा अधिक गर्म होता है, ३०° श. से भी अधिक गर्म हो जाता है। इससे हानि अवश्य होती है। पर इतनी थोड़ी

कि जिस ताप पर प्राकृतिक पानी में मिलता है वैसा ही उसे प्रयोग करते हैं। जल ताजा और साफ़ होना चाहिए ; उसमें सड़ानेवाले कीटाणु होने से खाल के ख़राब हो जाने—सूराख़ हो जाने, दाने पर गढ़े हो जाना या कमज़ोर चमड़ा बनने का डर रहता है। यदि जल में ऐसे पदार्थ हों या खाल सड़ी हुई दशा में प्राप्त हो तो उस जल को कार्बोलिक एसिड (Carbolic Acid) या क्योलिन (Creolin) आदि से कीटाणु रहित (Sterilise) कर लेना चाहिए। ऐसे ख़राब पानी में जितना कम समय हो सके उतना कम समय भिगोना चाहिए। चमड़ा बनाने की इन विधियों में खालें सड़ने न पाएँ इस पर ख़ूब ध्यान रखना चाहिए। इस जगह पर जो ख़राबी पैदा हो जाती है उसका पता तत्काल नहीं चलता; चमड़ा बनकर तैयार होने पर उसका पता लगता है, तब उसको सुधारने की कोई तरकीब नहीं रहती। यदि पानी ठीक न हो या थोड़ा हो, या बहुत ही सड़ी खालें हों तो उसे भिगोने की कोई ऐसी आवश्यकता नहीं। वह सीधी पुराने चूने में डाली जा सकती हैं। यदि आरम्भ में ही बालों को छूने से वे उतरते हों तो साफ़ है कि सड़न (Putrefaction) उस जगह पर शुरू हो गई है। इस बाल उतरने को बाल ठसकना (Hairslip) कहते हैं।

नमकीन खालें:—गीली नमकीन खालों को भी कुछ अधिक भिगोने की आवश्यकता नहीं, केवल एक दिन भिगोना काफ़ी होता है; गो अमरीका में कोई २ तीन चार दिन तक भिगोते हैं और प्रति दिन नए पानी में रखते हैं। फिर धोने के पहिए (Wash wheel) में धोते हैं। गीली नमकीन खालों के लिए अधिक कड़े प्रयोग की आवश्यकता नहीं है। यहाँ पर मतलब यह है, कि नमक खाल पर से बिल्कुल धुल जाय, क्योंकि चूने में यह फूलन को रोकता है। धोवन (Washings) के पानी को जाँचने से पता चल जाता है कि उसमें नमक है या नहीं। नमक रहते हुए, उस

जल में चाँदी के नाइट्रेट का घोल (Solution of Silver Nitrate $AgNO_3$) देने से सफ़ेद तलछट बनता है। जब यह सफ़ेद तलछट न बने तो समझना चाहिए कि नमक नहीं है। खाल के रेशे जो नमक के कारण सिकुड़ जाते व सूख जाते हैं वे अब फिर फूल कर पहिली दशा में आ जाते हैं। यदि खालें चूने में बिना फूले जायँ, तो वे फिर न फूलती हैं, न नर्म होती हैं और जो सिमटनें पड़ जाती हैं वे किसी प्रयोग से दूर नहीं होतीं। नमकीन खालों को अधिक देर पानी में डाले रहने से कोई डर नहीं, क्योंकि उनमें सड़न होने का इतना डर नहीं है जितना ताज़ा में है।

सूखी और सूखी नमकीन खालों को भिगोने के लिए समय भी अधिक चाहिए और साथ ही मसाले आदि भी प्रयोग करने पड़ते हैं, जो उनकी मोटाई व सूखने की विधि पर निर्भर हैं। यदि अधिक ताप पर (At high temperature) पतली से पतली खाल भी सुखाई जायँ तो उसे भी भीगने में बहुत समय लगता है, पर हल्की गर्मी पर सुखाने से भिगोने में कम समय लगता है। ऐसी खालें आर पार भीग तो फ़ौरन् जाती हैं, और लचलची भी हो जाती हैं, पर भीगने का यही मतलब नहीं है, वे फूलनी चाहिए। अतः उनको अधिक देर भिगोना पड़ता है, जिसमें सड़ जाने का डर रहता है। ऐसी खालें प्रायः सूखने में ख़राब हो जाती हैं, जिससे वे ठीक नहीं भीग पातीं। ऐसी दशा में इनको भिगोने के बहुत-से तरीक़े काम में लाये गये हैं। पर अच्छा वही है जिससे कि रेशे कमज़ोर न हों और खाल का जोड़नेवाला मसाला (Cement substance) व रेशे का मसाला कम घुले तथा उसका दाना किसी प्रकार ख़राब न होने पावे। सूखी खालों (Flints) के लिए यह बड़ा मुश्किल काम है। उनमें का अल्व्यूमिन (Albumin) तो पहिले ही सूखने में जम जाता है व घुलनशील नहीं रहता। इनको भिगोने में जो भिन्न २ तरीक़े काम में आते हैं वे ये हैं:—

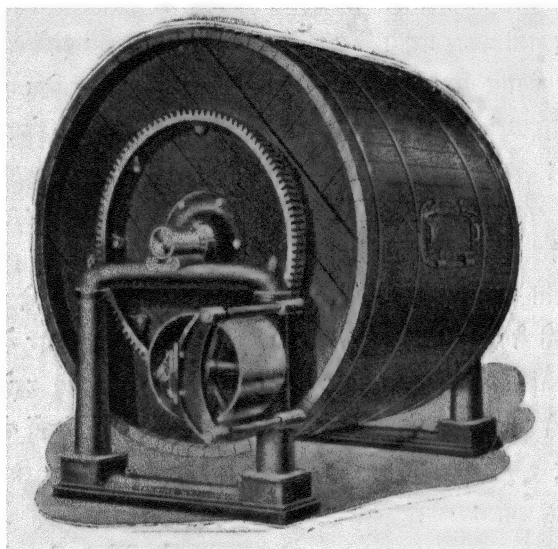
(१) भारत में अब भी (देसी चमारों के यहाँ) और यूरोप में पहिले, ख़ासकर ई० आई० किप्स (भारत से जो गौ की खालें खारी मिट्टी लगाकर सुखा के भेजी जाती थीं उन्हें ई० आई० किप्स E. I. Kips कहते हैं) को सड़ते हुए भिगोने के पानी में डालकर भिगोते थे। यह सड़ना (Putrefaction) कठोर हुए मज्जा-तन्तुओं को सड़ाकर घुला देता तथा नर्म कर देता है। इसमें बहु प्रकार के सड़ानेवाले कीटाणु पैदा हो जाते हैं, जिनके कारण वे चन्द घंटों में ही सूखी से सूखी खाल को भिगो लेते हैं।

सड़न कीटाणुओं से होती है जो जीते जागते जन्तु हैं। यह कितने ही प्रकार के होते हैं। हर प्रकार के कीटाणु के काम करने की विधि व उससे असर होनेवाले पदार्थ भिन्न २ होते हैं। अभी तक यह विदित नहीं कि कौन २ से कीटाणु इस सड़न में अच्छे कामवाले हैं। यदि यह मालूम हो जाये, तो मुमकिन है कि उसके पैदा होने का सामान किया जाय, जिससे औरों के बजाय वही पैदा हों और चमड़ा अच्छा बने। सड़न से भिगोने की विधि बहुत ही ख़तरनाक है, क्योंकि वायु के गर्म व सर्द होते ही सड़ानेवाले कीटाणुओं में भेद हो जाता है, जिस कारण सदैव एकसा चमड़ा नहीं बन पाता और न एक खाल पर सारे में एकसा असर हो पाता है; किसी जगह कम किसी जगह अधिक या आशा से अधिक असर हो जाता है। रक्षा के प्रयोगों में भी गर्मी तथा सड़न से कुछ-न-कुछ ख़राबी हो ही जाती है, जोकि पुराने सड़ते पानी में और बढ़ जाती है। अतः जब इस विधि को प्रयोग करना हो तो बहुत होशियारी व देखभाल रखनी चाहिए; ज्योंही खालें काफ़ी नर्म हो जायँ, उनको फ़ौरन् निकाल लेना चाहिए, सड़ने से वे नर्म ही नहीं होतीं बल्कि खोखली भी हो जाती हैं। जिन खालों के ड्रेसिंग लैदर्स (Dressing leathers पतले और मुलायम चमड़े) बनाने हों, उनके

लिये यह विधि इतनी हानिकारक नहीं होती, क्योंकि इसमें तो यह आवश्यक है, कि कुछ जोड़नेवाला पदार्थ घुल जाय और ये नर्म हो जायँ ; वर्ना यह प्रयोजन चूने और चोकर से सिद्ध करना पड़ता है। इससे यह प्रयोजन नहीं कि इनके लिये सड़न का आश्रय लिया जाय ; सड़न तो सदैव हानिकर है। आजकल जब बहुत भिगोना होता है तो या तो रसायनें (Chemicals) प्रयोग करते हैं व इतने पुराने पानी के बजाय ताज़ा पानी प्रयोग करते हैं और उसे प्रतिदिन बदल देते हैं। कभी २ फिर भी, चाहे गर्मी के कारण या खाल में कुछ ख़राबी होने से, इतनी देर में ही ताज़े पानी में खाल सड़ने लगती हैं।

(२) दूसरी विधि—कुछ दिन ठंडे पानी में भिगोकर, फिर ४०° श. के गर्म पानी में ढोल (Drum चित्र ३) में चला देने से प्रयोजन शीघ्र सिद्ध होता है। ढोल की शक्ल चित्र से प्रकट ही है। इसको घुमाने की कई विधिएँ हैं। किसी में बैल्ट से चलता है, किसी में दाँतोंदार पहिए से। बड़ा ढोल ८ फुट व्यास व ३ फुट चौड़ा होता है। छोटे भी होते हैं, गो शक्ल एकसी ही होती है पर आवश्यकतानुसार उनकी नाप आदि में भिन्नता होती है। यथा धोने का पहिया जिसमें गोल सिरे पर छेद होते हैं ; लंबा झिर्रीदार जिसमें सिरे पर पट्टी और झिर्री होती हैं (Latticed) ; बहुकोणवाले ढोल यथा आठ कोणवाला (Octagonal) ढोल। इनमें खाल उलटती पलटती ख़ूब रहती हैं, इनसे सारे में असर एकसा होता है दूसरे घिसट लगने से वे नर्म हो जाती हैं। इसी कारण इन ढोलों को खालों को भिगोने में, चोकर देने में, धोने में, पकाने में, रँगने में, तेल देने आदि में प्रयोग करते हैं। अन्दर खाल डालने के लिए एक दरवाज़ा रखते हैं, जो ढकन से बंद हो जाता है। पानी या घोल डालने के लिए अलग नली होती है। अन्दर खालों को उलझने से बचाने के लिए खूँटी या चौड़े २ तख्ते होते हैं। इनसे

रगड़ भी काफ़ी बैठती है। फिर भी यदि खाल पहिले ही से सड़ी व कमज़ोर दाने (Weak grain) की हो, तो यह ख़राबी बहुत बढ़ जाती है। ऐसी खालों के लिए कास्टिक सोडा (Caustic Soda) ठीक रहता है।



चित्र ३ (Drum ढोल)

(३) एक की राय है कि ५ प्रति सैकड़ा के नमक के घोल (अर्थात् १०० सेर पानी में ५ सेर नमक) में डालने से खालें भीग जाती हैं। निस्संदेह यह सड़न से बचाए रखता है; तो भी खाल का मसाला घुलता अवश्य है। सच तो यह है कि ऐसी कोई विधि नहीं जो ख़ूब सूखी हुई खालों को बिना घोले नर्म कर दे। सड़न न होने देने योग्य ठंडे पानी में भी बहुत काल तक भिगोने से काफ़ी घुलन होती है।

(४) ०·१ ($\frac{1}{10}$) प्रति सैकड़ा कार्बोलिक एसिड जल में दे देने से सड़न बंद हो जाती है, व घुलना भी कम हो जाता है। परंतु यह अल्ब्यूमिन आदि को जमा देता है (Coagulates), और खाल को पकाकर उसका एक प्रकार का चमड़ा बना देता है। इसको पानी में भली प्रकार घोल देना चाहिए वर्ना पके के से धब्बे पड़ जायँगे। और अम्ल व खार भी इस काम में यदि भली प्रकार प्रयोग किये जावें तो काम दे सकते हैं। इनमें सड़ाने-वाले कीटाणु पैदा नहीं हो सकते। बहुत हल्का सल्फ्यूरिक एसिड (Sulphuric acid) ई० आई० किप्स की मिट्टी को तो खूब घोल देता है। पर इसका रेशों पर आवश्यकता से अधिक बुरा असर पड़ता है। इससे सल्फ्यूरस एसिड (Sulphurous Acid) अच्छा है। २४ से ४८ घंटे २% (प्रति सैकड़ा) सल्फर डाई-ऑक्साइड (Sulphur Dioxide)-वाले पानी में भिगोकर सादे पानी में डालने से खालें आसानी से पूरी मोटाई तक फूल जाती हैं। फिर यह अम्ल खार से दूर किया जा सकता है। ऐसी खालें बहुत समय तक पानी में पड़े रहने पर भी नहीं सड़तीं और उनका पदार्थ भी नहीं घुलता है। ऐसी खालों को या तो पुराने चूने में डालना चाहिए, या चूने में सोडियम सल्फाइड मिलाना चाहिए, क्योंकि कीटाणुओं के बिल्कुल न होने से बाल उतरने में देर लगती है। फ़ार्मिक एसिड (Formic Acid) से भी ऐसा ही प्रयोजन सिद्ध होता है; पर यह महँगा पड़ता है।

(५) ०·१ या ०·२% कास्टिक सोडा (NaOH) या ०·१५ से ०·५% सोडियम सल्फ़ाइड (Na_2S) भी प्रयोग किया जाता है। ऐसे पानी में किप्स और भारी खालें तक २४-४८ घंटे भिगोने से और फिर सादे जल में डालने से काफ़ी भीग जाती हैं। इसमें रेशों का पदार्थ नहीं घुलता और न सड़न होने पाती है, यहाँ तक कि यदि हर मठरी के लिये पानी में सोडे की शक्ति एकसी कर दी जाय तो बहुत दिन तक वही पानी प्रयोग हो सकता

है। इसमें फुलाने की इतनी शक्ति है कि फिर ढोल आदि में नर्म करने की आवश्यकता नहीं रहती। कास्टिक सोडा व सल्फ़ाइड के इतने हल्के (Dilute) घोल भारी घोलों की अपेक्षा अधिक नर्म करते हैं और हानि भी नहीं करते। चूने में इसका कुछ भी बुरा असर नहीं होता। परंतु यदि यह अधिक मात्रा में प्रयोग हो जायँ, तो बेहद फुला देते हैं और फिर उन खालों से अच्छा चमड़ा नहीं बन सकता।

(६) रसायनों के साथ या रसायनों के बदले खालों को भिगोने के लिए मशीनों का प्रयोग भी करते हैं। पुरानी विधि खालों को बीम पर डालकर कुन्द छुरी से घोटकर नर्म करने की है। हलकी खालों पर अब भी ऐसा करते हैं। भारी खालों को मूसल (Faller Stocks फालर स्टाक, यह एक प्रकार की ओखली सी होती है जिसमें एक हथौड़ा जो पहिए से उठता गिरता है खाल को कूटता है) या ढोल में डालकर नर्म करते हैं। मूसल में एकसाथ कितनी खालें आ सकती हैं यह उसकी बड़ाई छुटाई व खाल के भारी हल्के होने पर निर्भर है। पर ध्यान यह रखना है कि खाल का हर हिस्सा अच्छी प्रकार कुट जाय। सब खालें एकसाथ न भर देनी चाहिए, पर एक २ करके डालनी चाहिए। खाल की हालत से १०-३० मिनिट लगते हैं। जब तक खाल पानी में ऐसी नर्म न हो जाय कि वह आसानी से दोहरी हो सके और रेशे न टूटें, मूसल में न देना चाहिए। मूसल में कूटने के बाद फिर कुछ समय उनको पानी में डाल देना चाहिए। मूसल में और भिगोने के पानी में थोड़ासा सोडियम सल्फ़ाइड डाल देने से अच्छा रहता है, क्योंकि यह कठोरतर खालों को कैसे भी नर्म कर देता है। खालों को मशीनों में बहुत देर भी न चलाना चाहिए, क्योंकि इस कठोर बर्ताव से जो गर्मी पैदा होती है उससे प्रोटीन घुल जाती हैं, जिसमें हानि है। सिर्फ़ इतना ही चलाना चाहिए जितना नितांत आवश्यक हो।

मूसल की अपेक्षा ढोल अधिक अच्छा है क्योंकि इसमें इतना अधिक कठोर बर्ताव नहीं होता। रसायनिक पदार्थों के प्रयोग करने से इस तरह नर्म करने की आवश्यकता नहीं रहती।

देशी चमारों को जब खालों को किसी भी घोल में हिलाना होता है, तो वे नाँद के से हौदों में घोल ले, उसमें खालें डाल, पैरों से रौंदते हैं। भेड़ी बकरी आदि के लिए यह काफ़ी है, पर भारी खालों पर इतना अच्छा असर नहीं हो सकता। दूसरे जहाँ मज़दूर सस्ते न हों मशीनों का आश्रय लेना होता है। यही कारण है कि विदेशों में यह काम मशीनों से होते हैं। इनसे असर भी अच्छा होता है। वहाँ इतनी सस्ती मज़दूरी नहीं है जितनी यहाँ। यहाँ हाथ से सब प्रयोगों को करने में बड़प्पन है वहाँ मशीन से। मानना पड़ता है कि कितने ही कामों में मशीन अनिवार्य हैं, जैसे चमड़े को पर्तों में चीरने के लिए, आदि।

सील मछली की खालों को (Seal Skins) पहिले गर्म पानी में (२५° श.) भिगोते हैं जिससे उनमें का तेल जो उनमें बहुतायत से होता है निकल जाय। पानी ठंडा हो जाने पर उनको बीम पर डालकर उन पर छुरी लगाते हैं जिससे तेल निकल जाय। जब तक काफ़ी तेल न निकल जाय, यह प्रयोग दोहराया जाता है।

भिगोने की रसायनिक देखभाल—चमड़ा बनाने के काम में खाल में हर समय रसायनिक परिवर्तन होता है इसलिए हर दशा के परिवर्तनों को जाँच लेने से धोखे का डर जाता रहता है जो कि अटकल से करने में अति सम्भव है, तथा सदैव एक सा नतीजा होता है। पहिले चमड़ा बिल्कुल अटकल से बनाया जाता था, परन्तु जब से क्रोम से पकाने की विधि चली है इन रसायनिक क्रियाओं का पता लगाया जा रहा है और बहुत कुछ बातें मालूम हुई हैं व कितने ही प्रयोग रसायनिक देखभाल (Chemical control) पर किये जाते हैं;

जैसे आगे बतायेंगे। बेटिंग का काम इसी खोज के कारण कितना ही सरल हो गया है। चमड़ा बनाने की क्रियाओं को रसायनिक देखभाल से करने में बहुत कुछ उन्नति करने और अच्छा चमड़ा बनाने की आशा है। अतः हर प्रयोग के बाद उसकी रसायनिक देखभाल के बारे में सारांश में लिखेंगे। पर इन क्रियाओं को करने के लिए रसायनशास्त्र का ज्ञान आवश्यक है, और उसके लिए इस विषय की बड़ी २ पुस्तकें देखनी होंगी, इस छोटी पुस्तक में सब बताना कठिन है।

उस पानी में जिसमें खाल भिगोई गई हों, खाल का मसाला, अमोनिया के लवण (Ammonium Salts), अल्व्यूमिनवाले पदार्थ, और पेपटोनाइज्ड खाल के मसाले (Peptonised hide substance) के रूप में होता है। इन सब चीजों में नाइट्रोजन होती है। यह अनुमान है कि खाल में १७·८% नाइट्रोजन है, अर्थात् नाइट्रोजन मालूम करने से खाल के घुले मसाले का पता चल जाता है। घोल में की नाइट्रोजन जैलडाल की विधि से निकाल लेते हैं। यदि घोल में कास्टिक सोडा हो तो उसे $\frac{N}{10}$ अम्ल से फिनोलफ-थैलीन संकेतक(Phenolphthalein Indicator) के साथ घटित (Titrate) करके मालूम कर लेते हैं। घोल में नमक की मात्रा पहिले फार्मिक एसिड, फिर मग्नीशिया (MgO) डाल सिल्वर नाइट्रेट ($AgNO_3$) से घटित कर निकाली जाती है।

यदि नाइट्रोजन अधिक है, तो इससे पता चलता है कि खाल का मसाला घुल रहा है, कीटाणु पानी में बढ़े हैं। उसे बदल देना चाहिए। नमक और सोडे की मात्रा जिस समय आवश्यकता से अधिक हो बदल देना चाहिए। प्रतिदिन यह नापें लेने से खालों को सदैव एक से ही घोल में दिया जा सकता है।

पाँचवाँ अध्याय

चूना देना (LIMING)

खालें भीगने के बाद चूने में डाली जाती हैं। इसी से बाल निकल आते हैं। जिन खालों को बाल सहित पकाना हो, उनको चूने में नहीं डालते, वैसे ही पका देते हैं (Tan)।

बिना चूने में डाले भी बाल निकाले जा सकते हैं। यदि खाल को भीगने के बाद यों ही छोड़ दिया जाए, वह धीरे २ सड़ने लगती है। नमक ठीक न लगने से जो बाल ठसकने लगते हैं, उसका भी यही कारण है। सड़न सबसे पहिले एपीडरमिस की म्यूकस तह (Mucous layer) में आरम्भ होती है जिससे यह आसानी से घुल जाती है। एपीडरमिस के सेल्स के घुल जाने से बाल ढीले हो जाते हैं, और आसानी से हटा दिए जा सकते हैं। सबसे पुरानी बाल निकालने की विधि यही है, पर इससे सदैव एकसा माल नहीं निकलता और दाना भद्दा पड़ जाता है। इसी कारण इस विधि को आजकल प्रयोग नहीं करते। इसे स्वेटिंग (Sweating) कहते हैं। पहिले इस विधि से बाल निकालने के लिए खालों को गर्म सीली जगह में एक के ऊपर एक लगा देते थे, पर अब स्वेटपिट्स में इस प्रयोग को करते हैं।

स्वेटपिट्स जमीन के ऊपर कमरे होते हैं जिनको दोनों पंक्तियों के

बीच में एक रास्ता होता है। इसी के द्वारा मनुष्य कमरों में आते जाते हैं। बाहर की दीवार के बाहर एक और दीवार होती है, उसके चारों तरफ़ मिट्टी का ढेर कर देते हैं जिससे अन्दर की आबोहवा में बाहर की हवा का असर न हो। कभी २ यह कमरे ज़मीन के अन्दर बने होते हैं, तब दोहरी दीवार नहीं बनाते। ताप १५°—२०° श. तक होता है। इनकी हवा प्रायः घुटी रहती है, गो इस हवा को बदलने के लिए खिड़कियाँ होती हैं। गर्म करने के लिए नीचे से भाप का प्रबन्ध होता है। ठंडा करने को ऊपर से पानी की बौछाड़ से काम लेते हैं, जिससे हद दर्जे की नमी रहती है। खालें बाँसों पर बाँध इनमें लटका दी जाती हैं। एक कमरे में ५०-१०० खालें आती हैं। खालों के चेतन पदार्थ (Organic matter) के टूटने से बहुतसा अमोनिया निकलता है। यह भी एपीडरमिस के घोलने में मदद देता है। पाँच-छः घंटे में बाल काफ़ी ढीले हो जाते हैं।

स्वेटिंग से दाना प्रायः ख़राब हो जाता है, जिससे बचाने के लिए होशियारी और देखभाल चाहिए; सड़न कभी २ कोरियम तक पहुँच जाती है। इस विधि से सिर्फ़ अमरीका में सूखी खालों से तले का चमड़ा बनाया जाता है। तले के चमड़े का यदि दाना कुछ भद्दा हो जाय तो इतनी परवाह नहीं; लाभ यह है कि कोरियम के घुले हुए पदार्थ उसी में अन्दर रह जाते हैं, बाहर नहीं जाने पाते। इससे बोझ (Weight) और पुख़्तापन (Solidity) कम नहीं होती। यह चमड़ा तुल कर बिकता है। यूरोप में इस विधि को अधिक ताप पर भेड़ी पर से बाल उतारने के लिए प्रयोग करते हैं—उन्हें भी दाने की परवाह नहीं—ऊन ही क़ीमती होता है। वहाँ इसे स्टेलिंग (Staling) कहते हैं। जिन खालों पर से इस प्रकार बाल हटाए जाते हैं, वे बिल्कुल ढीली व गिरी हुई होती हैं। जो भेड़ी की खाल पर से इस प्रकार ऊन उतारते हैं, उन्हें फ़ेलमांगर

(Fellmonger) कहते हैं। वे इन खालों को ऊन उतारने के बाद ताज़ा चूने में रखते हैं। और जब काफ़ी खालें इकट्ठी हो जाती हैं, उन्हें नीलाम करके बेच देते हैं। ऐसी खालों से अच्छा चमड़ा नहीं बन सकता।

आजकल प्रायः सभी जगह केवल चूना व चूना और अलकाली (खार) के सल्फ़ाइड (Alkali Sulphides) बाल दूर करने के लिए प्रयोग होते हैं। चूना खड़िया व चूने के पत्थर से प्राप्त होता है। पत्थर, कंकड़, संगमरमर आदि में अधिकांश कैल्शियम कार्बोनेट (Calcium Carbonate) होता है। संगमरमर स्वच्छ कैल्शियम कार्बोनेट है। पत्थर में भिन्न २ मात्रा में मैग्नीशियम, लोहा और अल्यूमिनियम के लवण (Salt) व कुछ सिलीकेट्स (Silicates) होते हैं। पत्थर को भट्टों में जलाते हैं, जिससे कार्बन डाइआक्साइड (Carbon-Dioxide) निकल जाती है और कैल्शियम आक्साइड (Calcium Oxide चूना) रह जाता है। यदि पत्थर कम जले तो इस प्रकार प्राप्त चूने में चूने (कैल्शियम आक्साइड Calcium Oxide) का अंश कम होगा यदि अधिक जल जाय तो पत्थर के सिलीकेट्स के साथ जो इतनी गर्मी पर गल जाते हैं, चूने का एक कड़ा पदार्थ बन जाता है। यह पानी में कठिनता से बुझता है। ऐसे चूने की भी उपयोगिता कम है। चर्मकार को तो केवल उस चूने से काम है जो कैल्शियम आक्साइड के रूप में हो। यही घुलकर असर करता है; इसे ही उपयोगी चूना (Available lime) कहते हैं। अच्छा चूना वह है जिसमें उपयोगी चूना बहुत हो (७०—८० % हो) और आयरन आक्साइड (Iron Oxide) न हो। आयरन आक्साइड इस दशा में घुल नहीं सकता, वैसे ही दाने पर जम जाता है जिससे लोहे के नीले २ धब्बे पड़ जाते हैं। मग्नीशिया और मिट्टीवाले (सिलीकेटवाले) पत्थर का

चूंना कठिनता से बुझता है। और यदि बेबुझा ढेला खाल पर आ जाय, तो बुझने की गर्मी से खाल को जला कर उसमें छेद कर देता है। बहुत अच्छे चूने में ६० % और ख़राब में ३० % तक कैल्शियम आक्साइड होता है। उपयोगी चूना देखने के लिए, चूने के नमूने में से क़रीब १ ग्राम चूना तौलकर एक लिटर पानी में घोलते हैं। अच्छी तरह हिलाकर $\frac{N}{10}$ अम्ल (Acid) से घटित कर (Titrate) कैल्शियम-आक्साइड को मात्रा मालूम करते हैं। इसी को प्रति सैकड़ा में हिसाब लगा लेते हैं। यही उस चूने में उपयोगी चूने की मात्रा है।

खड़िया से जो चूना बनता है वह इतना तेज़ नहीं होता जितना अशुद्ध पत्थर से बना चूना। इसका कारण शायद यह हो कि इसमें का मेग्नीशिया चूने से मिलकर ऐसा पदार्थ बनाता हो जो अधिक घुलन-शील है या उसमें कुछ अंश सोडियम व पोटाशियम व बेरियम (Barium) व स्ट्रांशियम (Strontium) आक्साइड का होगा जो चूने से अधिक घुलनशील हैं और चूने की तेज़ी बढ़ा देते हैं। १५ श० पर ०·१३ % चूना पानी में घुल सकता है। यदि इससे अधिक चूना पानी में घुले, तो वह चूना अच्छा नहीं—वह हानिकर होगा—अच्छे चूने का घोल लगभग $\frac{N}{20}$ होता है।

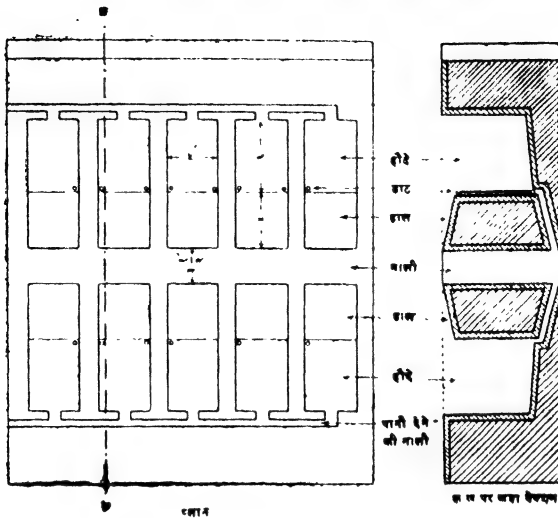
चूना बुझाने का सबसे अच्छा तरीक़ा यह है—एक टंकी में चूना भरो और उस पर बराबर का पानी डालो कि सब चूना भीग जाय। इसको यों ही २४ घंटे छोड़ दो; फिर इतना पानी मिलाओ कि गाढ़ी लेहीसी हो जाय। अब इसमें लगभग ३० % चूना होगा। इस हालत में चूना महीनों बिना ख़राब हुए पड़ा रह सकता है। जब आवश्यकता हो जितना चाहो खोद लो और उसे बाल्टी में पानी में घोल लो। जब पत्थर आदि बैठ जायँ हिलाकर हौदे में डाल दो; पत्थर और रेत हौदे में न जाने दो।

चूना पानी मे मिलते ही बुझ जाता है, अर्थात् कैल्शियम आक्साइड का हाइड्राक्साइड [$Ca(OH)_2$] बन जाता है। साथ ही बहुत गर्मी पैदा होती है; अच्छा चूना आसानी से बुझता है। यदि बेबुझा (Unslaked) चूना हौदे में डालकर उसी समय खालें उसमें डाल दें तो इस बुझने की गर्मी से वे जल जायँगी। इसलिए हौदे में बुझा हुआ चूना डालना चाहिए। गर्मी से चूना जल्दी बुझता है; १००° श० पर भारी जला हुआ मेग्नीशिया (Magnesia) भी छः घंटे में बुझ जाता है। इसी कारण चूने में आवश्यकता से अधिक पानी न डालना चाहिए वर्ना यह गर्मी को कम कर देगा और सारा चूना न बुझ पायगा; ठंढ में बुझने में देर लगती है। मग्नीशिया की मिलावट होने से हफ़्तों लग सकते हैं। पानी थोड़ा भी न होना चाहिए, वर्ना सब चूना न बुझेगा और बचा हुआ खाल पर बुझकर गर्मी से उसे जला देगा। चूने को हवा में नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि हवा में से पानी लेकर वह बुझसा जाता है, चूर २ हो जाता है, उसमें धूल मिल जाती है, जिससे फिर ठीक नहीं बुझता। दूसरे, हवा में की कार्बन डाइआक्साइड से वह फिर कार्बोनेट बन जाता है जो किसी काम का नहीं अर्थात् इस प्रकार चूना ख़राब हो जाता है।

कैल्शियम आक्साइड की घुलनशीलता बहुत कम है, ठंढा करने से बढ़ती है और गर्म करने से घटती है। १५° श० पर १·३२ ग्रा-(२०½ छं·); २५° श० पर १·२५४ ग्रा. (२० छं·) और १००° श० पर केवल ०·५९७ ग्रा. (९¾ छं·) कैल्शियम आक्साइड १००० सी० सी० (C. C.) (१००० सेर) पानी में घुलता है।

जिस कमरे में खालों को चूने में डालते हैं, उसे चूनागुदाम (lime-yard) कहते हैं। उसमें प्रायः क़तार में बहुतसे हौदे (Pits गड्ढे) होते हैं। चूने के हौदे प्रायः ६′×५′×६′ होते हैं। पास को

दो क़तारों के बीच २½' जगह होती है जिसके नीचे लम्बी नाली होती है।



चित्र ४ चूनागुदाम (Lime-yard)

इसी बीच की पगडंडी और हौदों के बीच ५'×५' जगह होनी है जो हौदे की तरफ़ को ६" ढालू होती है। इस ढाल पर खालों को निकाल कर लगा देने से उनका पानी निचुड़कर हौदों में चला जाता है। हर हौदे के एक कोने में एक खड़ी नाली होती है जो तली से आध फ़ुट नीचे जाकर पगडंडी के नीचेवाली नाली की तरफ़ मुड़ ढाल के नीचे होती हुई उस नाली में गिरती है। एक लम्बा लकड़ी का डंडा जो नीचे से मोटा होता है, इस खड़ी नाली में ठोक देने से वह बन्द हो जाती है। यह हौदे के ऊपर निकला रहता है; जिससे जब चाहें नाली बन्द कर सकते या खोल सकते हैं। कहीं २ हौदे के सिरे पर एक छड़ गड़ी होती है जिसमें उन रस्सियों व जंजीरों का एक सिरा डाल देते हैं जिनके दूसरे सिरे पर खालें बँधी हों।

हौदे में पानी भरकर इतना बुझा हुआ चूना डालते हैं कि कुल घोल ऐसा हो जाय जैसा लगभग पुताई के लिए प्रयोग होता है। फिर प्लंजर से (Plunger—हिलानेवाला बाँस जिसके एक सिरे पर लकड़ी का चपटा टुकड़ा लगा होता है) हिलाते हैं। तब खालें एक २ करके हौदे में डालते जाते हैं, बाल ऊपर रखते हैं। सबसे ऊपर की खाल इस प्रकार डालते हैं कि बाल नीचे को रहें और गोश्त ऊपर। हर खाल को डालने के बाद बाँस से दबा देते हैं और चूने को हिला देते हैं, जिससे चूना घुला रहे और हर खाल पर आ जाय तथा हर खाल भली प्रकार फैल जाए। हर खाल के दोनों पुट्ठों पर (Butts) गोंडों (Shanks) के पास एक २ छेद करते हैं जिसमें से एक २ रस्सी या चैन पुरोकर, हौदे की सिरेवाली डंडी से बाँध देते हैं। जब निकालना होता है, तो इसी रस्सी को पकड़कर खाल को हौदे में से खींच लेते हैं। निकालकर हौदे के ढलुआ सिरे पर एक के ऊपर एक लगा देते हैं। कुछ देर निचुड़ने के पश्चात्, फिर हौदे को हिला, खालें उसमें पहिले की तरह डाल देते हैं। ऐसा प्रतिदिन करते हैं, जब तक खालें तैयार न हो जायँ। इस निकालने को हालिंग (Hauling) और दबाने को सेटिंग (Setting) कहते हैं।

खालें एक ही हौदे में डाली व निकाली जाकर तैयार हो जाती हैं, ऐसा नहीं है। भिन्न २ प्रकार के चमड़ा बनाने में कितना ही फ़र्क़ करना पड़ता है। कितना चूना देना चाहिए, कितने दिन चूना देना चाहिए तथा किस विधि से चूना देना चाहिए, यह जैसा चमड़ा बनाना हो उस पर निर्भर है।

एक प्रकार के चमड़े के लिए सब चर्मकारों का एकसा ही तरीक़ा नहीं होता। अपनी २ समझ व आवश्यकतानुसार हरएक इस विधि में भेद कर लेता है।

मुख्य विधियाँ ये हैं:—(१) एक हौदे का तरीक़ा, (२) दो हौदे या तीन घोलों का तरीक़ा, (३) कई हौदों का तरीक़ा, (४) बफ़ैलो का तरीक़ा।

एक हौदे के तरीक़े में खालें एक ही हौदे में प्रत्येक दिन निकाली व डाली जाती हैं। पहिली दफ़ा डालते समय कुछ चूना और डाल देते हैं, व हर गठरी (Pack) के साथ और बीच २ में भी चूना डाल देते हैं। जब बाल निकलने लगते हैं, अर्थात् उँगली से रगड़ने से हट जाते हैं, तब खालों को निकाल लेते हैं। दो तीन महीने में हौदे को साफ़कर उसमें नया घोल बनाते हैं। इस विधि में ख़राबी यह है कि एक ही चूना पुराना होता चला जाता है और उसमें कंकड़, रेत, तथा खाल के घुले हुए पदार्थ और कीटाणु बहुत हो जाते हैं। जब हौदे को साफ़कर उसमें नया घोल बनाते हैं, उसमें यह चीजें नहीं होतीं। अतः जो गठरी (Pack) हौदे के घोल के बनने के शुरू में जाती है, और उसमें जो हौदे के साफ़ होने के पहले निकलती हैं बहुत अन्तर होता है। क्योंकि सब गठरियों पर एक सा असर नहीं होता, यह विधि अच्छी नहीं है। नये और पुराने चूने के असर में बड़ा अन्तर है। किसी काम के लिए नया चूना अच्छा है और किसी के लिए पुराना, पर पुराने की भी कोई हद होती है।

इससे अच्छा दो हौदों का तरीक़ा है। इसमें जिस हौदे में से दो गठरी निकल गई हों, उसमें भीगी हुई खालें डालते हैं। दो दिन बाद इन खालों को निकालकर दूसरे हौदे में, जिसमें से एक गठरी निकल गई हो, डाल देते हैं। फिर दो दिन बाद पहिले हौदे को ख़ालीकर उसमें नया घोल बनाते हैं तथा खालों को, उन पर से बाल हटाकर, उसमें डाल देते हैं। दो दिन बाद निकाल लेते हैं। इस प्रकार सब गठरियों पर एक सा असर होता है और चूना बहुत पुराना नहीं होने पाता।

भारी चमड़ों, ज़ीन साज़ आदि, कई के बनाने में प्रायः ५ हौदों (कई हौदों की विधि) का एक चक्कर रखते हैं। भीगी हुई खालों को एक दिन सबसे पिछले में, तीन दिन उससे नये में, चार दिन उससे नये में, तीन चार दिन उससे नये में, फिर बाल निकालकर दो तीन दिन बिल्कुल नये में छोड़ देते हैं। फिर छिलाई करते हैं। कहीं २ इसमे कुछ भेद कर लेते हैं। इन कामों के लिए भैंसे व गाय की खाल प्रयोग करते हैं। छिलाई के बाद जाँचकर ज़ीन तला बेल्टिंग आदि में उनको बाँट देते हैं। जो जिस वस्तु के लिए ठीक हो उसको उसी के लिए अलग करते हैं, क्योंकि आगे की विधियाँ हर एक के लिए भिन्न २ हैं। हफ़्ते में पाँचों में के सबसे पुराने हौदे का धोकर नया कर देते हैं। इस प्रकार १¼ महीने बाद हर हौदे में नया चूना हो जाता है। कहीं २ जितने दिन चूना देना हो उतने ही हौदों का एक चक्कर रखते हैं; प्रति दिवस हर गठरी आगे के हौदे में ले जाई जाती है तथा हर सबसे आगेवाली गठरी के लिए नया चूना बनाया जाता है। इस नये चूने में एक दिन रहने के बाद यह गठरी चूनागुदाम से निकल जाती है।

बफ़ैलो की विधि—बफ़ैलो (Buffalo) एक विलायती चर्मकार का नाम है। उसकी विधि में खालों को कुछ दिन चूने में डालते हैं और फिर कुछ समय गर्म पानी में रखकर बाल निकालते हैं। अमरीका में तले का चमड़ा बनाने में यह विधि बहुत प्रयोग होती है। यूरोप में भी इसका कुछ प्रचार है। बहुधा चूने में सोडियम सल्फ़ाइड (Sodium Sulphide) भी देते हैं। अमरीका के एक कारख़ाने में तले का चमड़ा बनाने के लिए, खालों को केवल १० घंटे चूने में देते हैं, जिसमें १ सेर चूना और १¼ छं सोडियम सल्फ़ाइड प्रति खाल देते हैं। रात भर खालों को ३५°—४५° श० के पानी में डालते हैं, जिससे दूसरे दिन बाल आसानी से निकल जाते हैं। एक दूसरे कारख़ाने में दो दिन

तक चूने में देते हैं, जिसमें चूना धीमा ताज़ा होता है और थोड़ा सा टैंक वेस्ट (Tank waste, यह एक गैस के कारख़ाने की मिट्टी है, जिसमें गंधक के अंश होते हैं ; इसका असर भी सोडियम सल्फ़ाइड का सा होता है) मिला होता है। फिर ७-८ घंटे ३२° श० के पानी में डालकर बाल निकाल देते हैं। जितना तेज़ चूना दे दिया जाय उतना ही पानी में कम देर डालना पड़ता है और कम गर्म पानी प्रयोग होता है। यह विधि तले का ठोस चमड़ा (Solid Sole) बनाने के लिए बहुत अच्छी है, क्योंकि खाल के पदार्थ घुलने नहीं पाते। परंतु इससे न तो चर्बी निकल पाती है और न रेशे ही पूरी तरह फूल पाते हैं, जिसके लिए आगे अक्सर सल्फ़्यूरिक एसिड देते हैं।

पहिले कह चुके हैं कि चूना एक खार (Alkali एल्केली) है। इसमें किरेटीन नामी प्रोटीड (Keratin proteid) से बने पदार्थ, एपीडरमिस, बाल आदि, घुल जाते हैं। ऊपर बताया गया है कि चूना बाल निकालने के काम आता है, चूने का सिर्फ़ यही काम नहीं है। इसका असल काम घोलने का है। एपीडरमिस के सेल (Cell) जो कठोर होते हैं, इसमें फूल कर नर्म हो जाते हैं ; म्यूकस वाली तह (Mucous layer) और बालों की खोलिएँ ढीली हो जाती हैं और घुल सी जाती हैं। बाल पर तो कुछ ऐसा असर नहीं होता पर उसकी नर्म जड़ पर अवश्य असर होता है। इसीसे कुन्द छुरी से रगड़ने से बाल निकल जाते हैं। दूसरे, कोरियम पर ज़ोर का असर होता है, रेशे फूल जाते हैं और पानी चूस लेते हैं, जिससे खाल फूल कर ठोस (Swollen and plump) हो जाती है। दूसरे खार और अम्लों में भी रेशों को फुलाने की शक्ति होती है। खाल स्वयं इतना नहीं फूल सकती। खार व अम्ल के साथ जो खाल का सम्मेलन (Compound) बनता है वह खाल की अपेक्षा अधिक फूलने-वाला है। चर्मकार के लिए यह फूलना उपयोगी है क्योंकि इससे खाल

पुख़्ता हो जाती है; छिलाई आसानी से हो सकती है। तीसरे, रेशों का जोड़ने वाला पदार्थ घुल जाता है। रेशों के बन्डल छोटे २ रेशों में बँट जाते हैं। कभी २ यह नन्हें रेशे फूल कर पारदर्शक (Transparent) हो जाते हैं; यहाँ तक कि खुरचते २ घुल जाते हैं। पकाने में रेशों का बँट जाना उपयोगी है। क्योंकि इससे पकानेवाले घोलों (Tanliquors टैनलिकर्स) को असर के लिए जगह मिल जाती है, जोड़नेवाले पदार्थ के घुल जाने से नर्मी भी अधिक आजाती है और भरावट के लिए जगह मिलती है, जैसा वनस्पति पदार्थों (Vegetable tanning materials) से पकाने में होता है। यह तले के चमड़े के लिए अच्छा है, क्योंकि इससे वज़न और पुख़्तगी बढ़ती है। चूने का चौथा काम यह है कि इससे खाल की चर्बी का न घुलनेवाला साबुन बन जाता है। यह चर्बी यदि साबुन के रूप में न निकाली जाय तो रँगने में यह सतह पर निकल आती है, रँगाई इकसार नहीं होने पाती और धब्बे पड़ जाते हैं; चर्बी के दाग़ रह जाते हैं। स्वेटिंग (Sweating) से तैयार की हुई खालों में यह अन्दर ही रह जाती है और ख़राबी करती है।

ताज़े चूने का काम हम देख चुके, अब पुराने और इस्तेमाल किये हुए चूने के घोलों (Old lime liquors) के असर के बारे में लिखते हैं। खार (Alkalies) और अम्लों (Acids) में कीटाणुओं को न होने देने की शक्ति (Antiseptic property) होती है। चूने का भी यही हाल है। उसमें कोई कीटाणु (Bacteria) नहीं रह सकता। परंतु ज्यों-ज्यों खाल के घुले हुए पदार्थ जो सरेस (Gelatine) के से हैं चूने के घोल (Lime liquor) में आते हैं, कीटाणुओं को भोजन का सामान मिलता है और वे कीटाणु जो इस खारी (Alkaline) दशा में ठहर सकते हैं उसमें पैदा हो जाते हैं। कीटाणुओं के मुँह तो होता नहीं; ये अपने में से

घोल में ऐसे पदार्थ छोड़ते हैं जो थोड़े से होने पर भी बहुत-सी वस्तु को घोल लेते हैं। यही घुला पदार्थ कीटाणु चूस लेते हैं। इस घोलनेवाले पदार्थ को जामुन (एनजाइम्स Enzymes) कहते हैं। यह जामुन प्रोटीड के बने होते हैं और कितने ही प्रकार के हैं। हरएक प्रकार के जामुन का असर ख़ास है। वह किसी ख़ास चीज़ को ही घोल सकता है, सबको नहीं। पेट में जो अन्न पचता है वह इन्हीं जामुनों द्वारा घोला जाकर पेट की दीवारों से चूस लिया जाता है। यह जामुन अपने से घुलजानेवाली चीज़ के साथ एक सम्मेलन (Compound) बनाते हैं, जो फिर तत्काल टूट जाता है। टूटा हुआ पदार्थ यही जामुन (Enzymes) और उस चीज़ का घुला हुआ रूपांतर है। इस तरह छुटकारा पाई हुई वह जामुन उस चीज़ के और भाग से मिलकर उसको भी घोल देती है और आप स्वतन्त्र हो जाती है। जामुनों की ज़रा-सी मिक़दार इस प्रकार अपने से घुलनेवाली चीज़ के बड़े समूह को धीरे २ आसानी से घोल देती है। जामुनों को हम दो भागों में बाँट सकते हैं। एक तो वे जो कीटाणुओं (Bacteria) से पैदा हों—कीटाणुओं के जामुन (Bacterial Enzymes) और दूसरे वे जो कीटाणुओं से न बने हों—बेकीटाणुवाले जामुन।

केवल कीटाणु ही जामुनों का प्रयोग नहीं करते, वृक्षों में भी जामुन मिलते हैं। यहाँ पर भी इनका काम एक पदार्थ को दूसरे में बदलना होता है। जैसे रेंडी के बीज (Castor seed) में लाइपेज़ नामक जामुन (Lipatic Enzyme) होता है। यह बीज में अंकुर फूटने के समय बीज में के तेल को उपयोगी पदार्थ में बदल देता है। हर जामुन के काम करने का पदार्थ, असर की विधि, ताप (Temperature) आदि भिन्न २ होते हैं।

ज्यों २ चूने में खाल के घुले हुए पदार्थ बढ़ते हैं, वैसे कीटाणु भी

बढ़ते हैं। चूने का घोल जितना पुराना होता जायगा उसमें उतने ही अधिक कीटाणु हो जायँगे। यहाँ तक कि यदि महीनों चूना न बदला जाए तो हो सकता है कि लाभकारी कीटाणुओं के सिवा उसमें हानिकारक कीटाणु पैदा हो जायँ। इसमें घुले हुए पदार्थ अस्ल में घुले नहीं होते बल्कि पानी में फैले रहते हैं (Suspended)। साथ ही चूना भी जो घुलनशील (Soluble) नहीं है इनके सहारे तमाम घोल में फैला रहता है। यह भली प्रकार विदित है कि पुराने चूने में ताज़े चूने की अपेक्षा बाल जल्दी निकलते हैं। यह कीटाणुओं ही के कारण है। ताज़े चूने में बाल बिल्कुल नहीं निकल पाते, पर जहाँ दो-तीन दिन में उसमें कीटाणु पैदा हुए, उसमें भी बाल निकलने लगते हैं। यदि ताज़े चूने में कीटाणुओं को न होने दिया जाय (जैसे क्लोरोफ़ार्म आदि डाल कर) तो उसमें बाल नहीं निकलने पाते। ताज़ा चूना अधिक फुलाता है, पुराना इतना नहीं। इसी कारण पुराने चूने को नर्म (मेलो mellow lime) चूना कहते हैं। इन्हीं कारणों से खालों को पहले पुराने चूने में डालते हैं, बाद में नए में। पुराने बहुत सड़ते हुए चूने में से जो चमड़ा निकलता है वह ढीला खोखला भद्दे दानेवाला होता है। पुराने में सरेस को पानी करनेवाले कीटाणु (Gelatine liquifying bacteria) के बढ़ जाने से उनमें खाल को घोलने की शक्ति बढ़ जाती है। पहले वे एपीडरमिस को साफ़ करते हैं। जहाँ वह ख़तम हुई, दाने का नम्बर आता है। जितने अधिक ऐसे कीटाणु होंगे, उतना ही उन्हें भोजन चाहिए। ख़ाली एपीडरमिस पर ही संतोष न करके वे कोरियम (Corium) पर भी हमला करते हैं। कीटाणुओं के सिवाय उनसे घुले हुए पदार्थ के और छोटे २ टुकड़ों में बँट जाने से अन्त में जो अमोनिया निकलता है, वह भी चूने के इसी घोल में घुला रहता है और बालों को ढीला करने में बड़ी सहायता देता है। कीटाणु

जामुन (Enzyme) द्वारा काम करते हैं। हवा में रहते हैं और अपने उपजने योग्य जगह पाकर उसमें पैदा हो जाते हैं। यदि यह मालूम हो जाय कि बाल निकालने में कौन-से जामुन काम करते हैं तो उनके प्रयोग से स्वतन्त्र पैदा हुए कीटाणुओं पर काम को न छोड़ (क्योंकि चाहे जब हानिकारक कीटाणु भी पैदा हो जाते हैं) खाल का मूल्य पदार्थ बिना घुलने दिए बाल आसानी से निकाले जा सकेंगे। डॉक्टर राहम (Rohm) एक वैज्ञानिक की राय है कि ट्रिप्सिन (Trypsin) नामक जामुन से बाल निकाले जा सकते हैं। यह पशुओं की अंतड़ी (Intestine) और पैन्क्रियास (Pancreas) में होती है और इन्हीं में से निकाली जाती है। उसको बड़े पैमाने पर बनाने का अभी कोई तरीक़ा नहीं है। यदि ऐसा हो जाय तो अवश्य उसका असर बड़े पैमाने पर देखा जायगा। और आशा है कि लाभकारी हो, क्योंकि यह एपीडरमिस को अवश्य घोलती है।

पुराने और नए चूने के इन गुणों को जानते हुए जैसा चमड़ा बनाना हो, इनको वैसा ही प्रयोग करना चाहिए। ड्रेसिंग के चमड़ों (Dressing leathers) में नर्मी चाहिए इसलिये पुराने चूने में कुछ अधिक डाले रखना लाभकारी है। पर जहाँ तले की-सी पुख्ती (Firmness) और वज़न (Weight) चाहिए, पुराने चूने में बहुत कम देना चाहिए। आजकल प्रायः बहुत पुराने चूने प्रयोग नहीं करते। जहाँ उनका-सा काम निकालना हो वहाँ रसायनिक पदार्थों (Chemicals) से काम लेते हैं क्योंकि इस प्रकार ख़राबी बहुत कम होती है।

चूने को तीन महीने से अधिक पुराना न होने देना चाहिए। परन्तु यह उसमें घुले चेतन पदार्थ (Organic matter) के ऊपर निर्भर है, यदि ताज़े चूने में भीगी खाल को डालना पड़े, पुराना ख़राब हो तो पुराने की दो तीन बाल्टी ताज़े चूने में डाल देने से पुराने का सा मतलब सिद्ध हो सकता है।

एक हौदे में कितना चूना डाला जाय? चूने की घुलनशीलता (Solubility) मामूली पानी में लगभग १·२ ग्राम (Gram) फ़ी लिटर (१०,००० सेर पानी में १२ सेर चूना) है। इसलिए इससे अधिक चूना यदि लिया जाय तो वह तली में बैठ जाता है, और फ़ज़ूल है। परन्तु सब का सब चूना कैल्शियम आक्साइड (Calcium Oxide) तो होता नहीं। यदि उसमें ५०% (प्रति शत) कैल्शियम आक्साइड हो तो २·४ ग्राम चूना फ़ी लिटर चाहिए (१२ सेर के बजाय २४ सेर)। कुछ चूना खालों में चला जाता है। कुछ चूना खालों के निकालने डालने में उनके साथ निकल कर ख़राब जाता है। इन बातों पर ध्यान रखते हुए, एक वैज्ञानिक का कहना है कि ६ ग्राम चूना प्रति लिटर देना चाहिए (१०,००० सेर पानी में ६० सेर)। काम में इससे कहीं अधिक चूना इस्तेमाल करते हैं। क्योंकि इसकी घुलनशीलता बहुत कम है। अधिकता से हानि नहीं होती। पर अधिक व्यर्थ ही जाता है। किस विधि से, कितना चूना, किस काम के लिए प्रयोग करना है, यह चर्म्मकार की जानकारी (experience) पर निर्भर है। तले के लिए खाल की भीगी तौल पर १०-१२ % (१०० सेर खाल के लिए १०-१२ सेर) तक प्रयोग करते हैं।

चूना प्रति दिन हिला देने से उसके घोल की शक्ति ठीक रहती है, खाल पर असर एक सा होता है और बाल भी जल्दी ढीले हो जाते हैं। चूने का कार्य्य जल्दी समाप्त हो इसलिए उसको बराबर हिलाते रहने की बहुत सी मशीनें यूरोप और अमरीका के कार्यालयों में प्रयोग होती हैं। सोडियम सल्फ़ाइड जैसे बाल निकालनेवाले मसालों के साथ में तो इन मशीनों से चूने का कार्य्य और भी शीघ्र समाप्त होता है। चूने के घोलों को हिलाने के यंत्र यह हैं :—(१) हौदे के ऊपर चौखटा लगाकर उस पर से खालों को हौदे में लटकाते हैं। हौदे में घोल भर कर चौखटे को यंत्र से हिलाते हैं। (२) हौदे के नीचे से घोल निकालकर पम्प से ऊपर

से हौदे में फिर डालते हैं। इस प्रकार निकालने और भरने से घोल हिलाया जा सकता है। (३) हौदे की तली से एक फ़ुट ऊपर छेददार तख़्ता लगाते हैं। इन छेदों में से होकर हौदे में तख़्ते के ऊपर नीचे घोल भरा रहता है। तख़्ते के नीचे एक पंखा लगा देते हैं, जिसके चलने से सारा घोल हिलता रहता है। ऐसे हौदे में खालों को लटकाकर रखते हैं। (४) पंखे की बजाय, कहीं २ नीचे से दबी हुई, हवा छोड़ कर (Compressed air) घोल को हिलाते हैं। इस विधि में हवा में की कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon Dioxide) कुछ चूने को कार्बोनेट बनाकर ख़राबकर देती है। (५) चूना देने के लिए पैडिल (Paddle) का भी प्रयोग करते हैं। क्योंकि इसमें चूना हिलाया ख़ूब जा सकता है। इन चीज़ों में शुरू में रुपया तो अवश्य लगता है पर चूना देने का समय घट जाता है। और चूना कम ख़र्च होता है। घुलनशील बाल निकालने के मसालों के होने से इनकी उपयोगिता इतनी बढ़ गई है कि वहाँ के बहुत से कार्य्यालयों में इनमें से किसी न किसी विधि से चूना हिलाया जाता है, इसके साथ ही कहीं २ तो खालों को एक हौदे में से दूसरे में ले जाने के लिए भी मशीन का प्रबन्ध होता है।

पहिले कह चुके हैं कि गर्म घोल में चूना कम घुलता है। इतने पर भी उसका असर बढ़ जाता है; ठंढे घोल में चूने का असर कम हो जाता है। चूने के गर्म घोल में बाल तो जल्दी ढीले हो जाते हैं लेकिन खाल ठोस (Plump) नहीं होती—ढीली खोखली रहती है, वज़न कम बैठता है और दाने पर फुटकिएँ निकल आती हैं, यदि ठंढ में गर्म करने की आवश्यकता हो तो चूनागुदाम को गर्म रखने तथा चूना के घोल बनाने में गर्म पानी इस्तेमाल करने से काम निकल सकता है। चूने के इस स्वभाव का लाभ बफ़ैलो की विधि (Buffalo's Method of Liming) में उठाया गया है।

चर्म्मकार खाल को देखकर और हाथ से छूकर मालूम कर लेते हैं कि उन पर चूने का असर ठीक होगया है या नहीं। करते २ अभ्यास से यह बात समझ में आ जाती है, ठीक चुना लगी खाल कुछ तनी सी मालूम होती है। अँगूठे से दबाने से उस पर निशान नहीं पड़ता, यदि पड़ा भी तो वह फ़ौरन दूर हो जाता है। खाल को दोहराने से दोहरी जगह पर खाल तनी सी चक्राकार (गोल सी) मालूम होती है—दबी नहीं होती। छूने से भरी ठोस सी मालूम होती है, ये जाँचें पुट्ठे पर की जाती हैं। खाल की पहिले की अपेक्षा बिल्कुल ही रंगत बदल जाती है। उसमें से आर-पार धुँधला सा दिखाई देने लगता है (अल्प पारदर्शक Translucent)। ऐसी खाल को पुट्ठे पर से काट कर देखा जाय तो कटी सतह पर बीच में सफ़ेद सी धारी नहीं दिखेगी।

चूने की अच्छाई और बुराई—खालों को इस दशा में लाने के लिए प्रायः सभी जगह चूना ही प्रयोग होता है। चूने में अच्छाई भी है और बुराई भी है, पर कोई दूसरी ऐसी चीज़ नहीं है जिसमें यह बुराइयाँ न हों, चूने में खाल का पदार्थ घुलता ज़रूर है पर साथ ही यह भी बात है कि चूने में कोई गठरी रद्दी नहीं हो सकती। दूसरे पदार्थ जो चूने के बजाय प्रयोग हो सकते हैं खालों पर इतना तेज़ असर करते हैं कि ज़रा चूक हो जाने से गठरी की सारी खालें ख़राब हो सकती हैं। चूने की घुलनशीलता इतनी कम है कि यदि अधिक भी पड़ जाय, तो कोई हानि नहीं होती। दूसरी चीज़ों को ठीक २ तौलना पड़ता है। यदि खालें चूने में अधिक देर भी पड़ी रह जायँ, तो ख़राबी आसानी से नहीं पहचानी जा सकती। दूसरे मसालों के इस्तेमाल में ज्यादा देर नहीं रख सकते। चूने को सैकड़ों सालों से प्रयोग करते २ चर्म्मकार उसके असर से भली भाँति परिचित हैं। इसलिए चूने से खाल ख़राब होने का डर नहीं है।

चूने के बजाय जो मसाले प्रयोग हो सकते हैं, वे ये हैं—सोडियम और पोटाशियम हाइड्राक्साइड (कास्टिक सोडा और कास्टिक पोटाश Caustic Soda and Potash) ये दोनों बहुत तेज़ खार हैं। ये पानी में बहुत घुलते हैं। यदि इनका इतना हल्का घोल तैयार किया जाय जितना चूने का अमूमन होता है, तो खालें उसमें के सारे खार को जल्दी से चूस लेती हैं। इससे अधिक तेज़ घोल में खालें खूब फूल जाती हैं और उनका सरेस बन जाता है। हल्के घोल में खाल का मसाला कम घुलता है। दाना खुरदरा और झुर्रीदार पड़ जाता है और बाल नहीं निकलते। जिन हौदों में घोल हिलाया जा सके उनमें असर फिर भी ठीक होता है। ये खार (Alkali) बाल उतारने के लिए अकेले नहीं इस्तेमाल होते। ये सूखी खालों को भिगोने में लाभकारी हैं। चूने का असर तेज़ करने के लिए, ये चूने के साथ प्रयोग होते हैं। इस काम के लिए कास्टिकसोडे के बदले सोडा (सोडियम कार्बोनेट (Sodium Carbonate) काम में लाते हैं। चूने के घोल में सोडे का कास्टिक सोडा बन जाता है। खालों के वज़न पर $\frac{1}{4}$-$\frac{1}{2}$ % (१०० सेर के लिए पाव भर से आध सेर तक) सोडा चूने में देते हैं।

मेसर्स पेन और पुलमैन की विधि में (Payne and Pullman Process) खालों को जाड़े में ४८ घंटे और गर्मी में २४ घंटे खूब सड़ते हुए भिगोने के पानी में डालते हैं। फिर खालें १ % (१०० सेर पानी में १ सेर) कास्टिक सोडे के घोल में डाली जाती हैं। इसमें भी वे ४८ घंटे रक्खी जाती हैं, बीच में एक बार निकाली और दाबी जाती हैं। यदि सड़ते पानी में वे ठीक भीग चुकी हैं, तो बाल काफ़ी ढीले हो जाते हैं और छुरी से निकाल दिये जाते हैं। दो घंटे निचुड़ने के बाद वे एक दूसरे हौदे में डाली जाती हैं; जिसमें १$\frac{1}{2}$ % (१०० सेर पानी में १$\frac{1}{2}$ सेर) कैल्शियम क्लोराइड (Calcium Chloride) होता है। चौबीस घंटे

बाद निकालकर फिर उसी में डालते हैं। इसके २४ घंटे बाद खालें निकालकर नर्म (Soft) पानी में खूब धोई जाती हैं। सोडे और कैल्शियम क्लोराइड (Calcium Chloride) के घोलों में कीटाणु होते नहीं, इसलिये ये घोल बिना बदले बहुत दिन तक प्रयोग किये जा सकते हैं। विश्लेषण (Analysis जँचाई) से सोडे और कैल्शियम क्लोराइड की कमी मालूम करके कमी को पूराकर देना चाहिए। गाढ़े घोल (Stock solutions) बनाकर रख लेने से यह कमी आसानी से पूरी की जा सकती है। इसके लिए ५½ पाउन्ड कास्टिकसोडा और ५¾ पाउन्ड कैल्शियम क्लोराइड अलग-अलग एक-एक गैलन (५ सेर) पानी में घोल लेना चाहिए। सड़ते हुए पानी का जो इस विधि में प्रयोग होता है, इसलिये यह विधि अच्छी नहीं है। और इसी से इस विधि से चमड़ा नहीं बनाया जाता है। उन खालों को चूना देने के लिए यह विधि अच्छी है जिनके बाल रखने हों। इससे बाल बिना ढीले हुए खाल पर चूने का पूरा २ असर हो जाता है, क्योंकि कास्टिक सोडे और कैल्शियम क्लोराइड के मिलने से सोडे का सोडियम क्लोराइड और कैल्शियम क्लोराइड का हाइड्राक्साइड (चूना) बन जाता है। खाल के रेशे (Fibres) फूल जाते हैं और ऐसा नर्म व भरा चमड़ा निकलता है जैसा चूने से। सोडे के घोल में से निकालने के बाद छुरी लगा देने से चर्बी जो पानी में घुले हुए सोडे के साबुन के रूप में होती है आसानी से निकल जाती है। दूसरे घोल में जाने पर फिर इसका न घुलनेवाला चूने का साबुन बन जाता है। सोडा पहिले देने के बदले कैल्शियम क्लोराइड पहिले दिया जा सकता है और बाद में सोडा। जिन खालों में बालों की चिकनाहट और सुन्दरता वैसो ही रखनी हो, उनमें ये घोल केवल गोश्त की तरफ़ लगाए जाते हैं। पहिले सोडे का घोल लगाते हैं। जब खालें फूल आती हैं, उसी पर कैल्शियम क्लोराइड का घोल लगाते हैं। इस

विधि से लाभ यह है कि बुरे ? पानी और चूने के कंकड़ों के डल्ले फेंकने को नहीं होते।

सोडियम सल्फ़ाइड—इसके ५% के घोल में बाल, ऊन, आदि किरेटीन से बने पदार्थ हलुआ हो जाते हैं; खाल के पदार्थ या जोड़नेवाले पदार्थ पर हल्का असर होता है; दाना फूलकर खुरदरा और कमज़ोर हो जाता है। हल्के घोल प्रयोग करने से ऐसा नहीं होता। चूने के साथ ½% सोडियम सल्फ़ाइड से बाल ख़राब नहीं होते, उनकी जड़ें ढीली हो जाती हैं। सोडियम सल्फ़ाइड पानी में बहुत घुलता है। पानी में यह दो भागों में बँट जाता है, सोडियम हाइड्राक्साइड (Sodium Hydroxide) और सोडियम सल्फ़हाइड्रेट (Sodium Sulphydrate)। इस दूसरे का चूने से मिलने पर सोडियम हाइड्राक्साइड और कैल्शियम सल्फ़हाइड्रेट बन जाता है। इसी में बालों के उड़ाने की शक्ति है।

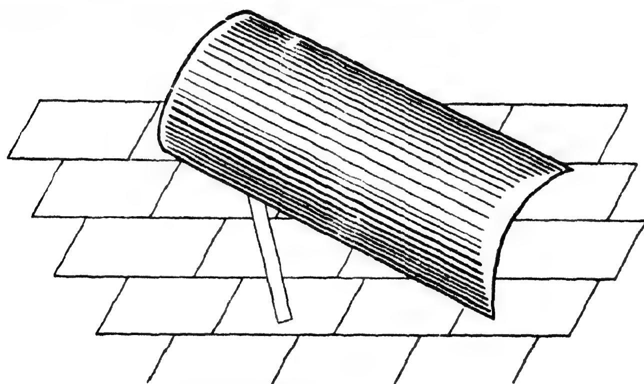
सोडियम सल्फ़ाइड दो प्रकार का मिलता है; एक दानेदार जिसमें ३०-३२%, दूसरा ढेलेदार (Fused) जिसमें ६०%, सोडियम सल्फ़ाइड होता है। ढेलेदार का १०—१५% का घोल बनाकर चूने से गाढ़ा कर लेते हैं कि ब्रुश से ठीक लग सके। फिर खालों के गोश्त की तरफ़ इस घोल को तिनके के ब्रुश (Fibre brush) से रगड़कर लगाते हैं। खालों को एक के ऊपर एक इस तरह रखते हैं कि गोश्त से गोश्तवाली तह और बाल से बालवाली तह लगी हों। नमी की जगह इस ढेरी को छोड़ देने से बाल बहुत जल्द ढीले हो जाते हैं। इस तरह से चूना देने को पेन्टिंग से चूना देना या लेटी लगाना कहते हैं। जब बालों की परवाह नहीं होती, तो इस ढेरी को हौदे में रखकर पत्थर से दाब देते हैं और हौदे में पानी भर देते हैं। इस तरह चूना देने को पेन्टिग और फ्लडिंग (Painting and Flooding) कहते हैं। इन विधियों से बाल बड़ी जल्दी ढीले

होते हैं। यदि दाना ख़राब होने की भी परवाह न हो—जैसे मामूली दर्जे के तले का चमड़ा बनाने में—तो ढेलेदार का १५-२०% तक का घोल प्रयोग करते हैं और उसे खालों पर लगा देते हैं। कभी-कभी खालों को मसाला लगाने के बाद रीढ़ पर से, इस तरह मोड़कर कि गोश्तवाली तह अन्दर की तरफ़ रहे, एक के ऊपर एक लगा देते हैं। ये घोल प्रायः गोश्तवाली सतह पर ही लगाए जाते हैं जिससे न दाना ख़राब होता है और न बाल बिगड़ते हैं। इस घोल में सोडियम-सल्फ़ाइड से बना कास्टिक सोडा ही फूलन का कारण है। घोल में कैल्शियम क्लोराइड दे देने से कास्टिक सोडा इससे मिलकर बेकाम हो जाता है और फिर ऐसे घोल का कोई बुरा असर नहीं होता; बाल उड़ाने की शक्ति भी नहीं घटती।

मैनसिल (Realgar-रिएल्गर-या-Red Arsenic—रेड आर्सेनिक) यह भी बाल उड़ाने के लिये प्रयोग होती है। इससे दाना चिकना आता है। यह चूने के साथ ही प्रयोग होती है। इससे चूने का कैल्शियम सल्फ़हाइड्रेट बनता है जिसमें, पहिले बता चुके हैं, बाल उड़ाने की शक्ति है। घोलने के लिये इसे गर्म चूने में मिलाना चाहिए। दोनों से मिले मसाले की तेज़ी चूने की गर्मी पर निर्भर है। चूने का बुझाने के समय चूने के बीच में इसकी तह दे देनी चाहिए। इस तरह बुझाने से रसायनिक परिवर्तन ठीक होता है। जब सारे मैनसिल का कैल्शियम सल्फ़हाइड्रेट बन जाता है, तब घोल का रंग हरा होता है। यदि उसमें ज़रा-सा भी लाल रंग हो, तो समझना चाहिए कि कुछ मैनसिल घुलने से रह गया है। बढ़िया चमड़ों (Fine leathers) के बनाने में इसे काम में लाते हैं; ऐसी जगह सोडियम सल्फ़ाइड नहीं इस्तेमाल करते क्योंकि इससे दाना ख़राब हो जाता है। सोडियम सल्फ़ाइड और चूने के साथ कैल्शियम क्लोराइड दे देने से दोनों का असर मैनसिल का-सा हो जाता है। मैन-

सिल जहर है। दस्ताने के चमड़े (Glove kid ग्लव किड) के लिये खालों के वज़न पर ०·१-०·३% मैनसिल और ५% चूना लेते हैं। बछेले के लिये १ हिस्सा मैनसिल दस हिस्से चूने में मिलाकर गोश्तवाली सतह पर लगाते हैं।

हड़ताल (Orpiment—आर्पीमेन्ट Auri Pigmentum; As_2S_3)—यह मैनसिल से सस्ता है और बाल निकालने में उससे तेज़ है। इसमें गंधक अधिक होने से कैल्शियम सल्फ़हाइड्रेट अधिक बनता है। इतने पर भी मैनसिल ही प्रायः प्रयोग होता है।



चित्र ५ बीम (Beam)

जब बाल ढीले हो जाते हैं, खाल को बाल ऊपर रखते हुए बीम (Beam) पर डालते हैं और बाल कढ़ाई की छुरी (Unhairing Knife अनहेअरिंग नाइफ़) से बालों को हटा देते हैं। इस बीम का आकार चित्र ५ से विदित होगा। यह लकड़ी व लोहे के बनते हैं और ऊपर से जस्ते से मढ़ दिये जाते हैं। यहाँ पर प्रायः ईंट और गारे के बनाते हैं; सीमेंट से सतह हमवार कर दी जाती है; आकार (शक्ल)

यही रहता है। बाल कढ़ाई को छुरी (चित्र ६ क) लोहे की चपटो कुछ गोलाईदार पट्टी होती है जिसके दोनों सिरों पर लकड़ी की मूठ (Handle) लगी होती है। इस छुरी में धार नहीं होती ; यह काट नहीं सकती। छुरी लगाने (Scudding स्कडिंग) में भी इसी को काम में ले आते हैं पर स्कडिंग की छुरी ज़रा-सी भिन्न होती है, जैसा कि चित्र ७ क से मालूम होगा। स्कडिंग के लिये एक और छुरी भी प्रयोग होती है, जिसमें लोहे के बजाय वलकैनाइट की स्लेट (Plate of Valcanite) होती है ; इसे स्कडिंग की स्लेट कहते हैं (चि० ७ ख)।

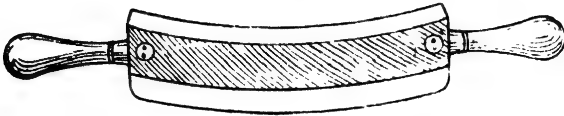
आजकल बाल कढ़ाई के लिये विदेशों में मशीनें अक्सर इस्तेमाल होती हैं। इस काम की कितनी ही मशीनें बन चुकी हैं। इनमें से रबर राल अनहेअरिंग मशीन और लीजैन अनहेअरिंग मशीन (Leidgen Unhairing Machine) अच्छी हैं। हल्की खालों पर से बाल हटाने के लिये टेबिल (Table) अनहेअरिंग मशीन इस्तेमाल होती हैं। इन सबमें बाल हटानेवाली छुरी एक कुन्द चक्रदार (Spiral) छुरी होती है। कहीं-कहीं छुरी या मशीन से बाल न निकालकर खालों को थोड़ी देर ढोल (Drum) में चला देते हैं। आपस की रगड़ से बाल हट जाते हैं और ढोल में पानी लगा देने से वे साफ़ धुल भी जाती हैं।

ज्यों ही बाल हटा दिये जायँ, खाल को नर्म (Soft) पानी में डाल देना चाहिए। अमूमन बाल कढ़ाई के बाद वे फिर चूने में रक्खी जाती हैं। जब वे फूली और ठोस (Swollen and plump) हो जाती हैं उनकी छिलाई होती है। छिलाई के लिये खाल को गोश्तवाली सतह ऊपर रखते हुए बीम पर डालते हैं और छिलाई की छुरी (Fleshing Knife फ्लेशिंग नाइफ़) से व्यर्थ गोश्त और ढीले तन्तुओं (Loose tissues) को काटकर गोश्तवाली सतह साफ़ कर देते हैं। चूने की छिलाई को कच्ची छिलाई भी कहते हैं। कभी-कभी खालों को भीगने के बाद ही छील

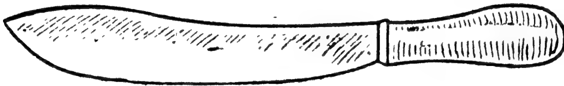
देते हैं; इसे ग्रीन फ़्लेशिंग (Green Fleshing) कहते हैं। इसके



चित्र ६ क—बाल कटाई की छुरी



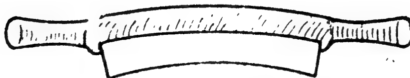
चित्र ६ ख—छिलाई की छुरी



चित्र ६ ग—काटने की छुरी



चित्र ७ क—स्कर्डिंग की छुरी



चित्र ७ ख—स्कर्डिंग की प्लेट

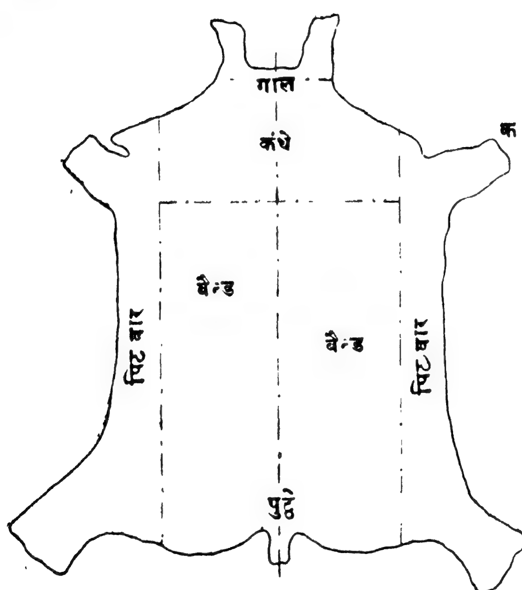
बाद प्रायः पेंटिंग से चूना देते हैं। इससे लाभ यह है कि चूने का असर ज़ल्दी, अच्छा, और सारे में इकसार होता है। छिलाई (Fleshing)

को छुरी (चित्र ९ ख) भी चपटी, कुछ गोल आकार की, लोहे की पट्टी होती है जिसके दोनों सिरों पर लकड़ी की मूठ होती है। इस छुरी में धार दोनों तरफ़ होती है। जिधर का किनारा बीच में बाहर को निकला है, उधर छीलने की तेज़ धार है; जिधर का किनारा बीच में से अन्दर की तरफ़ है, उधर की धार कुन्द है। कुन्द धार से तेज़ धार तक चौड़ान में यह छुरी चपटी नहीं है; बीच में कुछ उठी हुई है। कुन्द धार चमड़े को सिर्फ़ खसकाने के काम आती है। जब तेज़ धार कुन्द हो जाती है, उसे सान पर धरते हैं। धार को तेज़ रखने के लिये छीलनेवाले छिलाई करते हुए बीच-बीच में धार के नीचे-ऊपर सिल्ली फेरते हैं। सान रेतीले पत्थर का एक पहिया-सा होता है, जो धुरें पर घूमता है; धुरा टब के ऊपर रहता है। धार रखते समय टब में पानी भर देते हैं जिससे पहिया भीगा रहे। पहिए को एंजिन से चलाकर, चलते पर छुरी को दबाके रखकर, धार रखते हैं।

भेड़, बकरी, मेमने आदि की हल्की खालों के लिये छिलाई की मशीनें बहुत काल से प्रयोग हो रही हैं। यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ़ अमरीका में ड्रेसिंग लेदर्स (Dressing leathers हल्के चमड़े) की छिलाई मशीनों पर ही होती है। इँगलैंड में भी इनका प्रचार है। जो मशीनें भारी खालों की छिलाई के काम आती हैं, वह हल्की खालों की छिलाई की मशीनों से बहुत भिन्न हैं; पर आधार एक ही है। छीलनेवाली छुरी चक्रदार (Spiral) होती है। वाहन फ्लेशिंग मशीन (Vaughn Fleshing Machine) प्रायः प्रयोग होती है। तेज़ छुरी के बदले कुन्द छुरी लगाकर इन्हीं मशीनों से बाल भी निकाले जा सकते हैं और स्कडिंग भी किया जा सकता है। तले का चमड़ा इन मशीनों से नहीं छीलते हैं, क्योंकि इनमें चमड़ा दब जाता है।

चूनेदार खाल को हवा न लगने देना चाहिए वर्ना हवा में की कार्बन

डाइआक्साइड से दाने पर के कैल्शियम हाईड्राक्साइड (चूने) का कैल्शियम कार्बोनेट बन जाता है। इसके रहते हुए वनस्पतियों से पकने पर धब्बेदार रंगत आती है। इस प्रकार ख़राब हुई खालों को विंड ब्लास्टेड (Wind-blasted) कहते हैं। जिस पानी में चूनेदार खालें रक्खी जायँ वह नर्म होना चाहिए वर्ना उसमें पहले थोड़ा-सा चूना डाल देना चाहिए।



चित्र ८ खाल के भाग

छिलाई के बाद खालों पर गठरी का नम्बर (Pack Number) लोहे के नम्बरों से ठोककर लगा देते हैं। गोडी (Shanks), गाल (Cheeks) आदि व्यर्थ हिस्से काट देते हैं। ये और छिला हुआ गोश्त आदि सरेस बनाने के काम आते हैं। खालों के दाम इस दशा

में तोलकर दिए जा सकते हैं। बेल्ट (Belt) और बाक्स साइड्स की खालों को रीढ़ पर से दो में बाँट देते हैं। इनको फाँकें (साइड्स Sides) कहते हैं। तले के लिये खालों की पिटवार (Bellies) और कंधे (Shoulders) काटकर पुट्ठे अलग कर लेते हैं (चित्र ८ देखो)। इस काम के लिये खाल को लकड़ी की मेज़ पर डालकर छुरी (Butcher's Knife चित्र ६ ग) से आवश्यकतानुसार काट देते हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार के चमड़े बनाने के लिये चूना देने (Liming) की विधियाँ—तले का चमड़ा बनाने के लिये तीन हौदे की विधि बहुधा प्रयोग होती है। तीन-तीन दिन हर घोल में रखते हैं। जब नया हौदा बनाना हो, १० पा० चूना ७० पा० की खाल के लिये प्रयोग करते हैं। यदि कास्टिक सोडा देना हो, तो प्रति खाल २ आ० कास्टिक सोडा और ८ पा० चूना काफ़ी होता है। कभी-कभी दूसरे घोल में प्रति खाल २ आ० सोडियम सल्फ़ाइड देते हैं। हर गठरी दो सल्फ़ाइडवाले घोलों में और एक ताज़े चूने के घोल में होकर जाती है। जो ओक की छाल (Oak Bark) से तले का चमड़ा पकाते हैं, वे बढ़िया खालें लेते हैं और तीन हौदे के तरीक़े से चूना देते हैं जिससे बढ़िया चमड़ा तैयार होता है।

कहीं-कहीं तीन से अधिक हौदों का चक्कर रखते हैं और नया घोल बनाने के लिये १२-१६ पा० चूना लेते हैं। गर्मियों में १४-१८ दिन तक और जाड़े में २१ दिन तक चूना देते हैं।

बफ़ैलो की विधि से भी चूना दिया जाता है। इस काम के लिये चूना देने की वे विधियें काम में लाते हैं जिनसे समय कम लगे, क्योंकि तले के लिये जितना कम हो सके, उतना कम खाल का पदार्थ घुलने देना चाहिए। २½ पा० दानेदार सोडियम सल्फ़ाइड और १ पा० चूना प्रति

खाल बालों पर लगाकर भी बाल उतारते हैं। जो कुछ लगा-लगाया बचे, उसे हौदे के घोल में डाल देते हैं।

बेल्ट और हारनेस का चमड़ा बनाने के लिये कुछ अधिक चूना देते हैं पर यह किस प्रकार का चोकर दिया जायगा, उस पर निर्भर है। एक विधि में पाँच हौदों का चक्कर रखते हैं। १०-१६ दिन तक चूना देते हैं। २½ हंडरवेट (Cwt. —१४० सेर) चूना हर हौदे के बनाने में डालते हैं। ५ हफ़्ते बाद हर हौदे का घोल नया बनाते हैं।

वनस्पति से पकनेवाले हल्के चमड़ों (Vegetable tanned dressing leathers) को खालों को चूने के नर्म घोलों (Mellow lime Liquors) में लगभग १६ दिन तक रखते हैं। एक हौदे की विधि से या कई हौदों की विधि से चूना देते हैं। सस्ते चमड़ों के बनाने में और क्रोम से पकनेवाली खालों को ७-८ दिन चूने में देते हैं; साथ में कुछ सल्फ़ाइड भी प्रयोग करते हैं।

बछड़े की खालें (Calf-skins)। जूतों के लिये वनस्पति से पकाने में इनको १०-१४ दिन चूने में देते हैं। २००-२५० खालों की गठरी पर १ हंडरवेट (११ पसेरी) चूना लेते हैं। शुरू के घोलों में फ़ी गठरी पीछे २½ पा० सल्फ़ाइड देते हैं। आगे की गठरी बिना सल्फ़ाइड के चूने में रहती है। बिना सल्फ़ाइड के नर्म चूनों में तीन हफ़्ते तक चूना देते हैं।

क्रोम से पकाने के लिये इन खालों को ४-७ दिन चूने में देते हैं, इसलिए काफ़ी सल्फ़ाइड देना होता है; पर इतना सल्फ़ाइड न देना चाहिए कि दाना खुरदरा हो जाय। इन खालों की छिलाई चूने में देने से पहले कर देते हैं। १०० पा० खाल के लिए २ पा० दानेदार सोडियम सल्फ़ाइड को २ गैलन (१० सेर) पानी में घोलकर उसमें १ पा० बुझा हुआ चूना मिलाते हैं, और फिर कुल को ४ गैलन (२० सेर पानी के बराबर) बना लेते हैं। थोड़ी देर निथरने के बाद ऊपर के साफ़ घोल को उस चूने

में मिलाते हैं जिसमें से दो गठरी निकल गई हों। इस चूने को खूब हिलाकर खालें उसमें दबा देते हैं। दो दिन बाद इस गठरी को ऐसे चूने में देते हैं जिसमें से एक गठरी निकली हो। १ पाउन्ड सल्फ़ाइड, १½ पा० चूना मिलाकर, ४ गैलन करके, निथरे पानी को इस चूने में मिलाकर खालों को डालते हैं। दो दिन बाद पहले हौदे में नया चूना बनाकर उसमें दो दिन रखते हैं। नया चूना बनाने को १०० पा० खाल के लिए १५ पा० चूना हौदे में देते हैं। दूसरे चूने में से निकालने के बाद बाल कढ़ाई करते हैं। अन्त में छिलाई करते हैं।

काफ़-किड और जिल्दबन्दी के चमड़ों (Calf-kid and Book-binding Leathers) के लिए खालों को ३ हफ़्ते सादे चूने में देते हैं।

भेड़ और मेमने की खालें (Sheep and Lamb Skins)—इन खालों पर से ऊन उतारने के लिये स्वेटिंग (Sweating) की विधि काम में आती है। ऊन उतारने के बाद नर्म और फिर तेज चूने में देते हैं। चूने में देना अति आवश्यक है, क्योंकि इन खालों में चर्बी बहुत होती है जो बिना चूने में दिए नहीं निकल सकती। यदि यह चर्बी न निकाल दी जाय, तो रँगने आदि में तंग करती है। दूसरी विधि में १ हंडरवेट (५६ सेर) चूने और १५ पा० (७½ सेर) आरसेनिक सल्फ़ाइड को मिलाकर बुझा; कुल को ४० गैलन (नाप में २०० सेर पानी के बराबर) कर इस घोल को खालों की गोश्तवाली सतह पर लगाते हैं। रीढ़ (Ridge) पर से मोड़कर खालों की ढेरी लगा देते हैं। दो दिन में ऊन ढीला हो जाता है। चूना देने में बछेले की खाल की तरह तीन घोलों में चूना देते हैं। पहले हौदे में ५ पा० आरसेनिक सल्फ़ाइड और १०-१५ पा० चूना देते हैं। दूसरे में कुछ नहीं। पाँचवें दिन नए चूने में देते हैं। नया चूना बनाने में १६-१७ पा० चूना फ़ी १००

खाल पीछे देते हैं। दो तीन दिन में तैयार हो जाती हैं। छिलाई के बाद खालों को पानी में डालते हैं। दो घंटे बाद छुरी लगा देते हैं। आरसेनिक सल्फ़ाइड के बजाय सोडियम सल्फ़ाइड भी काम में आता है। इस सल्फ़ाइड के १५% के घोल को चूने से गाढ़ाकर खालों पर लगा देते हैं। ऊन उतारने के बाद ४-६ दिन चूने में देते हैं।

दस्ताने के लिए बकरी के बच्चों और मेमनों की खालें (Kid and Lamb Skins)—इनके लिए सोडियम सल्फ़ाइड नहीं प्रयोग करते। पुराने चूने में भी नहीं देते। ७-१० दिन तक चूना देते हैं। चूने में १% (प्रतिशत) आरसेनिक सल्फ़ाइड मिला देते हैं। १४ दिन तक केवल नए चूने में देने से भी अच्छी चीजें बनती हैं।

बकरी की खालें जो मड़ाका (Morocco) और ग्लासी किड (Glace Kid) के लिए तैयार होती हैं, उन्हें गर्मी में १६-२१ दिन व जाड़े में साढ़े तीन हफ़्ते चूना देते हैं। इनसे नर्म चमड़ा बनाने के लिए खाल का कुछ मसाला घुलाना पड़ता है। इनको दो प्रकार के चूने के चक्कर में देते हैं। पहले चक्कर में चूने के वज़न पर ६% आरसेनिक सल्फ़ाइड चूने के साथ घोलते हैं। उसमें दस दिन तक खालें रखते हैं। फिर इन्हें ताजे चूने में डालते हैं जिसमें चूने के वज़न पर ६% कास्टिक सोडा देते हैं। इसमें भी दस दिन तक रखते हैं। पहले चक्कर के बाद बाल उतार देते हैं। आरसेनिक सल्फ़ाइड के बदले सोडियम सल्फ़ाइड देने से ४-५ दिन में बाल उतर जाते हैं।

सील मछली की खालें (Seal Skins)—इनको बिना सल्फ़ाइड के नर्म चूने में कितने ही दिन देते हैं, जिससे चर्बी कट जाय। लगभग तीन हफ़्ते लगते हैं। प्रायः एक हौदे की विधि से चूना देते हैं।

छठा अध्याय

चोकर देना (BATING)

चूने से जब यह काम (बाल, व्यर्थ गोश्त, और चर्बी दूर करना) हो गया, उसकी आवश्यकता नहीं। कुछ पकाने की विधियों में चूना हानिकर है। भिन्न-भिन्न प्रकार के पकाने के घोलों पर उसका भिन्न-भिन्न प्रकार का असर होता है।

चूना खार (Alkali) है और पकानेवाले घोल (Tanning liquors) अम्ल (ऐसिड) हैं, अतः यह उनके अम्ल को शिथिल (neutralise) कर देता है जिससे कि घोल ख़राब हो जाते हैं। वनस्पति-पदार्थों के प्रयोग में चूने से चमड़े को रंगत काली पड़ जाती है। तले का चमड़ा पकाने में कुछ चूने का रहना लाभकारी है; कुछ चूना फिर भी निकाल देना पड़ता है। इस बयान में चूना निकालने के जो भिन्न-भिन्न तरीक़े दिये हैं उन सबका मुख्य काम चूना निकालना है। साथ ही साथ उनसे और भी मतलब सुधरते हैं। इस प्रयोग को तोड़ाई करना भी कहते हैं। चोकर देना इसलिये कहते हैं कि इस काम के लिये अक्सर चोकर प्रयोग होता है। दूसरा मतलब जो इन उपायों से सिद्ध होता है वह खाल की फूलन गिरना है। तले जैसे पुख़्ता चमड़े के लिये अच्छा है कि फूली दशा में पके। फूले में पकने से सख़्त चमड़ा बनता है। नर्म चमड़ों के लिये बिल्कुल गिरी (Fallen) ढीली दशा

में खालों को पकाना चाहिए। गिरी से मतलब है कि वह सख्ती (Firmness) और ठोसपन (Plumpness) जो चूने के कारण आ जाती है, न रहे। तीसरा मतलब खाल की उन कुछ चीजों को, जो तैयार चमड़े में न होनी चाहिए निकाल देना है। दस्ताने का चमड़ा बनाने में खाल के पदार्थ को ऐसा घुलाना पड़ता है कि फिर खाल को चाहे जैसा भी खींचा जावे वह छोड़ने पर भी वैसे ही (Without stretch) रह जाय, लौटे नहीं।

चूना दूर करने के चार तरीक़े हैं। पहला रसायनों द्वारा (Chemical Deliming) रासायनिक विधि, दूसरा कुत्ते के विष्ठा से प्योरिंग (Puering), तीसरा मुर्गी या कबूतर आदि की बीट से बेटिङ्ग (Bating), चौथा चोकर से ड्रेंचिंग (Drenching)।

रसायनिक विधि—। चूना और जो खार (Alkali) चूना देने में प्रयोग किये गये हैं, वे सभी पानी में घुलनशील हैं। अतः यह आशा की जा सकती है कि केवल पानी ही से धोने से सारा चूना निकल जायगा। बेशक धोने से चूना निकल जाता है। पर जैसा जे० टी० वुड (J. T. Wood) ने मालूम किया है, चाहे जितना धोयें सारा चूना नहीं निकल जाता, कुछ रह जाता है। जितना चूना निकलना होता है, वह एक दो घंटे में निकल जाता है। बाद में ज़रा-ज़रा-सा निकलता रहता है। खार में खाल और अम्ल दोनों के गुण हैं। बस चूने के साथ उसके अम्ल से एक सम्मेलन (Compound) बन जाता है जिसमें का चूना घुलता नहीं। धोने से भी निकल नहीं सकता। धोने के लिये जो पानी प्रयोग हो उसमें अस्थायी भारीपन टेम्पोरेरी हार्डनेस (Temporary hardness) न होना चाहिए। यदि ऐसा हो, तो उसमें थोड़ा-सा चूना डालकर उसे नर्म कर लेना चाहिए। न करने से दाने पर कैलशियम कार्बोनेट (Calcium Carbonate)

के जम जाने का डर है। अस्तु, अम्लवाले घोलों में खाल के ये खार खाल से अलग होकर अम्लों से लवण (Salt) बनाते हैं। यदि यह लवण (Salt) पानी में घुलनशील हैं, तो निकल जायँगे वर्ना वहीं खाल के अंदर रह जायँगे। पर यह हानिकारक हैं, क्योंकि पकाने के घोलों के अम्ल से ये लवण टूटकर उतना पकानेवाला पदार्थ व्यर्थ कर देंगे। अतः ऐसा अम्ल प्रयोग करना चाहिये जिसके चूने का लवण पानी में घुलता हो। सब से सस्ता अम्ल सल्फ्यूरिक एसिड (Sulphuric Acid) है। पर इसका लवण कैलशियम सल्फेट बहुत कम घुलनेवाला है। यह फुलाता भी है और खालों के सूखने पर उनके रेशों को कमज़ोर कर देता है। हाइड्रोक्लारिक एसिड (Hydrochloric Acid) इससे कुछ महँगा अवश्य पड़ता है पर इसका लवण कैलशियम क्लोराइड (Calcium Chloride) घुलनशील है। इससे यह प्रतीत होगा कि यह अम्ल (Acid) चूना दूर करने के लिये अच्छा है। पर ये दोनों खाल को बड़ी जल्दी फुला देते हैं। चूना शिथिल भी नहीं होने पाता कि यह खाल के साथ बहुत फूलनेवाला एक सम्मेलन (Compound) बनाते हैं। यद्यपि चूने के घोल का सा भी हल्का इसका घोल बनाया जाय, तो भी खाल ज़रा सी देर में सारा अम्ल ले लेती है। इसका कारण यह है कि ये दोनों अम्ल बली (Strong) हैं। इसीलिये यह अम्ल इस काम में प्रयोग नहीं होते। चाहे जितना करो फूलन हो ही जाती है। सोडियम क्लोराइड (साँभर नमक) दे देने से इसमें रुकावट आ जाती है। यह तरकीब उस चूने को दूर करने के लिये अच्छी है जो किसी तरह से दाने के ऊपर कैलशियम कारबोनेट के रूप में जम जाय। जब इस अम्ल को प्रयोग ही करना हो, तो खालों को पैडिल में चलाना चाहिए। इस हाइड्रोक्लारिक ऐसिड में अक्सर लोहा होता है। हरा रंग लोहे ही के कारण होता है। इस काम के लिये बिना लोहे

का एसिड इस्तेमाल करना चाहिए। जरूरत से कुछ कम अम्ल को बहुत से (दस गुने) पानी में मिलाकर चलते हुए पैडिल में धीरे-धीरे डालना चाहिए।

बोरिक एसिड (Boric Acid) आजकल चूना दूर करने के लिये अधिकतर इस्तेमाल होता है। यह इतना धीमा (Weak) अम्ल है कि यदि अधिक भी पड़ जाय, तो कोई हानि नहीं होती। पर इसके इस्तेमाल करने में सल्फ्यूरिक एसिड की बनिस्बत दसगुने दाम अधिक लगते हैं। इससे दाना साफ़ और चिकना आता है। तले, ज़ीन, बेल्ट आदि के चमड़े के लिये यह खाल पर से सतह का चूना दूर करने के लिये काम आता है। बीट आदि से चूना दूर की हुई खालो को इसके घोल में दे देने से बचा-खुचा भी चूना निकल जाता है और दाना साफ़ निकल आता है। बोरिक एसिड के घोल में खालों को बिना हिले न पड़े रहने देना चाहिए, वर्ना धब्बे पड़ जाते हैं। थोड़ी-थोड़ी देर बाद हिला देना चाहिए। इसका लवण भी (Calcium Borate कैलशियम बोरेट) बहुत कम घुलता है। पर यह इतना धीमा अम्ल है कि इसके खाल में घुसने से पहले चूना बाहर के घोल में आ जाता है। और वहीं इससे मिल जाता है। जब घोल में यह लवण इतना हो जाता है कि और घुला नहीं रह सकता तब बोरिक एसिड खाल के अन्दर चूने से मिलता है। और खाल में ही रह जाता है। इसलिये इसका घोल हमेशा नया बनाना चाहिए।

सल्फ्युरस एसिड (Sulphurous Acid) भी ऐसा ही धीमा अम्ल है। थोड़ा-सा अधिक हो जाने से भी इससे कोई अधिक हानि नहीं होती। इसका सादा लवण (Normal Salt) कैलशियम सल्फ़ाइट (Calcium Sulphite) है। यह भी कम घुलता है। परन्तु आम्लिक लवण (एसिड साल्ट Acid Salt) बहुत काफ़ी घुलता है। इसके बनने के लिये अम्ल (Acid) अधिक देना चाहिए। इसको सतह का चूना दूर करने के लिये प्रयोग कर सकते हैं।

इन अम्लों के प्रयोग में ध्यान रखना चाहिए कि लोहा (Iron) न हो। जिस नाँद आदि में रक्खा जाय उसमें भी लोहा न होना चाहिए। इन खनिज अम्लों के सिवाय बहुत से चेतन अम्ल (आरगेनिक एसिड Organic Acid) काम में लाये गये हैं। वे यह हैं।

१. आकज़ेलिक एसिड (Oxalic Acid) धीमा अम्ल (Weak Acid) है। इसका लवण (कैलशियम आक्ज़ेलेट Calcium Oxalate) पानी में नहीं घुलता। इसी कारण इस अम्ल को बहुत कम इस्तेमाल करते हैं।

२. लेक्टिक एसिड (Lactic Acid) खट्टे दूध में खट्टी चीज़ यही अम्ल है। दो पाउंड फी गैलन (५ सेर पानी में एक सेर) काफ़ी होता है, अधिक पड़ जाने पर यह खालों को फुला देता है। चोकर के घोल में भी यह अम्ल होता है, और उसके बजाय इस्तेमाल किया जा सकता है। परन्तु इस अकेले का असर वैसा नहीं होता। ३०° से ३५° श० (30° to 35° C.) पर इसको पैडिल में चलाना चाहिये। यदि काफ़ी अम्ल दे दिया जाय तो एक घंटा काफ़ी होता है। यह खाल की मोटाई पर भी निर्भर है। यह अम्ल बहुत इस्तेमाल किया जाता है।

३. फ़ारमिक एसिड (Formic Acid)—यह बाज़ार में द्रव रूप में बिकता है, जिसमें ६० प्रति सैकड़ा असल फ़ार्मिक एसिड होता है। ०·१ से ०·२% (प्रति सैकड़ा ; १००० सेर पानी में १ से २ सेर तक) के घोल में इस्तेमाल किया जाता है। इसका लवण कैलशियम फ़ारमेट (Calcium formate) ऐसिड से जो फूलन होती है उसको दबाता है।

४. ऐसेटिक एसिड (Acetic Acid) भी इसी तरह चूना दूर करने के लिये प्रयोग हो सकता है। उड (Wood) का कहना है कि इन दोनों अम्लों को अलग अलग प्रयोग करने की अपेक्षा बराबर हिस्से में मिलाकर प्रयोग करना अच्छा है।

५. ब्यूटायरिक एसिड (Butyric Acid) धीमा अम्ल है, और इस काम में प्रयोग हो सकता है। पर यह अभी इतने बड़े पैमाने पर नहीं बनता। ये सब अम्ल बड़े महँगे पड़ते हैं। इन अम्लों का प्रयोग करने में यदि इनका कैलशियम साल्ट किसी प्रकार तोड़-कर यह अम्ल फिर पैदा कर लिये जायँ, तो ये सस्ते पड़ सकते हैं। सल्फ्युरिक एसिड और आक्ज़ेलिक एसिड इस काम के लिये अच्छे हैं। इनके देने से उन अम्लों का कैलशियम लवण टूटकर कैल-शियम सल्फ़ेट या कैलशियम आक्ज़लेट बन जाता है और फिर पहला अम्ल आज़ाद हो जाता है। कैलशियम सलफेट और आक्ज़लेट पानी में नहीं घुलते, इसलिये तली पर बैठ जाते हैं। इस तरह वही अम्ल उस घोल में कई दफ़ा प्रयोग किया जा सकता है। उसको छुटानेवाला अम्ल ज़रूरत से ज्यादा न देना चाहिए। रसायनवेत्ता (Chemist) आसानी से अम्ल की ठीक २ मात्रा मालूम कर सकता है, जोकि उस घोल के सारे कैलशियम लवण को तोड़ने के लिये चाहिए। एक ही घोल कई बार प्रयोग करने में खाल के घुले हुए पदार्थ, जो घोल में आ जाते हैं, चूना दूर करने में मदद करते हैं।

देखने में वो यह तरकीब भली मालूम होती है कि वही अम्ल बार-बार छुड़ाकर कितने ही बार प्रयोग किये जा सकते हैं। परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि कैलशियम सल्फेट या आक्ज़लेट, जो हौदे में बन जाते हैं, चूने के उस लवण को जो खाल में बनता है बाहर निकलने से रोकते हैं। इसलिये इस तरह भी तीन-चार बार से अधिक उस अम्ल को प्रयोग न करना चाहिए।

इन अम्लों से खाल जो फूलने लगती है, उस फूलन को रोकने के लिये घोल में नमक दे देना काफ़ी होता है। ज्यादातर इन अम्लों के लवण भी नमक का-सा काम करते हैं। जैसे फारमिक एसिड के इस्तेमाल

में उसकी फूलन को कैलशियम फारमेट रोकता है। इस तरह अम्ल की चूना दूर करने की ताक़त नहीं घटती। यदि किसी समय अधिक अम्ल पड़ जाने से खालें फूलने लगें, तो फ़ौरन् नमक दे देना चाहिए। ऐसी खालों को पकाने के घोल में डालने से पहले या तो उस पकानेवाले घोल में नमक डाल देना चाहिए या खालों के इस अम्ल को अमोनिया, सोडा आदि से बेकाम कर देना चाहिए, वरना खालें फूल उठेंगी और चमड़ा कमज़ोर तैयार होगा।

सल्फ़्यूरिक एसिड के बदले सोडियम बाईसल्फेट (Sodium Bisulphate) प्रयोग हो सकता है। इससे चूना दूर होगा। इसका असर बहुत हल्का होता है। पर इसमें नाइट्रिक एसिड मिला हुआ न होना चाहिए।

कुछ शिथिल लवण (Neutral or Normal Salts) भी चूना दूर करने में प्रयोग हो सकते हैं। १. सोडियम और अमोनिया के फासफेट और आक्ज़लेट (Sodium or Ammonium Phosphates or Oxalates) इनसे चूने का कैलशियम फासफेट या आक्ज़लेट बनता है। २. ज़िन्क सल्फेट (Zinc Sulphate) इससे चूना कैलशियम सल्फेट बन जाता है। ३. फिटकिरी (Alum) भी इसी प्रकार चूने को कैलशियम सल्फेट के रूप में दूर करती है। इससे चमड़ा पक भी जाता है। ४. अमोनिया सल्फेट (Ammonium Sulphate) से भी चूने का कैलशियम सल्फेट बनता है। यह तले के लिये अच्छा होता है। ५. अमोनियम क्लोराइड (Ammonium Chloride) नौसादर इससे चूने का कैलशियम क्लोराइड बनता है। यह घुलनशील होता है। साथ ही इसका जो अमोनिया बनता है, वह खाल को फुलाता नहीं और आसानी से निकल जाता है। J. T. Wood (उड) की राय है कि अमोनियम क्लोराइड घोल में ०.७ से १.० ग्राम फी लिटर (दस हज़ार हिस्से पानी

में ७ से १० हिस्सा) से अधिक न होना चाहिए वरना खालें उसमें चमड़ा-सी (Leathery) हो जाती हैं और ठीक नहीं गिरतीं यह पेन्क्र्याटिक बेट्स (Pancreatic Bates) के साथ सदा प्रयोग होता है क्योंकि चूना दूर करने के सिवाय यह ट्रिपसिन (Trypsin) के काम करने के लिये जरूरी है। अधिक अम्ल पड़ जाने से जो खराब होने का डर रहता है, वह इन शिथिल लवणों के प्रयोग से नहीं रहता। यदि यह कुछ अधिक भी पड़ जायँ, तो कोई हानि नहीं होती। प्राक्टर (Proctor) ने एक मसाला बताया है, जो उनके यहाँ जीन पर अच्छा काम दे चुका है। इसमें ½ पाउंड अच्छा सफ़ेद अमोनियम क्लोराइड और ½ पाउंड बोक का सोडियम मिटाबाईसल्फ़ाइट (Boake's Metabisulphite of Soda) फ़ी खाल लेना होता है। आगे की गठरियों के लिये अमोनिया को शिथिल करने को सल्फ्युरिक एसिड तथा थोड़े-थोड़े से यह दोनों लवण उस कमी को पूरा करने के लिये, जो कि इनके खाल के साथ चले जाने से होती है, चाहिएँ। तले के लिये भी यह विधि अच्छी होगी, क्योंकि इससे गिरावट बिना चूना पूरा-पूरा निकल जाता है। यदि अमोनियम क्लोराइड के बदले अमोनियम सल्फेट इस्तेमाल किया जाय तो फूलन और भी अधिक अच्छी होगी।

गर्म पानी में गिरावट अधिक होती है, तो भी ३५° (Centigrade सेन्टीग्रेड) शतांश से, अधिक गर्म पानी न प्रयोग करना चाहिए, वरना खालें ख़राब हो जायँगी। शुरू में ठंढा पानी इस्तेमाल करना चाहिए, जब चूना निकल जाय तब ३५° तक का गर्म पानी लगाया जावे। चूना लगी खालें (limed hides) २८° सेन्टीग्रेड से अधिक गर्मी नहीं सह सकतीं। खालें कितनी गर्मी सह सकती हैं, यह नीचे लिखे हुए से पता चलेगा—

चूने की खाल २७-२८° श (27-28° C)

खाल की वस्तु (Hide Substance) ४०° श०

फिटकिरी से पकाया हुआ चमड़ा ५०° श०

बक्कल (Barktanned) से पकाया हुआ चमड़ा ७१° श०

तेल	,,	,,	,,	८४-८५°	श०
क्रोम	,,	,,	,,	१०६°	,,
एलडी हाइड	,,	,,	,,	२२२°	,,

यह वह ताप-मात्रा (Temperature) दी हैं जिनसे अधिक ताप खालें नहीं सह सकतीं।

एक पेटेन्ट में कारबोनिक एसिड (Carbonic Acid) चूना दूर करने के लिये बताया गया है। ऐरोमैटिक धारा (Aromatic Series) के कई अम्ल, जिनसे चूना दूर किया जा चुका है, ये हैं। साथ ही यह कीटाणुओं (Bacteria) के आने को रोकनेवाले एन्टीसेप्टिक (Antiseptic) हैं। पहला, फीनाल (Phenal)—यह गाढ़े रंगत का न होना चाहिए—और खालें डालने से पहले पानी में ठीक-ठीक घुल जाना चाहिए। यदि यह बे-घुला रह जायगा, तो खालों को पका देगा और तैयार होने पर चमड़ा धब्बेदार होगा। इसको सल्फ्यूरिक एसिड से इसके कैलशियम लवण से छुटाकर कई बार इस्तेमाल कर सकते हैं। १ % (एक फ़ी सैकड़ा) बहुत काफ़ी होता है। दूसरा, क्रिसाटिनिक एसिड (Cresotinic Acid) है। आठ भाग पानी में एक भाग घुलता है। यह खालों को फुलाकर सख्त कर देता है। तीसरा, अक्सीनेफ्थाइक एसिड (Oxynaphthoic Acid)। इसका एक हिस्सा पानी के तीस हज़ार हिस्से में घुलता है। चौथा, नैफथलीन के आल्फा और बीटा मानो, और डाईसलफानिक एसिड (*A* & *B*, mono & di-sulphonic Acid of Naphthalene) को मिलाकर भी प्रयोग करते हैं।

पाँचवाँ, क्रिसाल सलफानिक एसिड (Cresol Sulphonic Acids)। इन अम्लों को चोकर, प्योरिङ्ग और बेटिङ्ग के बाद प्रयोग करना चाहिए ; पहले नहीं। क्योंकि यह कीटाणुओं के आगमन को रोकनेवाले (Antiseptics) हैं।

इस प्रकार चूना निकाल देने से एक बात खालों में और मिलेगी। वह यह है कि जहाँ चूने की खाल फूली और तनी हुई दृढ़ है, वहाँ अब वह बात नहीं। वहाँ अब नर्मी है। इतनी नर्मी तले आदि के चमड़े के लिये काफ़ी है। यह नर्म चमड़ों के लिये नहीं। यह पानी से संपृक्त (Saturated) हैं। गर्म पानी से गिरावट कुछ अधिक हो जाती है पर तब भी नर्म चमड़ों के योग्य नहीं ; अधिक गिराने के लिये आगे की तीन विधियों से काम लेते हैं। जब खालें गिरती हैं, अर्थात् उसमें फूलन और ठोसपन (Swelling and Plumpness) नहीं रहती, उसके रेशे जो सरेस (Galatine) के से हैं, अपना पानी छोड़ देते हैं। वह पानी खाल ही में रहता है, बाहर नहीं निकल जाता। क्योंकि ज्यों-ज्यों रेशे सिकुड़ते हैं, उनके बीच की जगह बढ़ जाती है और पानी से भर जाती है। अंतर यह हुआ कि फूली ठोस दशा में पानी रेशों के अंदर होता है जिससे दबाने से भी नहीं निकलता और गिरी दशा में रेशों के बीच में होता है। इसी कारण दबाने से निकल आता है।

ड्रेन्चिङ्ग (Drenching) चोकर में देना—इस प्रयोग में खालों को चोकर के काढ़े या जुशाँदे (Infusion) में डालते हैं। प्रायः खालों की तौल पर ५ % से १० % तक चोकर लेते हैं। घोल में ०.४ से १ % तक चोकर होता है। ताप दस डिगरी श० (10e C) से ३५° श० (35°c) तक की दी जाती है। जैसे ताप पर चोकर बनाया जाय वैसा ही समय लगता है। यह खालों की मोटाई आदि पर भी निर्भर है। चोकर का काढ़ा बनाने को कई विधि हैं। प्रायः ३४ श०

(६५° फ़० Fahrenheit) के पानी में चोकर को डालकर पैडिल में चलाते हैं। जामुन (enzyme ferment) डालने की कोई जरूरत नहीं, क्योंकि चोकर पैडिल ही में लगा रहता है और खमीर उठा देता है। खमीर उठने पर बहुत-सी हवाएँ भी निकलती हैं, जो खासकर हाइड्रोजन (Hydrogen), कुछ नाइट्रोजन (Nitrogen) और कार्बन डाइअक-साइड (Carbon Dioxide) हैं। यह हवाएँ खाल के अंदर और घोल में पैदा होती हैं। खाल के अंदर होने से खालें उतराने लगती हैं। उन्हें डंडे से दबाना पड़ता है। इस उतराने से पता चलता है कि चोकर (ड्रेन्च drench) काम कर रहा है। जब खालें दो-तीन दफ़े उठ लेती हैं, तो समझ लेते हैं कि काफ़ी असर हो गया है और उनको निकाल लेते हैं। यदि और देर तक चोकर में पड़ी रहें, तो खाल के अंदर छोटे-छोटे छाले पड़ जाते हैं; और इनमें जो हवा होती है, यह दाने में छेद कर देती है। ऐसी दशा होने पर तो फ़ौरन् निकाल लेना चाहिए अथवा छेद हो जायँगे।

पूरी तरह चोकर लग जाने की पहचान यह है—(१) खाल की तह में हवा को रोककर दबाने से दाना उठ आवेगा, पर खाल से अलग न होगा। (२) हाथ में चाहे जैसे लेने से वह दबी हुई तह में पड़ जायगी। (३) पतली खाल को उँगली या हाथ पर तानने से नीचे के चोकर के दाने दिखाई पड़ते हैं और खाल हाथ से चिपटी रहती है। (४) खाल पारदर्शक नीली-सी न होनी चाहिए बल्कि नर्म और दूध-सी सफ़ेद हो। (५) अँगुली से दबाने से उस पर निशान बन जाना चाहिए। काफी चोकर लगाना—भिन्न-भिन्न प्रकार की खालों के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के चमड़े बनाने के लिये भिन्न-भिन्न हद तक होता है। और जान-कार को खाल की सूरत से और उसको छूने से इस बात का ठीक-ठीक पता चल जाता है।

चोकर देने की दूसरी विधि—गर्म पानी में चोकर डालकर जब चोकर बैठ जाय पानी निकाल लेते हैं। इस मामूली गर्म चोकर के पानी में खालों को डाल देते हैं; दो-तीन घंटे बाद ही निकाल लेते हैं, अर्थात् ख़मीर (Fermentation) उठने से पहले ही निकाल लेते हैं। यह सिर्फ़ उन खालों के लिये हैं जो वैसे ही नर्म और पतली हैं, जिनको और ढीला नहीं करना है। इस विधि से चोकर खाल को नहीं चिपकने पाता और चोकर छुटाने की मेहनत बच जाती है। यह सादा पानी कितना काम करता है नहीं कह सकते; हाँ, ख़मीर उठने के बाद का काम ठीक दे सकता है। उन मेमने की खालों के लिये जो दस्ताने के चमड़े (Glove Leather) के लिये बनाई जाती हैं, यह बहुधा प्रयोग होता है। यदि चोकर पानी में रखा जाये, तो खाल साफ़ अच्छी होती है। इस चोकर को मीठा चोकर (Sweet Drench) कहते हैं।

तीसरी विधि—चोकर को कई घंटे तक ठंढे पानी में भीगने देते हैं। और फिर उसमें खौलता पानी डालते हैं कि ७५° (75 Centigrade) का ताप हो जाय। फिर कुछ घंटे उसे वैसे ही पड़े रहने देते हैं; कभी-कभी हिला देते हैं। जब ४५° तक ठंढा हो जाय, उसमें पुराने चोकर का पानी जामुन की तौर पर देते हैं। यदि गर्म प्रयोग करना हो (३०° से ३५° श० तक; जाड़े में ४०° तक) तो खालें उसमें दो-तीन घंटे तक रहती हैं; ठंढा प्रयोग करने में दो-तीन दिन तक उसमें रह सकती हैं; पर कई बार हिला देना होता है। बकरी आदि की सख्त खालों के लिये इसको ठंढा प्रयोग करना अच्छा होता है। मेमने आदि की खाल के लिये गर्म चोकर देते हैं। साधारण चोकर (Normal Drench) में खालें कुछ फूली और ठोस (Plump) हो जाती हैं, यदि उसमें सड़ानेवाले जामुन हों, जो बेट्स (Bates) से आ जाते हैं, तो खालें उसमें गिरने लगती हैं।

हम अभी यह बता चुके हैं कि चोकर में ख़मीर (Fermentation) उठता है। अब यह देखना है कि यह किस प्रकार होता है। जे. टी. उड (J. T. Wood) ने इस विषय में बहुत खोज किया है तथा इस पर एक पुस्तक भी लिखी है, जिसका नाम ड्रेंचिङ्ग, बेटिंग और प्योरिङ्ग (Drenching, Bating and Puering) है। उनकी राय है कि यह ख़मीर दो प्रकार के कीटाणुओं से होता है, जिनको कि वह बैक्टीरिया फ़रफ़्युरिस अ, ब (Bacteria furfuris *A* and *B*) कहते हैं। इन दोनों के साथ होने से काम अच्छा होता है। चोकर में सीरियलिन-नामक (Cerealin) एक जामुन है जो स्टार्च (Starch) को ग्ल्युकोज़ (Glucose) में परिवर्तित कर देती है। इन कीटाणुओं के जामुन इसी ग्ल्युकोज़ को फाड़कर अम्ल और हवाएँ बना देते हैं। अम्लों में लैक्टिक एसेटिक और थोड़ा-सा फ़ारमिक और ब्युटायरिक एसिड होता है। हवाओं में हाइड्रोजन, कार्बन डाइआक्साइड, नाइट्रोजन और कुछ हाइड्रोजन सल्फ़ाइड होती है। कुछ अमीन्स (Amines) भी होते हैं। ख़मीर उठे हुए चोकर में फ़ी लिटर १.३ ग्राम अम्ल होते हैं। १ ग्राम लैक्टिक एसिड और ०.५ ग्राम तेज़ एसेटिक एसिड (Glacial ग्लेशियल) फ़ी लिटर में लेने से चोकर का-सा काम निकल आता है। ऐसे घोल में डेढ़-दो घंटा काफ़ी होता है जब कि चोकर में १५-१६ घंटे लगते हैं। एक चोकर में फ़ी लिटर अम्ल इस प्रकार थे—फारमिक एसिड ०.०३०६ ग्राम, एसेटिक एसिड ०.२४०२ ग्राम, लैक्टिक एसिड ०.७६०७ ग्राम और ब्युटायरिक एसिड ०.०१३४ ग्राम। कुल अम्ल (Acid) १.०७४६ ग्राम फ़ी लिटर (Litre)।

उड (Wood) के जाँचे हुए ये दोनों कीटाणु खाल के पदार्थ को कोई हानि नहीं करते। पर कभी-कभी खालें चोकर में बिल्कुल ख़राब हो जाती हैं। वे बड़ी तेज़ी से फूलने लगती हैं। उनमें से आर-पार दिखाई

देने लगता है और अन्त में वे घुलकर जेली (Jelly) हो जाती हैं। यदि ऐसा होने लगे, तो फ़ौरन् रोकने के लिये या तो उसमें नमक डाल दो या निकालकर और पानी में डालकर सोडे, अमोनिया, या खड़िया से अम्ल (Acid) को शिथिल कर दो। ऐसी फूली दशा में पकाने से कमज़ोर रद्दी चमड़ा बनता है। यह ख़राबी प्रायः गर्मी में वायु के फेर से हो जाती है जब कि हानिकारक कीटाणुओं को उसमें पैदा होने का सुभीता हो जाता है या जबकि बेट्स में के सड़ानेवाले या सरेस को पानी करनेवाले कीटाणु (Gelatine liquifying Bacteria) उसमें आ जाते हैं। ३५° श० तक की गर्मी से कोई डर नहीं होता। जहाँ इसका डर हो चोकर को दो-तीन बार धोकर उसमें से उसका स्टार्च निकाल देना चाहिए और तब गर्म पानी में उस चोकर को बनाना चाहिए। स्टार्च के न होने से ये कीटाणु पैदा न हो सकेंगे। अतः कोई हानि न होगी। पर चोकर में ख़मीर उठने के लिये स्टार्च आवश्यक है, क्योंकि चोकर के कीटाणु इसीसे तो अम्ल बनाते हैं; ठंढे में जहाँ ऐसे हानिकारक ख़मीर उठने का कोई डर नहीं होता, चोकर में ऊपर तक से आटा मिलाते हैं।

कहते हैं कि चोकर में यदि सोडियम नाइट्रेट दे दें, तो अच्छा होता है। उड (J. T. Wood) की राय है कि चोकर के कीटाणु चोकर में पैदा नहीं होते बल्कि बेट की हुई (Bated) खालों के साथ आते हैं। बेटिङ्ग या प्योरिङ्ग के बाद खालों को साफ़ करने या उनमें से बचा हुआ चूना दूर करने और कुछ ठोस (Plump) करने के लिये भी चोकर का प्रयोग करते हैं। काफ़-किड (Calf-kid) बनाने में प्योरिङ्ग से पहिले चोकर में देते हैं और कभी-कभी बेट्स के बजाय चोकर में ही देते हैं।

बेटिङ्ग और प्योरिङ्ग (Bating and Puering)।—जैसे चोकर का काढ़ा करके उससे खालों का चूना दूर करते हैं व उन्हें नर्म और साफ़ करते हैं, वैसे कुत्ते के विष्ठा के काढ़े से काम लेने को प्योरिंग, और

कबूतर, मुर्गी आदि की बीट के काढ़े से काम लेने को बेटिङ्ग कहते हैं। पर बोल-चाल में प्रायः रसायनिक विधि से चूना दूर करने को, चोकर को, प्योरिङ्ग को, और बेटिङ्ग—सब का बेटिङ्ग ही कहते हैं। बेटिङ्ग और प्योरिङ्ग के असर करने की विधि चोकर की विधि से बहुत ही पेचीदा है। इसमें बेकीटाणुवाले जामुन (No-bacterial enzymes) भी होते हैं, और खमीर उठानेवाले कीटाणुओं के जामुन (Bacterial enzymes) भी होते हैं; रसायनिक द्रव्य भी होते हैं। इनमें से किससे क्या काम होता है, यह अभी तक ठीक खोज नहीं हुआ है। पर तो भी उड, पाप (Popp) और बेकर (Becker) के काम से बहुत कुछ पता लगता है कि इन विष्ठा, बीट आदि का असर किस प्रकार होता है। यद्यपि बेटिङ्ग और प्योरिङ्ग दोनों के काम करने का आधार एकसा ही है पर चीजें दोनों में एकसी नहीं हैं; न असर, न प्रयोग ही एकसा है।

बीट का असर बहुत अन्दर तक पहुँचनेवाला, पर कम नर्म करनेवाला और कम खोलनेवाला होता है। विष्ठा का बहुत नर्म करनेवाला और बहुत खोलनेवाला तेज असर होता है। बीट ठंढी प्रयोग की जाती है गो गर्म प्रयोग करने से असर तेज होता है। इसका ताप २५°श० से अधिक न होना चाहिए। इसी से इसका असर धीरे-धीरे होता है। विष्ठा सदा गर्म प्रयोग होता है; उसके कीटाणु शरीर की गर्मी के ताप पर काम करते हैं। इसी से इसका असर समय के लिहाज से तेज और जल्द होता है। इसी लिये बेटिङ्ग मोटी-मोटी खालों के लिये प्रयोग होता है, जिससे वे सारे में एकसी गिरती हैं, गो ऐसी नहीं गिरतीं जैसी कि पतली खालें प्योरिङ्ग में गिरती हैं। यदि प्योरिङ्ग भारी खालों पर किया जाय तो अन्दर तक असर पहुँचने के पहिले ही सतह नष्ट हो जायगी।

बीट को हवा में सुखाकर या लेई की दशा में रखने से वह ठीक रहती है। सौ सेर कच्ची खाल के लिये १½ सेर से ६ सेर तक बीट

को २०० सेर पानी में घोलकर प्रयोग करते हैं। हर प्रयोगकर्ता की मिक़दार भिन्न-भिन्न होती है। ठंढी बीट में खालें ४ से ८ दिन तक पड़ी रहती हैं और बीच-बीच में हिला दी जाती हैं। यूनाइटेड स्टेट्स (United States) में कुछ चर्मकार इसको ३५° श० पर ढोल में प्रयोग करते हैं जिससे उन्हें चन्द घंटे ही लगते हैं। प्रयोग में लाने से पहले बीट को अलग बर्तन में गर्म पानी के साथ भिगो देते हैं और उसमें सात दिन तक खमीर उठने देते हैं। इस अर्से में उसमें माईक्रोकोकस कीटाणुओं (Micrococcus Bacteria) की चेन-सी बन जाती है। इसके बाद साफ़ निथरा पानी अलग करके प्रयोग में लाना चाहिए। धूल आदि न आने देना चहिए। ऐसा करने से धब्बे आदि का डर नहीं रहता। प्रयोग किये हुये घोल में थोड़ा-सा नया घोल डालकर कई बार एक ही घोल को प्रयोग करते हैं। परन्तु बहुत दिन तक ऐसा नहीं करना चाहिए, वरना खमीर के और बढ़ने से तथा खाल के घुले हुए पदार्थों के आने से उसके घोलने की शक्ति बढ़ जायगी और हानि का डर रहेगा। काफ़ी बेटिङ्ग हो चुकने की पहचान का तरीक़ा बता देना कठिन है। जानकार हाथ से छूकर आसानी से जान लेते हैं कि गिरावट व नर्मी कितनी है। अधिक बेटिङ्ग हो जाने की सब से पहिली पहिचान जो है वह ऊदे से रङ्ग के धब्बों का होना है, जो बढ़ते-बढ़ते सारे में फैल जाते हैं। हवा से जीनेवाले (Aerobic) कीटाणु कुछ ऐसे हैं जो हवा से बेट्स में पैदा हो जाते हैं और हानि करते हैं; नाइट्रोजन बहुत कम हो जाती है। इसलिये कहते हैं कि बेटिङ्ग ढकी हुई चीजों में करना चाहिये।

प्योरिङ्ग (Puering) कुत्तों की विष्ठा केनल (Kennel) से जहाँ कुत्ते रक्खे जाते हैं अच्छी मिलती है। हलके रंग का सूखा हुआ विष्ठा जो ताजा हो लेना चाहिए। खराब हो जाने पर उसकी रंगत काली-सी पड़ जाती है; ऐसा विष्ठा न लेना चाहिए। विष्ठा को हवा में कभी

न छोड़ना चाहिये, ख़ासकर भीगी अवस्था में; वर्ना यह सड़कर बेकार हो जाती है, और फिर खालें उसमें सड़ने लगती हैं। पानी के साथ लेई बनाकर रखने से बहुत समय तक रक्खी रह सकती है। प्रयोग में लाने से पहिले विष्ठा में एक हफ़्ता तक ख़मीर उठने देना चाहिये। विष्ठा की अच्छी लेई की रंगत भूरी-सी हो जाती है। खाल की भीगी तौल पर क़रीब १०% लेई लेकर उसे ११०°-१२०° फारनहीट के गर्म पानी में डालते हैं। पानी इतना होना चाहिए कि उसमें गदलापन आ जाय, वह शोर्वा-सा न रहे। जब ठंढा होकर १००° फ़ा० या ६०°श० ताप रहे, तब इतनी ही गर्मी के पानी में खालों को गर्म कर इस प्योर (Puer) के घोल में डालते हैं। खालों का गर्म इसलिए करते हैं कि घोल ठंढा न हो जाय। १-२ घंटा ऐसे घोल में काफ़ी होता है। बेटिङ्ग और प्योरिङ्ग खारी घोल में अच्छे होते हैं। इसलिये चूने की खालों को सिर्फ़ बहते पानी में दो एक घंटे धोकर प्योर में डाल देना चाहिए। ये प्रयोग लकड़ी के बासन में, जिनमें लोहा न हो, करने चाहिएँ। खालें डालने से पहिले प्योर के पतले घोल को बोरे में छान लेना चाहिए। लगातार प्योर में चलाये जाना ठीक नहीं; परन्तु खालों का घोल में यों ही छोड़ देना भी ठीक नहीं है क्योंकि गाद तहों में बैठ जाती है। उसमें कीटाणु होते हैं और वे दाने में काटकर नक़शे, धारियाँ बना देते हैं। काले, नीले से जो धब्बे प्योर में खालों पर पड़ जाते हैं वे या तो कीटाणुओं की रंगत के कारण होते हैं या हाइड्रोजन सल्फाइड (Hydrogen Sulphide) और लोहे के सम्मेलन के होते हैं। लोहा नमक आदि कहीं से भी खाल पर आ जाय, तो यह हाल हो जाता है। इसलिये हिलाते रहना ज़रूरी है और ख़ासकर जब कि अधिक ताप पर प्योरिङ्ग किया जाय, क्योंकि तब असर तीव्र हो जाता है। लगातार हिलाते रहने से दाना कमज़ोर हो जाता है। इसलिये पैडिल में इस प्रयोग को करना चाहिए,

और ठहर-ठहर कर हिलाना चाहिए। पहिले २०-३० मिनट हिलाकर, फिर ५-६ घंटे तक हर घंटे में १० मिनट हिला देना चाहिए। इसके बाद बहुत समय तक विना हानि के पड़ी रह सकती हैं। जब खालें बिल्कुल नर्म ढीली मालूम हों, चाहे जिस तरफ़ से तह में डालने से वैसे ही पड़ी रहें और जब नाखून से गोश्त छिल सके तब समझना चाहिए कि प्योरिङ्ग काफ़ी हो गया है। दाना अब नर्म चपटा-सा हो जाता है। उड (Wood) की राय है कि भेड़ की खाल के लिये विष्ठा में एक महीने तक ख़मीर उठने देना चाहिए। तीन महीने के बाद वह रद्दी हो जाता है।

प्योरिङ्ग से चूना छोटे बाल और तेल के ग्लैन्ड्स ही नहीं निकल जाते बल्कि इलासटिन के रेशे भी, जो दाने की तह में होते हैं और खाल को खिंचने से रोकते हैं, निकल जाते हैं। साथ ही कुछ जोड़नेवाले पदार्थ भी घुलकर निकल जाते हैं। जोड़नेवाले पदार्थ के घुलकर निकल जाने से बिनावट ढीली होकर नर्म चमड़ा तैयार होता है।

विष्ठा और बीट के इतना गन्दा होने तथा उनसे चमड़ों के बिगड़ने की इतनी सम्भावना ने कुछ विज्ञानियों (साइन्टिस्ट) का ध्यान अपनी ओर किया। उन्होंने इस बात के मालूम करने का प्रयत्न किया कि इन वस्तुओं के कार्य करने का आधार क्या है। विश्लेषणों (Analyses) तथा और रसायनिक चालों से उन्होंने बहुत कुछ बातें मालूम की हैं। सारांश यह है कि प्योर (Puer) में काम करनेवाली चीज़ कीटाणुओं से पैदा हुए जामुन (Bacterial enzymes) तथा अमाइनों के लवण (Amino Salts) हैं। इन आधारों पर बहुत से ऐसे पदार्थ बन गए हैं, जिनको इनके बजाय प्रयोग किया जाता है। इनको बनावटी बेट्स (Artificial Bates) कहते हैं।

इँगलैन्ड में उड (Wood) और जर्मनी में पाप और बेकर खोज करते हुए एक ही नतीजे पर पहुँचे ; और दोनों ने मिलकर एक पेटेन्ट

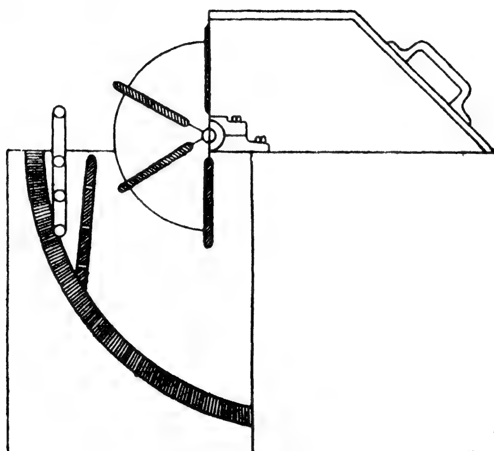
लिया और इरोडोन नामी एक वस्तु तैयार की जो विष्टा के बजाय प्रयोग की जा सकती है। ऐसी वस्तु को बनावटी बेट (Artificial Bate) कहते हैं। इरोडीन में एक ठोस भोज्य पदार्थ है जिसमें परिवर्तित सरेस (Peptonised Gelatine) और कुछ फासफेट्स (Phosphates) हैं दूसरो द्रव है जिसमें कि खास कीटाणु हैं। पहिले पदार्थ को जल में घोलकर ठीक ताप पर वे कीटाणु उसमें छोड़ दिये जाते हैं और खमीर उठने दिया जाता है। खमीर उठने पर उसमें खालें डालो जाती हैं। बछेले के लिये यह बेट अच्छी पाई गई है, क्योंकि इसमें न तो डर है और न धब्बे पड़ते हैं। भेड़ी और बकरी की खाल पर इसका असर अच्छा नहीं होता। इसमें बदबू भी आती है। अब यह बहुत कम इस्तेमाल होती है, क्योंकि अब इससे भी और अच्छे बेट्स बन गए हैं।

उड के ट्रिप्सिन (Trypsin) और पैन्क्रियाटिन (Pancreatin) के गुणों की मालूमात पर डाक्टर राहम (Röhm) ने जर्मनी में एक पेटेन्ट लेकर ओरोपान (Oropon) नामी एक बेट निकाला, जिसमें उन्होंने पेन्क्रियास (Pancreas) का जामुन और नौसादर डाला है।

आजकल प्रायः पैन्क्रियाल (Pancreol) नामी बनावटी बेट प्रयोग होता है। यह कुछ बदली शक्ल में औरोपान ही है। यह सब प्रकार के चमड़ों के लिए अच्छा साबित हुआ है। यह दो-तीन प्रकार का मिलता है। भेड़ी बकरी के लिए दूसरा और गौ की खाल के लिए दूसरा। इसमें कोई बदबू नहीं है और इससे कोई खतरा नहीं है। जाँचें हो रही हैं, आशा है कि कुछ काल में विष्ठा का प्रयोग बिल्कुल ही बन्द हो जायगा क्योंकि विष्ठा का काम बिल्कुल कीटाणुओं पर निर्भर है; कभी-कभी हानिकारक कीटाणु पैदा हो जाते हैं और हानि करते हैं— इनका प्रयोग बड़े ही खतरे का है। इसलिए इनके प्रयोग में काफ़ी अनुभव चाहिए। यह बड़ा गन्दा और नफ़रत पैदा करनेवाला (Dis-

gusting) काम है। इसमें बदबू भी आती है, जो हाथ और कपड़ों से बुरी तरह चिपट जाती है, गो हानिकारक नहीं है। उड (Wood) से पहले, इनका सा असर लानेवाला बिना ख़तरे का कोई तरीक़ा नहीं था। उड की इन जाँचों पर अब बहुत से ऐसे पदार्थ बन गए हैं जो अच्छे हैं और ज्यादातर प्रयोग होते हैं, उनके नाम ऊपर दिये हैं। बहुत से बेट तो व्यर्थ नामधारी बेट हैं, जिनका असर बेट का-सा नहीं होता।

बीट और विष्ठा में फ़र्क़ यह पड़ता है कि एक तो इनमें कीटाणु दूसरे होते हैं। दूसरे बीट में पेशाब की चीज़ें यूरिक एसिड (Uric Acid) आदि भी मिले होते हैं।



चित्र १ (पैडिल)

पैन्क्रियाल के प्रयोग की विधि—इस प्रयोग को पैडिल या ढोल में करते हैं। पैडिल का आकार चि० १२ से विदित होगा। यह लकड़ी की एक सन्दूक़ सी है, जो लगभग ८′ × ४′ × ३′ है। इसकी तली

गोल है। लम्बान में आधी चौड़ाई पर एक पंखा-सा लगा है जिसकी कीरी चौखटे के ऊपर लगी है। इस पंखे में फले हैं: पंखे में एक पुली (Pulley) लगी है, जो बैल्ट से घूमती है। इसके चलने से पंखा कीरी पर घूमता है। काम करते में इसका नीचे का आधा हिस्सा घोल में डूबा रहता है। इसलिये पंखे के घूमने पर घोल में लहरें उठती हैं। इन लहरों के कारण खालें भी घूमती रहती हैं। सतह पर वे पंखे की तरफ़ जाती हैं; और नीचे पंखे की तरफ़ से सामने को आती हैं। सामने को तरफ़ ऊपर सतह के पास एक ख़ाना बना रहता है, जो २ इंच गहरा और २-३ इंच चौड़ा होता है। इसकी तली में लम्बान भर में छेद होते हैं। इस ख़ाने में मसाला डालने से मसाला सारे में ठीक-ठीक फैल जाता है। सीधा खाल पर नहीं पड़ने पाता। इसी तरह देखने के लिए किसी में थर्मामीटर लगाने का भी प्रबन्ध होता है। गर्म करने के लिए पंखे के पीछे खुली और कुछ बन्द नलियें होती हैं। खुली नली से घोल में भाप छोड़ी जा सकती है। बन्द नली में भाप देने से घोल में भाप बिना दिये घोल गर्म हो जाता है। ये नल एक छेददार ढकन से ढके रहते हैं, जिससे खालें उनको न छू पाएँ।

पहले चूने की खालों को नर्म बदलते हुए पानी में घंटा भर धोते हैं या धीमे चेतन अम्ल (Organic Acid) से चूने को कुछ घटा देते हैं। धुलने के बाद पैडिल में भाप देकर ताप ३५° श० तक कर देते हैं। चूने की तौल पर ०·५ % (१०० सेर चूना लगी खालों पर आध सेर) पैन्क्रियाल गर्म पानी में घोलते हैं। चलती पैडिल में, जिसमें खालें हैं और जिसका ताप ३५° श० है, आधा घोल डाल देते हैं। १५ मिनट चलने के बाद १५ मिनट ठहरा रहने देते हैं, फिर बाक़ी घोल डाल १५ मिनट चलाकर १५ मिनट ठहरा देते हैं। फिर जब तक कि पूरी बेट न हो जाय, हर घंटे में १५ मिनट चला देते हैं। पैनक्रियाल को खौलते पानी में न घोलना चाहिए वर्ना वह बेकार हो जायगी।

एक दूसरी विधि में खालों को पहिले पिछली गठरी पर प्रयोग किये घोल के आधे घोल में आधा पानी मिला ३५° श० पर १५ मिनट चलाते हैं। इसके बाद दूसरे आधे हिस्से में आधा पानी मिला और ०.५ से ०.७५ फीसदी पैनक्रियाल डाल ३५° श० पर खालें २० मिनट चलाते हैं। ४० मिनट ठहरकर हर घंटे में १५ मिनट चलाते हैं जब तक ठीक बेट न हो जाय। १ घंटा से ४ घंटे तक काफी होता है।

इसके बाद खालों को बीम पर डाल दोनों तरफ़ से उन पर छुरी लगा देते हैं, अर्थात् कुन्द छुरी से रगड़ देते हैं और साफ़ पानी से धो डालते हैं। इसे छुरी लगाना स्कडिंग (Skudding) कहते हैं।

छोटे २ बालों व रङ्ग (Pigment) को छोटी छुरी (Butcher's knife) से रगड़कर निकाल देते हैं। साथ ही अन्दर का बेकार मसाला जिसमें साबुन, बेट, बाल, आदिपोज़ तन्तु के सेल (Adipose tissue cells) आदि होते हैं दबने से निकल जाता है।

तरह २ के चमड़ों के बनाने में चूना दूर करने के तरीक़े:—तले के चमड़े के पुट्ठे (Sole butts)—प्राचीन काल में वनस्पतियों से पकाने में बहुत समय लगता था इससे उसके घोलों में काफ़ी अम्ल होता था। सस्पेन्डर्स (Suspenders) में १०° तक चूने के पानी के बराबर अम्ल होता था, अब केवल ३°-५° चूनें के पानी के बराबर अम्ल होता है। तब चूना लगी खालों को इस काम के लिये बहते पानी में धो देना काफ़ी होता था और अब इसलिये बोरिक ऐसिड (१०-१५ पा० फी १०० पुट्ठों के लिये) या लैक्टिक एसिड (Lactic Acid १२ पा० फी १०० पुट्ठों के लिये) प्रयोग करते हैं। पानी नर्म (Soft) लेना चाहिये, वर्ना उसमें का भारीपन (Hardness) सल्फ्यूरिक एसिड (आवश्यकता से अधिक न हो) से दूर कर देना चाहिये। कन्धे और पेटी पर से भी अम्ल से या घोकर में देकर चूना

निकाल देते हैं। इन चीज़ों का सारा चूना न दूर करना चाहिये; सतह मात्र का निकाल देना काफ़ी है, क्योंकि फूली दशा में ही पकाने से अच्छा चमड़ा बन सकता है। क्रोम से पकाने में भी इतना ही चूना दूर करना ठीक है। चूना दूर करने के बाद छुरी हल्के से लगा देने से रंगत अच्छी बैठती है।

फीते के पुट्ठों (Strap butts) पर से भी आजकल प्रायः तले के पुट्ठों की तरह ही चूना दूर करते हैं, गो पहिले चन्द घंटे बेट करके फिर बोरिक एसिड में देते थे।

हारनेस (Harness) के लिये पहला तरीक़ा—रात भर ठंढ पानी में भिगोकर चोकर में डालते हैं। रात भर इसी में छोड़ दूसरे दिन छुरी लगाकर पकाने को भेजते हैं। दूसरा तरीक़ा—हल्की खालों को भिर्री-वाले ढोल में भर, हौदे में चोकर डाल, चन्द घंटे चलाते हैं। तीसरा तरीक़ा—१४ दिन तक चूना देते हैं और फिर फी १०० खालों के पीछे २५ सेर बोरिक एसिड के घोल में चूना दूर कर छुरी लगाते हैं। फिर धोकर छुरी लगाते हैं।

ड्रेसिङ्ग के चमड़ों (Dressing leathers) की खालों को २०°-२५° श० पर बेट करते हैं। तीन हौदों की विधि से तीन दिन तक बेट करते हैं। फिर छुरी लगा बोरिक एसिड में डाल उनका सारा चूना निकाल देते हैं। कोई विना बेट किए बोरिक एसिड के घोल में देते हैं। जिसमें १०० खाल प्रति १०-१५ सेर बोरिक एसिड होता है।

लैक्टिक एसिड (Lactic Acid) प्रयोग करने में चूने की खाल की तौल पर २% एसिड (अम्ल) देते हैं। ढोल में या तीन हौदों के चक्कर में खालों को डाल देते हैं। हर हौदे में कुल को तिहाई अम्ल देते हैं, और इतना पानी डालते हैं कि ०.०२% का घोल बन जाय। ८-१० घंटे हर हौदे में रखने के बाद ४-४ घंटे पानी में देते हैं। फिर हाथ से या

मशीन से छुरी लगाकर (स्कड कर) पकने को भेजते हैं। जहाँ चिकना दाना चाहिए वहाँ २-५ घंटे बोरिक एसिड के घोल में पैडिल में चलाते हैं। ई. आई. किप्स (E. I. Kips) की छिलाई और छुरी लगाने के बाद ३०° श० पर फ़ी १०० खाल पीछे दो पीपे बीट लेकर तीन से पाँच दिन तक बेट करते हैं। इसके बाद चूने की तौल पर ६% चोकर ले, उसमें चन्द घंटे रख, फिर छुरी लगा पकने को भेजते हैं। चोकर के बजाय कभी-कभी २% लैक्टिक एसिड के घोल में ३०°—३५° श० पर पैडिल में चलाते हैं।

क्रोम बाक्स साइड (Chrome Box Sides) के लिए पहिले फाँकों को २४° श० के पानी में पैडिल में धोते हैं। घंटे डेढ़ घंटे में जब सारा चूना निकल जाता है, तो ३५° श० तक गर्म कर आध घंटा उसमें चलाते हैं, फिर नया पानी ले उसमें (चूने की तौल पर ½% पैन्क्रियाल पानी में घोलते हैं) पैन्क्रियाल का घोल डालते हैं और ३५° श० पर ठहर-ठहरकर दो चार घंटे पैडिल में चलाते हैं।

विलोकाफ के लिए पहिले पानी से धोकर चूना दूर करते हैं, फिर ¾% बोरिक एसिड (चूने की तौल पर) या ½ अमोनियम क्लो-राइड के घोल में चलाकर चूना दूर करते हैं। दो हिस्सों में करके डालते हैं, और ३०°-३५° श० की गर्मी पर रखते हैं। जब चूने से रहित हो जायें, छुरी लगा, धोकर पिकिल (Pickle) करते हैं।

वनस्पति से पकाने के लिये किप्स की तरह बेठ करते हैं और फिर हल्का सा चोकर देते हैं।

जिल्दबन्दी के लिये बछेले अच्छी तरह बेट किये जाते हैं। ३०° श० पर पाँच दिन तक बेट करते हैं और ८-६% चोकर में चलाते हैं।

काफ़ किड (Calf-Kid) के लिये छिलाई के बाद चूने में खूब फुलाते हैं और धीरे-धीरे पानी बदल-बदलकर ही धोते हैं। पहिली

बार प्रयोग किया पानी भी थोड़ा सा नये में मिला लेते हैं जिससे भारीपन दूर हो जाय। फिर ३-४% के चोकर में देते हैं।

भेड़ों की खालें :—इनमें चर्बी बहुत होती है उसका दूर करना जरूरी है। चूने की खालों को हाइड्रालिक प्रेस (Hydraulic Press) में दबाने से चर्बी निकल जाती है। एकदम बहुत दबाने से खालें खराब हो जाती हैं। जो चर्बी अब भी बच रही हो, उसे बेटिङ्ग कर छुरी लगा के निकाल देते हैं।

स्काईवर (Skiver) बनाने के लिये चर्बी निकालने से पहिले उनको चीर लेते हैं। दाने की पट्टी को दबा के चर्बी निकाल ३०° श० पर बेट करते हैं। तीन घंटे बाद बीम पर डाल छुरी लगाते हैं; फिर २०° श० पर दो तीन दिन चोकर में देते हैं। गोश्त की पट्टी को फिर ताजे चूने में देते हैं और फिर चोकर में दे तेल से पका लेते हैं।

रोन्स (Roans) के लिये भी ऐसे ही चर्बी दूर कर, बेट कर, छुरी लगा रात भर १०% (१०० सेर पानी में १० सेर) चोकर में ३०°-३५° श० पर चलाते हैं, चोकर के बाद पकने में देते हैं।

रालर (Roller) के चमड़े के लिये अब भी विष्ठा प्रयोग करते हैं; गो कहीं २ बनावटी बेट या केवल अम्ल प्रयोग करते हैं। फिर चोकर में देते हैं।

बेजिल्स (Basils) के लिये दो दिन तक २५°-३°० श० पर लगातार हिलाते हुये बेट करते हैं। छुरी लगाने और चोकर में देने के बाद फिर छुरी लगाकर पकने को भेजते हैं। कभी २ बेटिङ्ग के बदले ४ हिस्से फारमिक एसिड और १ हिस्सा एसेटिक एसिड मिलाकर चूना दूर करते हैं। अम्ल इतना न प्रयोग करना चाहिये कि खालें फूल जायँ: सिर्फ आवश्यकतानुसार। उसके बाद फिर चोकर में देते हैं। रात भर चोकर में रखकर सुबह निकाल लेते हैं। धोकर और छुरी लगाकर पकने को भेज देते हैं।

क्रोम से पकाने के लिये ½-¾% पैनक्रियाल में ३०°-३५° श० पर दो तीन घंटे पैडिल में चलाते हैं।

दस्ताने का चमड़ा बनाने के लिये बकरी और भेड़ के बच्चों की खालों को चन्द घंटे १८°-२०° श० पर विष्ठा में चलाते हैं। २०० खालों के लिये ११½ बाल्टी विष्ठा काफ़ी होती है। इन खालों के लिये दो तीन घंटे काफ़ी होते हैं, पर भारी खालों को १४ घंटे तक विष्ठा में चलाते हैं। छुरी लगाने के लिये १-३ घंटे तक ३५° श० पर चोकर में देते हैं।

मड़ाको (Morocco) के लिये बकरी की खालों को २७°-३०° श० की विष्ठा में देते हैं और फिर छुरी लगाते और धोते हैं। फिर रात भर ३०°-३५° श० पर १०% चोकर में देते हैं। छुरी लगा पकने को भेजते हैं। ग्लासी किड के लिये ⅜% पैनक्रियाल ले, उसका तिहाई पैडिल में पानी में घोलते हैं। उसमें एक दो बाल्टी ख़मीर उठती विष्ठा मिला रात भर छोड़ देते हैं। दूसरे दिन उसका ताप ३५° श० कर भली प्रकार धुली हुई खालों को उसमें जब तक कि वे ठीक २ न गिर जायँ चलाते हैं। तब निकाल छुरी लगा पिकिल करते हैं।

एक विधि में खालों को पहिले गर्म पानी में धोते हैं। जब खालें गिरने लगें, उनको पानी में धो उनपर छुरी लगाते हैं। १½ सेर कैलिशियम क्लोराइड, ४ छटांक फारमिक एसिड और १ छ० एसेटिक एसिड पैडिल में घोलते हैं; और ३८° श० पर खालों को उसमें चलाते हैं। यह दस दर्जन खालों के लिये काफ़ी है। फिर पानी से धोकर पकने को भेजते हैं।

सील मछली (Seal) की खालों को ३५° श० पर खूब विष्ठा में चलाते हैं और फिर १% पैनक्रियाल के घोल में चलाते हैं। तीन घंटे चलाना काफ़ी होता है। फिर मशीन या हाथ से छुरी लगा (स्कड कर) रात भर २०° श० के चोकर के घोल में देते हैं।

सातवाँ अध्याय

पिकलिंग (PICKLING.)

चोकर में से निकलने के बाद खालें पकानेवाले घोल (Tanning Liquor) में डाली जाती हैं। पर क्रोम से पकाने में, वे क्रोम के पकानेवाले घोल में जाने से पहिले पिकिल कर ली जाती हैं। पिकिल की हुई खालें बिना पिकिल की हुई की अपेक्षा पकने पर अधिक नर्म निकलती हैं; साथ ही पिकिल करने से खाल के रेशे बिल्कुल अलग २ हो जाते हैं। वे खोखली (Porous) हो जाती हैं। ऐसी दशा में रेशे-रेशे अलग-अलग पक जाते हैं, और खाल में नर्मी आ जाती है। दूसरे पिकिल करने से पकाने में सहूलियत हो जाती है; इससे खालें आम्लिक (Acidic) दशा में आ जाती हैं। खाल को न्यूट्रल बाईक्रोमेट (Neutral Bichromate जिसमें न खार का न अम्ल का सा असर हो) के घोल में डालने से जो क्रोमिक एसिड (Chromic Acid) बनता है, वह खाल के अन्दर रेशों पर बनता है। ऐसे शिथिल घोल (Neutral Solution) का ऐसी खालों पर कोई बुरा असर नहीं होता। जब क्रोम के खारी घोल (Basic Chrome Liquors) से खालों को पकाते हैं, तो खाल में अम्ल होने से अधिक खारी (More basic) घोल शुरू से ही प्रयोग किये जा सकते हैं। और किसी प्रकार की हानि, जैसे दाने का कड़ा हो जाना (Case hardening), नहीं होने पाती।

पिकलिंग की विधि बहुत सरल है। चूने को तौल पर १०·२५% (१०० सेर खाल पर १०-२५ सेर) नमक (साँभर Common Salt) और १·५% गाढ़ा सल्फ़युरिक एसिड (Concentrated Sulphuric Acid) को १५०-२००% पानी में घोल उसमें खालें चला लेते हैं। इस प्रयोग को करने की अच्छी विधि यह है कि ढोल में पानी लेकर उसी में नमक घोल देते हैं, और जितना अम्ल लेना हो उसका आधा अम्ल डालकर सब को भली प्रकार मिलाते हैं। फिर उसमें शीघ्रता से खालें डाल देते हैं और ढोल को बन्द कर चला देते हैं। १० मिनट बाद बाक़ी अम्ल को लगभग १० गुणे जल में मिलाकर,चलते ढोल में खोखली नली (Hollow Axle) द्वारा डालते हैं। कुल घंटे भर ढोल चलने के बाद खालों को निकालकर घोड़ी (Horse) पर फैलाकर लगा देते हैं। ऐसी फैली दशा में थोड़ी देर पड़े रहने से मोड़न व धारियें दूर हो जाती हैं। यदि ये धारियें इस समय न निकाल दी जायँ तो पकाने पर स्थिर हो जाती हैं और बाद में नहीं निकलने पातीं। अब पकाने के घोल में जाने को तैयार हैं। इस अवस्था में यह खालें कितने ही दिन तक रक्खी रह सकती हैं।

चोकर लगी खालें (Delimed Pelts) बहुत समय तक नहीं रह सकतीं, चन्द घंटों में ही सड़ जायँगी। इनको ऐसी ही दशा में बहुत काल तक अच्छी तरह रखने के लिये यह पिकलिंग का प्रयोग चला था, पर अब ऊपर कही बदली हुई विधि से क्रोम से पकनेवाली खालें पिकिल की जाती हैं। पहले की विधि से पिकिल करने पर खालें चमड़ा सी बन जाती हैं। यदि सुखाकर तुड़ाई करके नर्म कर लें, तो बिल्कुल चमड़ा मालूम होंगी। पानी लगते ही यह फूल जाती हैं और ख़राब हो जाती हैं। यदि पानी न लगे तो ऐसी गीली और सूखी दशा में ये खालें बहुत काल तक बिना बिगड़े रक्खी रह सकती हैं। यदि

सल्फ्युरिक एसिड के साथ कुछ फार्मिक एसिड भी प्रयोग किया जाय तो किसी प्रकार के कीटाणु (Bacteria) या फफूँदी (Fungus फंगस) तक नहीं आ सकते। जिन खालों को एक जगह से दूसरी जगह भेजना हो, उनके लिये यह प्रयोग बहुत अच्छा है। कच्ची खालों (Raw hides) पर भी यह प्रयोग किया जा चुका है।

इस प्रयोग में खालों को पहले ८° (१०० सेर खाल पर ८ सेर) नमक और $\frac{3}{4}$% सल्फयुरिक एसिड के घोल में डालते हैं। इसे पैडिल या ढोल में करते हैं। आधे से तीन चौथाई घंटे में असर पूरा हो जाता है। इसके बाद वे नमक के सम्पृक्त घोल (Saturated Solution) में, जिसमें जितना नमक घुल सकता है उतना रहता है, आधे से पौन घंटे चलाई जाती हैं। पहिले घोल को फुलानेवाला घोल (Rising Liquor) कहते हैं, क्योंकि उसमें खालें फूल सी आती हैं। दूसरे घोल में से निकलने पर चपटी सी और पतली हो जाती हैं। इसीसे इसको गिराने-वाला घोल (Falling Liquor) कहते हैं। अब यह खालें भेजने के लिये तैयार हैं। पहले घोल में से आधा अम्ल खालों में जाना चाहिए। इस प्रकार इस प्रयोग को करना चाहिए कि इतना ही अम्ल उसमें से उठे। कुछ भी हो, खाल में उसके सूखे तौल पर ४-५ % अम्ल घुस जाना चाहिए। एक बार प्रयोग हो जाने के बाद दूसरी गठरी जाने के पहले फुलानेवाले घोल में नमक और अम्ल की कमी को पूरा कर देना चाहिये। खालें नमक को ले नहीं लेती हैं, बल्कि खालों में से जो पानी आता रहता है उसके कारण फुलानेवाला घोल हल्का होता चला जाता है। इसलिये और नमक डालकर उसका गुरुत्व (Specific Gravity) १·०६५ कर देना चाहिए।

गुरुत्व से तात्पर्य यह है कि अमुक वस्तु उतने ही आयतन के पानी से कितनी भारी है। यथा एक घंटी में पानी भरकर तोल लें, फिर

पानी फेंक कर उसमें पारा भर कर तोलें, तो पता चलता है कि एक छटाक पानी की जगह १३½ छटाक पारा आ गया है। यानी पारा उतने ही पानी से १३½ गुणा भारी है इसलिए १३½ को पारे का गुरुत्व कहते हैं। घोलों का गुरुत्व देखने के लिये गुरुत्व-मापक यन्त्र (Hydrometers हाइड्रोमीटर्स) आते हैं। उनको घोल में डालकर जिस जगह घोल आए उस जगह को यंत्र की नाप पढ़ लेने से घोल का गुरुत्व मालूम हो जाता है।

पकाने के घोल में डालने से पहले इन पिकिल की हुई खालों के अम्ल को सोडे या अमोनिया या खड़िया से शिथिल (Neutal) कर देना चाहिए। इनके साथ में भी नमक दे देना चाहिए वरना खालें फूल जायँगी।

सल्फ्युरिक एसिड (Sulphuric Acid) के सिवाय और भी अम्ल इस काम में प्रयोग किए जा सकते हैं; जैसे हाइड्रोक्लोरिक, फ़ार्मिक, एसेटिक (Acetic)। अन्तिम दो तो अधिक महँगे पड़ेंगे। फार्मिक एसिड कीड़ों (Insect) को नष्ट करता है, इसलिये इसे प्रयोग कर सकते हैं। चाहे जौन-सा अम्ल काम में लाया जाय, यह पाया गया है कि अंत में हाइड्रोक्लारिक एसिड ही खाल में मिलता है। अम्ल से फूली हुई खाल को नमक के घोल में डालने से उसकी फूलन जरूर दब जाती है पर उनमें से अम्ल निकल नहीं जाता, उलटा और अंदर ही घुस जाता है, बाहर घोल में कुछ नहीं बह आता।

वह दोनों बातें इस तरह होती हैं। खाल और जेलेटिन (Gelatine) बिल्कुल एक-से ही बर्तते हैं। खाल रेशे रूप है और जेलेटिन जेली (Jelly) रूप में है। इसलिए प्राक्टर (Proctor) ने जेलेटिन को लेकर उस पर अम्ल का असर अच्छी तरह देखा है, उनका कहना है कि अम्ल घोल में दो टुकड़ों में बट जाते हैं जिन्हें आवन्स

(Ions) कहते हैं। खाल को अम्ल के घोल में डालने से अम्ल खाल में जाता है। जेलेटिन और अम्ल एक सम्मेलन (Compound) बनाते हैं। मान लीजिए जेलेटिन को हाइड्रोक्लोरिक एसिड के घोल में रक्खा तो इससे जेलेटिन का जेलेटिन क्लोराइड (Gelatine Chloride) बना। अम्ल और यह क्लोराइड दोनों हो घोल में आयंस रूप में बटनेवाले (Ionisable) हैं। हाइड्रोक्लारिक एसिड से घोल में क्लोरीन और हाइड्रोजन के आयंस निकलते हैं और जेलेटिन क्लोराइड से जेलेटिन और क्लोरीन के आयंस निकलते हैं। क्लोरीन आयंस को ऋण (–) आयंस (Negative Ions) और जेलेटिन और हाइड्रोजन के आयंस को धन (+) आयंस (Positive Ions) कहते हैं। जेलेटिन और उसके आयंस अपनी कोल्वायड (Colloid) दशा को नहीं छोड़ सकते। इसलिये जेलेटिन क्लोराइड के क्लोरीन आयंस जेली के अंदर ही रहते हैं। इतने पतले घोल (Dilute solution) में सारा ही हाइड्रोक्लोरिक एसिड आयंस में बँट जाता है। क्योंकि जेलेटिन क्लोराइड के क्लोरीन आयंस जेली से बाहर नहीं निकल पाते, जेली के अंदर क्लोरीन आयंस की मात्रा (Concentration) बाहर के घोल को क्लोरीन आयंस की मात्रा से बढ़ जाती है। इस मात्रा को जेली और घोल में बराबर करने के लिए, बाहर का घोल जेली में जाता है। जब तक दोनों तरफ़ क्लोरीन आयंस की मात्रा बराबर नहीं होती यह हाल चलता है। बराबर हो जाने पर स्थिरता (Equilibrium) प्राप्त होती है। घोल के इस प्रकार अंदर जाने से ही जेलेटिन फूलती है। अम्ल में देने से खाल जो फूलती है उसका यही कारण है।

नमक भी पानी में घुलने पर आयंस में बट जाता है। इसके आयंस सोडियम+(धन) और क्लोरीन – (ऋण) हैं। जब नमक को ऊपर बताए अम्ल के घोल में घोलते हैं, तो बाहर क्लोरीन की मात्रा जेली के अंद र

के क्लोरीन की मात्रा से बढ़ जाती है । इसको बराबर करने के लिए अंदर से घोल बाहर आता है। घोल के अंदर से निकलने पर जेली का आयतन (Volume) घट जाता है यानी उसकी फलन घट जाती है। इसी प्रकार खाल की भी फूलन नमक देने से गिर जाती है और खाल गिर सी जाती है।

हाइड्रोक्लोरिक एसिड के बदले चाहे जौन-सा भी अम्ल प्रयोग किया जाय, ऊपर कहे अनुसार जेलेटिन का उस अम्ल के साथ लवण बनता है और उसी प्रकार जेलेटिन उस अम्ल में फलती है। कुछ अम्लों के साथ यह फूलन बिल्कुल नहीं मालूम होती। यह अम्ल वे हैं जिनको धीमे (Weak) अम्ल कहते हैं, जैसे बोरिक एसिड। हाइड्रोक्लोरिक एसिड, सल्फ्युरिक एसिड बली अम्ल (Strong acid) हैं। जो अम्ल जितने अधिक आयंस पतले घोल में देते हैं उतने ही वह बली हैं। हाइड्रोक्लोरिक और सल्फ्युरिक एसिड लगभग सारे ही आयंस में बट जाते हैं। फार्मिक एसिड सौ में ·०२१४, एसेटिक एसिड ·००१८ और बोरिक एसिड ·०००००००१ हिस्से बटते हैं। इसलिए हाइड्रोक्लोरिक और सल्फ्युरिक एसिड बली अम्ल हैं और बाक़ी धीमे। धीमे अम्लों से बना हुआ जेलेटिन का लवण (Salt) भी बहुत कम आयंस में बटता है इसलिए उसमें जेलेटिन और खाल नहीं फूलतीं।

हाइड्रोक्लोरिक एसिड के बदले यदि सल्फ्युरिक एसिड के घोल में जेलेटीन डाली जाय, तो उसका जेलेटिन सल्फेट बनता है और वह जेलेटिन फूल जाती है। ऐसे घोल में देने से भी नमक सोडियम और क्लोरीन आयंस में बट जाता है। दो अम्लों के आयंस होने पर जेलेटिन का कुछ जेलेटिन सल्फेट जेलेटिन क्लोराइड बन जाता है अर्थात् कुल जेलेटिन सल्फेट के रूप में न रहकर जेलेटिन सल्फेट और जेलेटिन क्लोराइड के रूप में हो जाता है। कितना-कितना कौन-सा लवण बनेगा यह दोनों अम्लों

की बलावस्था (Strength) और मात्रा (Concentration) पर निर्भर है। क्योंकि नमक काफ़ी मात्रा में दिया जाता है क्लोरीन के आयंस की मात्रा अधिक हो जाती है। इसीलिये ख़ासकर जेलेटीन क्लोराइड ही बनता है और क्लोरीन आयन्स के बाहर के घोल में अधिक होने से पहले बताए अनुसार जेलेटीन की फूलन दबती है। यही हाल खाल के साथ होता है। चाहे जौन-सा अम्ल प्रयोग हो, खाल उसमें फूलती है, नमक उसकी फूलन को दबाता है और खाल में बाद को हाइड्रोक्लोरिक एसिड ही मिलता है।

पिकलिंग के फ़ार्मूले

ग्लासीकिड (Glace-kid) के लिये २०% नमक, १००% पानी और १% सल्फ्युरिक एसिड ढोल में डालकर ढोल को चलाओ। नमक के घुल जाने पर उसमें खालें डालकर चलाओ। १० मिनट बाद १% सल्फ्युरिक एसिड और डाल दो। इस अम्ल को १० गुणे ठंढे पानी में मिलाकर खोखली नली से डालो। कुल घंटा भर चलने दो।

बाक्स साइड (Box sides) के लिये २००% पानी, १०% नमक और कुल १% सल्फ्युरिक एसिड लो और ऊपर कहे हुए तरीक़े से इस्तेमाल करो।

विलो काफ़ (Willow calf) के लिये १५०% पानी १०% नमक और कुल १% अम्ल लो, अम्ल को १० गुणे पानी में मिलाकर दो दफ़े करके इस्तेमाल करो।

भेड़ी के लिये (Sheep skins) १५०% पानी १०% नमक और कुल १% अम्ल लो।

आठवाँ अध्याय

फिटकरी से चमड़ा पकाना

(एलम टैनेज या टाइंग—Alum Tannage or Tawing.)

खाल को पकाने (Tanning) के लिये अर्थात् चमड़ा रूप में बदलने के लिये, चोकर के बाद उनको पकानेवाले पदार्थ के घोल में डालते हैं। पुराने जमाने से पकाने के लिये वनस्पति पदार्थ (Vegetable materials) काम में आते रहे हैं और अब भी बहुत-सा चमड़ा इन्हीं से पकता है। खनिज पदार्थों (Mineral products) में से फिटकरी का प्रयोग पुराना है और यह अब भी काम में आती है। पर जब से क्रोम से पकाने की रीति ठीक हुई है, बहुत-सा चमड़ा क्रोम से बनने लगा है क्योंकि इससे पका चमड़ा औरों से पके की अपेक्षा अच्छा होता है और इसकी पकावट पक्की होती है। साथ ही और खनिजों (Metals) की भी खोज इस काम के लिये की गई, और-और रसायनें (Chemicals) भी जो पका सकती हैं तैयार की गईं; लोहे से चमड़ा पकाने पर बहुत-से खोज हुए और पकाने की विधियों के पेटेन्ट भी लिये गए पर सफलता अभी तक किसी विधि से भी नहीं हुई है।

अल्यूमिनियम, क्रोमियम, और फेरम (लोहे) में पकाने की शक्ति है यह तीनों हैं भी एक ही जाति के। इनके आक्साइड्स (Oxides)

एक से ही बनते हैं। अल्यूमिनियम (Aluminium) नीलापन लिए हुए श्वेत रंग की धातु है। यह बहुत हल्की होती है। इसके पात्र घर-घर में इस्तेमाल होते ही हैं। अल्यूमिनियम अल्यूमिनियम के रूप में नहीं मिलता, पर उसके बहुत-से सम्मेलन (Compounds) पाये जाते हैं। वे ये हैं—१. अल्यूमिनियम सिलीकेट (Aluminium Silicate) जो चिकनी मिट्टी और स्लेट में होता है। २. अल्यूमीना (Al_2O_3, Alumina) जो कुरन्द (Corundum) और बौक्सायिट (Bauxite $4Al_2O_5$) में होता है। ३. अल्यूमिनियम और सोडियम के फ्ल्यूराइड (Na_3AlF_6) जो क्रियोलाइट (Cryolite) में होते हैं।

चिकनी मिट्टी (Bituminous clay) को जलाने से अल्यूमिनियम सल्फेट बनता है। उसको घोलकर घोल में पोटाशियम सल्फेट देने से और फिर घोल को गाढ़ा करने पर इन दोनों का सम्मिलित पदार्थ (Compound) दाना रूप (Crystal form) में बैठ जाता है। यही फिटकरी (Alum) है। इसकी बनावट (Composition) इस प्रकार है—अल्यू$_२$ (स आ$_४$)$_3$ पो$_२$ स आ$_४$ २४ ह$_२$ आ—$Al_2(SO_4)_3 K_2 SO_4 \cdot 24 H_2O$)। इसे पोटाश की फिटकरी कहते हैं। अमूमन बाजार में यही मिलती है। पुटाशियम की जगह अमोनिया प्रयोग करने से अमोनिया की फिटकरी बन जाती है। अल्यूमिनियम की जगह क्रोम ले सकते हैं और तब क्रोम की फिटकरी (Chrome Alum $Cr_2(SO_4)_3 K_2 SO_4 24H_2O$) बन जाती है। लोहे की फिटकरी में अल्यूमिनियम की जगह लोहा होता है ($Fe_2(SO_4)_3K_2SO_4 24H_2O$.) ये सब चमड़ा बनाने में काम आती हैं; लोहे की फिटकरी अभी इस काम में प्रयोग नहीं होती है। अल्यूमिनियम की फिटकरी से चमड़ा पकाना अँगरेज़ी में टाइंग (Tawing) कहलाता है। १०० हिस्से ठंडे पानी में कुल ९ हिस्से फिटकरी घुलती है; इसकी उपयोगिता इस

में के अल्यूमिनियम सल्फेट की मिक़दार के ऊपर निर्भर है। अब तो अल्यूमिनियम सल्फेट अल्यू$_2$ (स ओ$_4$)$_3$ १८ जल (Al_2) (SO_4)$_3$ 18 aq बनने लगा है, जो फिटकरी से सस्ता पड़ेगा। जहाँ पोटाश की फिटकरी के ६४८ हिस्से लेने हों, वहाँ अमोनिया की फिटकरी के ६०६ और अल्यूमिनियम सल्फेट के ६६६ हिस्से लेने होते हैं। मूल्य का मुक़ाबिला करते समय किसका कितना हिस्सा उतना ही काम करने के लिये लेनां पड़ेगा, इसका ध्यान रखना चाहिए। मान लीजिए ५% फिटकरी पकाने को चाहिए तो क़रीब ३·४% अल्यूमिनियम सल्फेट उतने ही चमड़े को पकाने को चाहिए। अब यदि फिटकरी तीन आने पाउंड है और अल्यूमिनियम सल्फेट चार आने, तो १०० पाउंड चमड़े के लिये ५×३=१५ आने की फिटकरी चाहिए; या ३·४×४=१३·६ आने का अल्यूमिनियम सल्फेट अर्थात् सल्फेट ही सस्ता पड़ा। पर यदि फिटकरी दो आने पाउंड हो, तो फि करी में ५×२=१० आने लगेंगे। ऐसे में गो फिटकरी अधिक चाहिए, फिर भी सस्ती पड़ी। अर्थात् इस प्रकार विचार करके मँहगा-सस्ता देखना चाहिए।

फिटकरी या अल्यूमिनियम सल्फेट के घोल में डालकर, यदि खाल को पकाएँ तो ऐसा पका चमड़ा सूखने पर काँटे-सा कठोर हो जाता है और तुड़ाई करने (Staking) पर भी नर्म नहीं होता। इसलिये इनके घोल में नमक देकर पकाते हैं। तब चमड़ा अच्छा निकलता है। खाली फिटकरी से अच्छा चमड़ा क्यों नहीं बनता और नमक के साथ में देने से क्यों अच्छा बन जाता है? इसका कारण यह है कि अल्यूमिना (Alumina) Al_2O_3 धीमा खार (Weak alkali) है; अतएव अल्यूमिनियम सल्फेट (जो फिटकरी में है) खाल के आने से घोल में अम्ल (एसिड) और खारी (Basic) अल्यूमिनियम

सल्फेट (आगे देखो) में बँट जाता है; यथा अल्यू$_2$ (सआ$_4$)$_3$ + ह$_2$ आ ⟶ 2 अल्यू आ ह· स आ$_4$ + ह$_2$ स ओ$_4$



$$Al_2(SO_4)_3 + H_2O \longrightarrow 2\ AlOH\ SO_4 + H_2SO_4$$

खाल पहले झट से यह अम्ल चूस लेती है और फूल जाती है; फूली दशा में खारी लवण (Basic Salt) को भली प्रकार नहीं ले पाती, जिससे पकावट पूरी नहीं हो पाती। ठीक न पकने अर्थात् कच्ची रहने से चमड़ा नर्म नहीं बनता। जिस प्रकार पिकिल में नमक फूलन को रोकता है, वैसे ही यहाँ पर भी फूलन को रोकता है। फूलन रोकने से खालें खारी अल्यूमिनियम लवण (Basic Aluminium Salt) को भली प्रकार लेकर ठीक-ठीक पक जाती हैं। अतः नर्म अच्छा चमड़ा तैयार होता है।

यह चमड़ा पानी के असर को नहीं रोक सकता, जैसे क्रोम से पका चमड़ा रोकता है। पानी पड़ने से यह चमड़ा फिर कड़ा हो जाता है। कारण यह है कि पानी में भीगने से नमक घुलकर निकल जाता है, उस समय घुला अम्ल फिर खाल को फुला देता है; साथ ही पकानेवाला कुछ अल्यूमिनियम लवण (Aluminium Salt) भी घुलकर निकल जाता है। इन्हीं कारणों से फिर वह चमड़ा सूखने पर कड़ा पड़ जाता है और नर्म नहीं होता। फिटकरी और नमक के बदले खारी अल्यूमिनियम लवण से पकाने से पानी के असर को कुछ हद तक रोकनेवाला चमड़ा बनता है। खारी लवण (Basic Salt) से यहाँ पर उस लवण से तात्पर्य है जिसमें खार (Base) और अम्ल (Acid) दोनों के अंश हों। आसानी से समझने के लिये अल्यूमिनियम क्लोराइड (Aluminium Chloride) ले लीजिए। शिथिल अल्यूमिनियम क्लोराइड (अल्यु$_2$ क्लो$_6$ Al_2Cl_6) लवण (Salt) में क्लोरीन के तीन आयन्स (Ions) के साथ एक

आयन अल्यूमिनियम का है: अल्यूमिनियम हाइड्राक्साइड (अल्यु$_2$ (आह)$_3$ $Al_2(OH)_3$; में एक अल्यूमिनियम का आयन तीन हाइड्राक्सिल (OH आह) आयन्स के साथ मिला है। अब यदि अल्यूमिनियम क्लोराइड में हर क्लोरीन (chlorine) आयन के बदले एक २ हाइड्राक्सिल (hydroxyi OH) आयन रक्खें तो ये लवण बनेंगे:—

१—अल्यु$_2$ क्लो$_६$; २—अल्यु$_2$ क्लो$_५$ (आह); ३—अल्यु$_2$ क्लो$_४$ (आह)$_2$; ४—अल्यु$_2$ क्लो$_3$ (आह)$_3$; ५—अल्यु$_2$ क्लो$_2$ (आह)$_4$; ६—अल्यु$_2$ क्लो (आह)$_५$; ७—अल्यु$_2$ (आह)$_६$। इनमें से (१) शिथिल लवण (Neutral salt), (७) खार (Base) और बाक़ी खारी लवण (बेजिक साल्ट्स basic salts) हैं।

खारी लवण बनाने के लिए शिथिल लवण में आवश्यकतानुसार खार (Alkali) देकर उसमें का जितना अम्ल बेकाम करना हो किया जा सकता है। जैसे नम्बर २ का लवण (salt) बनाने के लिए, अल्यूमिनियम क्लोराइड के हर अणु के लिए एक अणु कास्टिक सोडा (Caustic soda) या आधा अणु (Molecule) सोडा (Na_2Co_3) देना चाहिए। इनसे अल्यु$_2$ क्लो$_५$ आह खारी लवण बनने में निम्नलिखित रसायनिक परिवर्तन (Chemical reaction) होता है—

(१) अल्यु$_2$ क्लो$_६$+सो (आह)=अल्यु$_2$ क्लो$_५$ (आह)+सो क्लो

(२) २ अल्यु$_2$ क्लो$_६$+ सो$_2$ क आ$_3$+ह$_2$आ=२ अल्यु$_2$ क्लो$_५$ (आह)+२ सो क्लो+क आ$_2$.

इस प्रकार खारी लवण बनाने में ज्यों २ वह लवण अधिक खारी होता जाता है, घोल में वह अस्थिर (unstable नठहरनेवाला) होता जाता है; यहाँ तक कि बहुत खारी लवण पानी में घुले नहीं रहते। जो घुले हुए रहते हैं वे इतने अस्थिर होते हैं कि ज़रा सी बात से तलछट हो जाते हैं; जैसे उबालने पर, पानी मिलाने पर, या जानवरों और वनस्पतियों

के रेशों के मिलने से। ऐसी हालत में इनका और अधिक खारी लवण, जो तलछट हो जाता है, और अम्ल बनता है। इसी गुण के कारण ये रँगने (Dyeing) और चमड़ा पकाने में इस्तेमाल होते हैं।

जिस प्रकार अल्यूमिनियम क्लोराइड से खारी लवण बनाये जा सकते हैं, उसी प्रकार अल्यूमिनियम सल्फेट और फिटकरी से भी खारी अल्यूमिनियम सल्फेट के लवण बनाये जा सकते हैं। ऊपर बता चुके हैं कि फिटकरी में पकानेवाला हिस्सा अल्यूमिनियम सल्फेट है। इसलिए फिटकरी में सोडा देने से जो खारी लवण बनता है वह खारी अल्यूमिनियम सल्फेट है। अल्यु सआ$_4$आह (Al SO_4 OH) रूप का जो खारी अल्यूमिनियम सल्फेट लवण है उससे चमड़ा बहुत अच्छा पकता है। यह तीन नम्बर के खारी अल्यूमिनियम क्लोराइड के रूप का है।

फिटकरी का ऐसा खारी घोल तैयार करने के लिए १० हिस्सा फिटकरी और ४ हिस्सा रवेदार सोडियम कार्बोनेट (Crystalline Soda Carbonate) को अलग २ पानी में घोल, फिटकरी के घोल में सोडे के घोल को धीरे २ हिलाते हुए डालना चाहिए, वर्ना तलछट बन जाता है और फिर उस घोल में पकाने की शक्ति नहीं रहती।

ऐसे घोल में खालें नमक के साथ या बे नमक पकाई जा सकती हैं। इसमें से खालें अल्यूमिना (Alumina अल्यु$_2$आ$_3$) शीघ्रता से लेती हैं। पकी हुई खाल नर्म भी आसानी से हो जाती है। पानी का उस पर कम असर होता है। इस खारी घोल से पका चमड़ा धुल सकता है और गर्मी भी अधिक सह सकता है। जितना खारी (Basic) घोल होता है उतना ही भारी और नर्म चमड़ा तैयार होता है। ऐसे खारीपन की भी हद है; उससे अधिक खारी घोल हानि करते हैं।

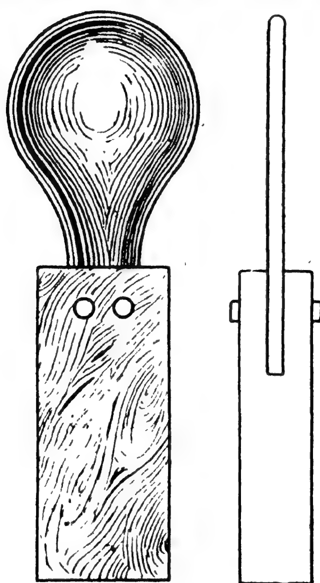
हिरन, चीता, लोमड़ी आदि की खालें जो नुमायशी तौर पर रखने के लिए बाल सहित पकाई जाती हैं, अक्सर फिटकरी से ही

पकाई जाती हैं। धुलने और भीगने के बाद वे फिटकरी के घोल में डाल दी जाती हैं। दो तीन दिन में वे पक जाती हैं (tanned)। इस काम के लिए ये घोल इस प्रकार बनाए जाते हैं:—(१) एक पा० (½ सेर) फिटकरी और आधा पा० (४ छं) नमक १ गैलन (५ सेर) पानी में घोल लेते हैं और इसमें चमड़ा पकाते हैं । (२) ३ पा० (१½-सेर) अल्यूमिनियम सल्फ़ेट और दो पा० (१ सेर) नमक दो गैलन (१० सेर) पानी में घोल लेते हैं (३) १० पा० (५ सेर) अल्यूमिनियम सल्फ़ेट का १० गैलन (५० सेर) पानी में घोल उसमें ४ पा० (२ सेर) धोने के सोडे (Washing soda) को ४ गैलन (२० सेर) पानी में घोल कर मिला देते हैं। इसमें इच्छानुसार नमक, आटा और अंडे की ज़र्दी (Yellow of egg; egg-yolk) भी मिला लेते हैं। यह खारी घोल (Basic liquor) क्रोम के खारी घोल के साथ मिलाकर भी प्रयोग हो सकता है। जब खालों के बालों पर मसाला लगने से उनकी ख़ूबसूरती के कम होने का डर हो, जैसे ऊनदार खालों की तैयारी में, तो ऐसी खालों को बाल नीचे कर तख़्ते पर खींचकर कीलों से गाड़ देते हैं। गोश्त की तरफ़ (Flesh side), जो ऊपर है, फिटकरी के ऊपर बताए घोल को इतना गर्म जितना हाथ सह सके कपड़े या स्पंज (Sponge) से लगा देते हैं। ज्योंही मसाला ऊपर से सूख जाता है और मसाला लगा देते हैं। इस प्रकार कई दफ़े करने से जब मसाला खाल में बिल्कुल आर-पार पहुँच जाता है और सतह पर नमक दाने के रूप (Crystal) में जमने लगता है, सूखने देते हैं।

फिटकरी से पकी खालें जल्दी से सुखा कर, तेज़ गर्मी पर सुखानी चाहिए। इससे यह मसाला रेशों पर और भी अच्छी तरह जम जाता है, खालें अधिक दिन चलती हैं और उन पर पानी का असर भी कम होता है। इन सूखी हुई खालों को ऐसी ही हालत में दो एक महीने पड़े

रहने देने से चमड़ा और पक्का हो जाता है। इस तरह डाले रखने को एजिंग (Ageing) कहते हैं।

फिटकरी से पकी खालें, सूखने पर अमूमन कठोर तख़्ता सी हो जाती हैं। ऐसी हालत में इनको भीगे हुए बुरादे में लपेट कर रख देते हैं। भीग कर आसानी से मुड़ने लायक़ हो जाने पर नर्म करने के लिए इनको



चित्र १० (नीस्टेक)

लोहे के यंत्र पर रगड़ते हैं। इसे तुड़ाई करना (स्टेकिंग Staking) कहते हैं। हाथ से तुड़ाई करने के यंत्र स्टेक और पर्च (Stake and Perch) हैं। स्टेक या नीस्टेक (Knee stake) में लोहे का एक चपटा टुकड़ा होता है जो खड़ा एक लकड़ी में गड़ा होता है। इसका ऊपरी किनारा पतला और अर्द्ध चन्द्राकार (चि० १०) होता है। इसकी कुल

उँचाई कमर तक होती है। इस पर चमड़े को दबा कर रगड़ने से चमड़ा नर्म हो जाता है। दूसरा यंत्र पर्च (Perch) है। इसमे चमड़े को एक आड़े (horizontal) डंडे में दबा देते हैं। चमड़े के नीचे के हिस्से को एक हाथ से पकड़ कर दूसरे हाथ से मून नाइफ़ (Moon knife) या क्रच स्टेक (Crutch stake) से रगड़ते हैं। मून नाइफ़ तवे का सा एक टुकड़ा होता है जिसके किनारे पतले होते हैं, और जिसके बीच में हाथ से पकड़ने को एक हैन्डिल होता है। क्रच स्टेक में नीस्टेक का सा पर हल्का चपटा लकड़ी में गड़ा लोहे का फला होता है, लकड़ी के दूसरे सिरे पर एक आड़ी लकड़ी होती है जिसको बग़ल में दबा लेते हैं और फले को हाथ से पकड़ कर दूसरे हाथ से ताने हुए चमड़े को रगड़ते हैं।

अब तुड़ाई ज़्यादातर मशीन से की जाती है जिसे स्टेकिंग मशीन कहते हैं। पहिले दफ़े तुड़ाई करने में ज़्यादा ज़ोर नहीं लगाना चाहिए, पर तो भी हर हिस्से को पूरी तरह से खींच देना चाहिए। पहिली तुड़ाई के बाद खालों को फिर सूखने देते हैं। जब ज़रा सी नमी रह जाती है फिर उनकी तुड़ाई करते हैं। इसके बाद सूखने पर वे नर्म रही आती हैं। पहिली और दूसरी तुड़ाई पर खालों में कितनी नमी (moisture) होनी चाहिए, यह मालूम कर लेना ज़रूरी है, क्योंकि नर्म चमड़े का बनना इस पर निर्भर है। यह परख करते २ आ जाता है। पहिली तुड़ाई पर खालें इतनी भीगी होनी चाहिए कि वे आसानी से खिंच जायें और फटें नहीं। ऐसी हालत में इतना पानी होता है कि खालों के रेशे सूखने पर फिर चिपक जाते हैं और चमड़ा कठोर हो जाता है। दूसरी तुड़ाई पर इतनी नमी होनी चाहिए कि बिना ज़ोर लगाए रेशे अलग २ हो जायँ और सूखने पर फिर न चिपकें।

रँगना हो तो इसके बाद खालों को रँगते हैं, वर्ना गोश्त की तरफ़

को चिकना साफ़ कर बेचने को तैयार कर लेते हैं। सारे तरीक़े को समझाने के लिए अब दस्ताने का चमड़ा बनाने की तरकीब लिखते हैं।

किड स्किन्स (Kid skins) बकरी मेमने आदि की छोटी २ खालों को कहते हैं, पर असल में किड (Kid) बकरी के बच्चे के लिए आता है। यह चमड़ा दस्ताने के लिए बन रहा है, इसलिए इसे ग्लवकिड (Glove kid) कहते हैं। यह अक्सर फिटकरी से ही पकाया जाता है। इसके लिए नर्म अच्छी खालें काम में लाई जाती हैं और उनको इस प्रकार बनाते हैं कि वे बहुत नर्म हों और चाहे जैसे खिंचने पर वैसे ही खिची रह जायँ, लौटें नहीं। मेमने की खालों से भी दस्ताने का चमड़ा बनाते हैं पर अच्छी चीज़ के लिए बकरी के बच्चे की खाल का ही बनाते हैं। ये सूखी होती हैं। जरूरत के हिसाब से इनको तीन चार दिन तक साफ़ ठंडे पानी में भिगोते हैं। चूना देने के लिए १० पा० (५ सेर) ढेलों के या २० पा० (१० सेर) दानेदार साडियम सल्फाइड को ५ गैलन (२५ सेर) पानी में घोल उसमें इतना चूना देते हैं कि गाढ़ा हो जाय और कूँची से ठीक लग सके। इसे गोश्त की तरफ़ लगाते हैं। दूसरी विधि में खालों को चूने और आर्सनिक सल्फाइड (Arsenic sulphide) के घोल में डालते हैं। अक्सर इसी विधि से चूना देते हैं। अच्छा चमड़ा बनानेवाले इन खालों को पुराने चूने में कभी नहीं देते, क्योंकि ऐसा करने से चमड़ा ढीला और खोखला निकलता है; दाना भद्दा और खुरदरा हो जाता है। दस दिन तक चूने में रखते हैं जिससे रेशों के बीच का पदार्थ (cement substance) घुल जाय और खालों में खिंचाई पर न लौटने का गुण आ जाए। मेमने की खालों के साथ में यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि चर्बी के ग्लैन्ड्स (Glands) टूट जायँ और चर्बी चूने या अमोनिया के साबुन के रूप में निकल जाय। यदि इस समय यह चर्बी इस तरह न निकल जाय तो

रँगने में धब्बे पड़ जाते हैं। जब बाल कढ़ाई (unhairing) के योग्य ढोले हो जायँ तो पानी में धोकर बीम पर डाल कर बाल निकालते हैं, और फिर चूने में दे देते हैं। जब तैयार हो जाती हैं इनकी छिलाई करते हैं और बेकार हिस्से सिर कान गांड आदि काट देते हैं।

चूना निकालने के लिए विष्ठा के घोल (Dog dung) में खालों को चलाते हैं। सफ़ेद ख़मीर उठते हुए विष्ठा को गर्म पानी में घोलकर ख़ूब हिलाते और छान लेते हैं। सहते गर्म (Tepid) घोल में खालें डालते हैं। इसमें खालें तेज़ी से गिरती हैं—यानी उनका ठोसपन जाता रहता है। छूने में नर्म और सुंदर मालूम होती हैं। इसमें से निकालकर उन्हें फिर छुरी लगाते हैं (Scud) जिससे बचे हुए बाल, धूल, चर्बी के ग्लैन्डूस निकल जायँ। इस चाल का असल अभिप्राय उन लचलचे रेशों (Elastic fibres) को निकाल देने का है जो दाने की तह में बहुत होते हैं और खिचने नहीं देते। छुरी लगाने के बाद इनको फिर छीलकर मोटाई में हर जगह एक सा कर देते हैं। धोकर कुछ देर थोड़े से पानी के साथ ढोल में चला देते हैं। निकाल कर फिर दाने की तरफ़ छुरी लगाते हैं (Scud)। यह छुरी बेंटे में लगी वलकैनाइट (Vulcanite) की प्लेट (Plate) होती है। इससे बचे खुचे साबुन बाल आदि भी निकल जाते हैं। फिर धोकर निचुड़ने को लगा देते हैं। निचुड़ने के बाद रेशे खुल जाने के लिए चोकर के घोल में देते हैं। गेहूँ के चोकर को ५०°श० (50°C) पर भिगोते हैं और गर्म पानी से पतला कर लेते हैं। कभी २ छानकर छने पानी में खालें डालते हैं। घोल खालों को डुबोने लायक़ होना चाहिए; और इसका ताप १०°से २०° श० (C) तक होना चाहिए।

पकाने का मसाला (Tanning solution or tawing paste) बनाने के लिए खालों की भीगी तौल पर ५% (१०० सेर भीगी खालों के

लिए ५ सेर) आटा, २½ % फिटकरी, १ नमक, २५ अंडों की जर्दी या १½ पा० (१२ छं) रक्खो हुई जर्दी (Preserved egg yolk) १¾% जैतून का तेल (Olive oil) और १२½ से १५% पानी लेते हैं। पहिले आटे में थोड़ा सा पानो डाल उसे लेई सा कर लेते हैं; जर्दी को थोड़े से गर्म पानी से पतला कर लेते हैं और छान लेते हैं। छने हुए में तेल मिला कर कुल को आटे में मिला देते हैं। इसी में फिटकरी और नमक का घोल मिला देते हैं। फिर इसमें गर्म पानी डालते हैं कि कुल १¾ — १½ गैलन (नाप में ६¾-७½ सेर पानो के बराबर) हो जाय और उसका ताप ३८° श० हो। यह नाप १०० पा० (५० सेर) खालों के लिये है। इस घोल में खालों को डाल या तो पैरों से रौंदते हैं या उनको ढोल में चला देते हैं। घोल के साथ ढोल में चलाते हुए ध्यान रखना चाहिए कि खालें रगड़ से गर्म न हो जायँ। यदि गर्म होने लगें, तो थोड़ी-थोड़ी देर ठहरकर चलाना चाहिए।

इस प्रकार फिटकरो से पकी हुई खालें (टाड स्किन्स Tawed skins) डंडों पर दाना अन्दर करके सुखाई जाती हैं। हल्के गर्म हवादार कमरों में जल्दी से सुखाने पर हो ठीक चमड़ा बनता है। सूखे चमड़े को पानी में डुबको देकर ढेरी लगा कर रख देते हैं और १२ घंटे तक पड़ा रहने देते हैं, कहीं २ डुबकी देकर संदूक में दाब कर भर देते हैं। इस तरह चमड़ों में सब जगह एक सी नमी आ जाती है। फिर दो दफ़े तुड़ाई (Staking) करते हैं। तुड़ाई के बाद दो महीने भर ऐसे ही पड़ा रहने देते हैं। यही पड़े रहना एजिंग (Ageing) कहलाता है।

रँगने (Dyeing) के लिए, खालों को रँगने से पहिले गर्म पानी से धाते हैं, जिससे छुट्टा फिटकरी और नमक आदि निकल जायँ। ब्रुश से रँगने में (Brush Dyeing) इनमें पहिले अंडे की जर्दी देते हैं।

पैडिल या ट्रे में रंगने में बाद में देते हैं। इसको रँगने के लिए अब भी रँगवाली लकड़ियाँ (Dyewoods) और मार्डेन्टवाले रँग बहुत इस्तेमाल होते हैं। अनीलीन से बने रंगों (Aniline Colours) से भी अब रँगने लगे हैं, ये ऊपर से चमक देने के लिए ख़ास कर काम में लाये जाते हैं। रँगने से पहिले चमड़ों को तैयार करना होता है अर्थात् सतह की चिकनाई धूल आदि दूर करनी होती है। इसलिये खारी मार्डेन्ट (Alkaline Mordant एल्कैलाइन मर्डेन्ट) जैसे बासी पेशाब (Stale Urine), अमोनिया (Ammonia), हाइड्रोलीन (Hydroleine) या अमोनिया से खारी किये साबुन से सतह को धोते हैं। अब खालों को रंगोंवाली लकड़ियों (Dyewoods) के घोल में डालते हैं। ये घोल दाने पर ब्रुश से भी लगाये जाते हैं। इनके ऊपर रंगत तेज़ करने के लिए एक और मसाले का घोल लगाते हैं। यह ज्यादातर किसी कसीस (Vitriol) का घोल होता है। हरा कसीस (फ़ैरस सल्फ़ेट Ferrous Sulphate), सफ़ेद कसीस (जिंक सल्फ़ेट Zinc Sulphate) और नीला कसीस (कापर सल्फ़ेट Copper Sulphate) तीन कसीस हैं। ऐसी रंगत तेज़ करनेवाली चीज़ों को स्ट्राइकर (Striker) कहते हैं। इनसे पहिली रंगत बहुत कुछ बदल जाती है। रंगने के बाद पीतल या एबोनाइट (Ebonite) के स्लीकर (Sliker) से चमड़े को मेज़ पर फैलाते हैं। इस काम के लिए खालों को पत्थर की चिकनी मेज़ पर डालकर गोश्त और दाने की तरफ़ से इस स्लीकर से दबाकर फैलाते हैं। इस तरह करने से धारियाँ निकल जाती हैं, सतह बैठ जाती है और हमवार हो जाती है। साथ ही बेकार पानी भी निकल जाता है।

अब इनको हवादार कमरों में अच्छी तरह फैला कर सुखाते हैं। सूखने पर इनको पहिले बताये अनुसार दो बार तुड़ाई करते हैं। नर्म हो जाने के

बाद दाने पर या तो काँच का स्लीकर फेर देते हैं या लोहा (Ironing) लगा देते हैं। जिस प्रकार धोबी कपड़ों पर लोहा लगाता है वैसे ही चमड़ों पर भी लोहा लगाया जाता है। लोहा इतना गर्म न होना चाहिए कि चमड़ा जल जाय। अब चमड़ा बिकने को तैयार है।

इन्हीं आधारों पर काफ़किड-नामी चमड़ा फ़ैन्सी जूतों के लिए बनाया जाता था। सफ़ेदा भी, जो कि कानपुर में बहुत बनता है, इसी आधार पर बनता है।

फिटकरी और नमक मामूली और मज़बूत (Strong, tough) चमड़े बनाने में भी प्रयोग होते हैं। जैसे भेड़ की खाल की एप्रन (Apron), कोड़े, बैल्ट (Belts), फ़ीते (Straps) आदि। तरीक़ा सबके लिए यही है। फिटकरी और नमक ख़ास चीज़ें हैं। आटा और अंडे की जर्दी किसी चीज़ के बनाने में इस्तेमाल होती है; किसी-किसी के बनाने में नहीं। चमड़ों को अधिक सफ़ेद करने के लिए बाद में खड़िया (Whitening) के घोल में चला देते हैं। फिटकरी से पके चमड़ों में तुड़ाई के बाद हाथ से या ढोल में डालकर चर्बी भरी जा सकती है।

फिटकरी और अल्यूमिनियम के मसाले क्रोम और वनस्पति-पदार्थों के साथ भी इस्तेमाल हो सकते हैं। वनस्पति पदार्थों के साथ इनको मिलाकर फ़ीतों का ग्रीन (Green) नामी चमड़ा, डंगोला (Dongola) और कुत्ते की खाल से दस्ताने का चमड़ा बनाया जाता था। जूते के लिए इस विधि से जो ग्लेज़्डकिड (Glazed kid) बनाया जाता है, उसमें सतह पर चमक लाने के लिए वनस्पति-पदार्थों का प्रयोग अवश्य करना होता है।

नवाँ अध्याय

क्रोम से चमड़ा पकाना

(CHROME-TANNING)

पिछले अध्याय में कह चुके हैं कि क्रोम (Chrome) और लोहा (Iron) भी खाल को पकाते हैं (Tan)। इनके कुछ लवणों (Salts) में खाल को चमड़ा बना देने के गुण हैं। लोहे से अभी तक अच्छा चमड़ा नहीं बन पाया है। क्रोम से बढ़िया-बढ़िया चमड़े बनते हैं। अब प्रायः बनस्पति पदार्थ (Vegetable products) से बने के बजाय क्रोमसे बना चमड़ा ही काम में आता है।

क्रोम शुद्ध धातु-रूप में नहीं मिलता। इसकी धातु (Metal) क्रोम आयरन ओर (Chrome Iron Ore $FeCr_2O_4$) है। इसमें से यह निकाला जाता है। इसके लवण (Salts) जो पकाने के काम में आते हैं, ये हैं:—(१) पोटाशियम बाईक्रोमेट (Potassium bi-Chromate $K_2Cr_2O_7$)। (२) सोडियम बाईक्रोमेट (Sodium bichromate $Na_2Cr_2O_7 2H_2O$—सो₂ क्रो₂ आ₇ २ह₂आ)। (३) क्रोम की फिटकरी (Chrome alum) क्रो₂ (स आ)₃ पो₂सआ₄ २४ ह₂आ $Cr_2(SO_4)_3 K_2SO_4 24 H_2O$)। पोटाशियम बाईक्रोमेट लाल रंग का ठोस पदार्थ है। इसके बड़े-बड़े दाने होते हैं। यह पानी में कम घुलता है। इसका अणु-भार (Mole-

cular weight) २९४ है। सोडियम बाईक्रोमेट भी लाल रंग का दानेदार होता है। यह बड़ी जल्दी पसीजता है। यह बराबर के पानी में घुल जाता है। इस के अणु (Molecule) में दो अणु पानी (ह२आ) के हैं जिससे इसका अणु-भार २९८ है। इसलिये जिस जगह पोटाशियम बाईक्रोमेट की तौल दी हो, उस जगह उतना ही सोडियम बाईक्रोमेट ले सकते हैं।

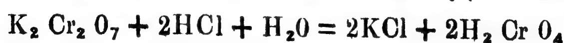
क्रोम की फिटकरी बैगनी रंग का ठोस पदार्थ है। यह छींट छापने चमड़ा पकाने और रंगने (dyeing) के काम आती है। यह रंग बनाने के कारखानों का एक पदार्थ (Bye-product) है। यह सस्ती पड़ती है। शुरू में क्रोम का चमड़ा इसीसे बनाया जाता था। पर जब लड़ाई के समय रंगों के कारखाने बन्द हो गये, इसका आना बन्द हो गया तबसे पोटाशियम बाईक्रोमेट काम में आने लगा है। इसका अणु-भार (Molecular weight) ९९८ है। यह पानी में बहुत कम घुलता है। ठंडे पानी में घुलने से ऊदे रंग का घोल बनता है। उबालने पर यह हरे रंग का हो जाता है। क्रोम के कितने ही लवण इस तरह की बात करते हैं कि ठंडे में कुछ और गर्म में कुछ। इसका कारण यह है कि गर्म करने पर ये चीजें दो हिस्सों में टूट (Break up) जाती हैं, एक उनका अधिक खारी लवण (More basic salt) दूसरा अम्ल (acid)। खारी लवण (Basic salt) हरा होता है। हरे घोल में छुट्टा अम्ल होने के कारण उसमें खालें फूल जाती हैं। पकाने में ऊदा घोल जल्दी असर करता है, क्योंकि उसमें हरे की अपेक्षा क्रोम के लवण से मिला अम्ल (Combined acid) अधिक होता है। इसी लिए क्रोम की फिटकरी को ठंडे पानी में घोलते हैं। क्रोम के आक्साइड्स (Oxides) में क्रामिक आक्साइड (Chromic Oxide) ध्यान में रखने योग्य है। यह हरे रंग का चमकीला चूर्ण होता है।

सब से पहिले १८५८ में प्रोफ़ेसर नैप (Professor Knap) ने चमड़ा बनाने में क्रोम को प्रयोग करने की विधि बताई थी। यह विधि बिल्कुल ठीक थी, पर इससे बड़े पैमाने पर किसी ने चमड़ा नहीं बनाया। प्रोफ़ेसर नैप ख़ुद तो लोहे को चमड़ा बनाने के लिए इस्तेमाल करने की कोशिश में लगे रहे। इसके बाद क्रोम से चमड़ा बनाने की विधि के कई पेटेन्ट (Patents) लिये गये और उनसे कुछ चमड़ा बनाया भी गया। एक पेटेन्ट से अवश्य कुछ बड़े पैमाने पर चमड़ा बनाया गया, पर वह ठीक न था। उस विधि से खालों को नमक, फिटकरी और पोटाशियम बाईक्रोमेट के घोल में पकाते थे। फिटकरी की वजह से खालें पक जाती थीं, परन्तु फिटकरी के छुट्टा अम्ल और बाईक्रोमेट से बने क्रोमिक एसिड (Chromic acid) से पीली रंगत की हो जाती थीं। क्रोमिक एसिड धीरे २ अपनी आक्सीजन खाल को देकर आक्साइड में बदल जाता था और तब चमड़े को रंगत भूरे हरे रंग की-सी हो जाती थी। क्योंकि इसमें खाल पर असर होता था, चमड़ा कमज़ोर पड़ जाता था और सतह पर चटखने लगता था। इसके नमूने अब तक लीड्स यूनीवर्सिटी (Leeds University) में रक्खे हैं।

ठीक और सब से अच्छी विधि १८८४ में आगस्टस शूल्ट्ज़ (Augustus Schultz) ने निकाली थी। वह चर्म्मकार नहीं था, बल्कि एक रंगवाले कारख़ाने का रसायन-वेत्ता (केमिस्ट Chemist) था। एक समय उसके एक मित्र ने उससे पूछा कि क्या कोई ऐसी विधि है जिससे ऐसा चमड़ा बने जिससे लोहे में जंग न लगे। फिटकरी से पके चमड़े से लोहे में जंग लग जाती है। उन्हीं दिनों क्रोमिक आक्साइड (Chromic Oxide) से ऊन रँगने की एक नई विधि निकली थी। बस शूल्टज़ ने खाल को क्रोमिक एसिड के घोल में डाल दिया। जब खाल में क्रोमिक एसिड चला गया, तब उसने खाल को हाइपो

(Hypo) के घोल में डाल दिया। इससे क्रामिक एसिड क्रोम के एक लवण में बदल गया। इस लवण (Salt) के खाल पर जम जाने से खाल चमड़ा बन गई। क्रामिक एसिड के इस प्रकार बदलने की क्रिया में इसकी आक्सीजन हाइपो में चली जाती है। ऐसी क्रिया को लघुकरण (Reduction रिडक्शन) और जिसमें आक्सीजन जाय उसे लघुकारक (Reducing agent) कहते हैं। और क्रामिक एसिड को कहते हैं कि हाइपो से लघु (Reduced) हो गया।

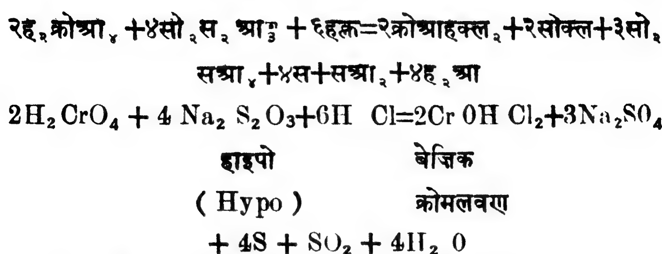
आजकल जो क्रोम का चमड़ा बनता है वह भी इसी आधार पर बनता है। शूल्ट्ज़ ने इन चीज़ों को जिस प्रमाण (Proportion) में प्रयोग किया था; कुछ ही हेर-फेर से ये अब भी उसी प्रमाण में प्रयोग होते हैं। पहिले घोल में ५ % (१०० सेर खाल के लिए ५ सेर) पोटाशियम बाईक्रोमेट और २½ % गाढ़ा हाइड्रोक्लारिक एसिड (Concentrated Hydrochloric acid) या १¾ % गाढ़ा सल्फ्यूरिक एसिड (Conc. Sulphuric acid) भीगी खाल के वज़न पर लेकर घोलते थे। दूसरे घोल में १० % हाइपो (सोडियम थायोसल्फेट Sodium thiosulphate) और ५ % हाइड्रोक्लारिक एसिड घोलते थे। पहिले घोल में जो रसायनिक परिवर्तन होते हैं, उनसे घोल में क्रामिक एसिड बन जाता है। इस बात को वैज्ञानिक शब्दों में इस प्रकार दर्शाते हैं—



$$K_2 Cr_2 O_7 + 2HCl + H_2O = 2KCl + 2H_2 Cr O_4$$

(Chromic acid)

दूसरे घोल में जो परिवर्तन होते हैं वे कई प्रकार के हैं। अम्ल (Acid) की मात्रा और उसके डालने की तेजी पर ये निर्भर हैं। जो मुख्य बात है वह इस क्रामिक एसिड से बेसिक क्रोम साल्ट का बन जाना है। इसे इस प्रकार दर्शाते हैं—



२ह$_{२}$क्रोआ$_{४}$ +४सो$_{२}$स$_{२}$ आ$_{३}$ + ६हक्ल=२क्रोआहक्ल$_{२}$+२सोक्ल+३सो$_{२}$

सआ$_{४}$+४स+सआ$_{२}$+४ह$_{२}$आ

$2H_2CrO_4 + 4\ Na_2\ S_2O_3 + 6H\ Cl = 2Cr\ OH\ Cl_2 + 3Na_2SO_4$

हाइपो (Hypo) बेज़िक क्रोमलवण

$+ 4S + SO_2 + 4H_2\ O$

इस तरह रसायनिक परिवर्तनों के दिखाने को समीकरण (Equation ईकेशन) कहते हैं।

पहिली समीकरण से मालूम होता है कि ४हिस्सा बाइक्रोमेट के लिए ४⅔ हिस्सा हाइड्रोक्लारिक एसिड चाहिए। यानी २⅓ हिस्सा थोड़ा है; कुछ बाइक्रोमेट बिना क्रामिक एसिड में बदला रह जायगा। थोड़ा लेने से लाभ यह है कि (१) बाइक्रोमेट क्रामिक एसिड के हानिकर असर को रोकता है (२) और यदि अधिक हाइड्रोक्लारिक एसिड पड भी जाय, तो कोई नुक़सान न हो पाएगा। इससे हानि यह है कि कुछ बाईक्रोमेट जो कि बदला नहीं है खराब जाता है। काम में तो सिर्फ़ वही बाईक्रोमेट आता है, जो क्रोमिक एसिड के रूप में बदल जाय। इसलिए यदि हाइड्रोक्लारिक एसिड अधिकता में लिया जाय, तो यह हानि न होगी। साथ ही हाइड्रोक्लारिक एसिड की अधिकता उसके फुलानेवाले गुण के कारण, क्रोमिक एसिड के सिकोड़ने और खाल को कड़ा करनेवाले असर को रोकती है। अम्ल के अधिक होते हुए लघुकरण (Reduction) भी अच्छा होता है। इस हिसाब से भीगी खाल की तौल पर ४ % बाई क्रोमेट और ४ % गाढ़ा हाइड्रोक्लारिक एसिड (Strong HCl) प्रयोग करना चाहिए। अब दूसरे घोल में कुछ अधिक अम्ल और हाइपो चाहिए।

पिकिल की हुई खालों को क्रोम से पकाने की आजकल दो विधियें

हैं:—(१) दो घोल से पकाने की विधि (२) एक घोल से पकाने की विधि। दो घोल से पकाने की विधि में जो चीज़ें चाहिएं दे चुके हैं। अब इनसे जिस तरह पकाया जाना है लिखते हैं।

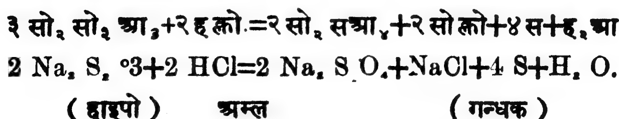
पिकिल की हुई खालें पहिले बाइक्रोमेट और अम्ल के घोल में डाली जाती हैं। इस काम को ढोल या पैडिल में करते हैं। साथ में घोल में कुछ नमक दे देने से अच्छा चमड़ा बनता है। क्योंकि इन खालों में पिकिल का अम्ल होता ही है ऊपर बताई मात्रा से कम अम्ल लेते हैं। सरल तरकीब यह है कि पिकिल और इस घोल दोनों में मिलाकर इतना अम्ल होना चाहिए, जितना ऊपर बता चुके हैं। दूसरी अच्छी विधि यह है कि पिकिल में ही बाइक्रोमेट को घोलकर डाल दिया जाय। बाइक्रोमेट में डालने के दो घंटे बाद खाल की मोटी से मोटी जगह पर से टुकड़ा काटकर कटी सतह को देखते हैं। यदि क्रामिक एसिड का पीला रंग खाल के अन्दर तक एक-सा हो जाय, कटी सतह के बीच में हल्के रंग की धारी न हो, तो समझना चाहिए कि मसाला ठीक-ठीक अन्दर चला गया है। तब खालों को घोल में से निकालते हैं, और फैलाकर घोड़ी पर लगा देते हैं। यह घोड़ी लकड़ी की लम्बी ऊपर से गोल बेंच होती है, जिसपर भीगा चमड़ा लगाया जाता है। दोनों तरफ़ ढाल होने से चमड़ा निचुड़ अच्छा जाता है। रात-भर खालों को इसी तरह पड़ा रहने देते हैं; बेकार घोल निचुड़ जाता है और बाक़ी अच्छी तरह अन्दर ही जम जाता है। साथ ही धारियें आदि दूर हो जाती हैं। क्रोमिक एसिड से भरी खालों को रोशनी और धूप से बचाना चाहिए (बोरी से ढककर रखना चाहिए), वर्ना खालें ख़राब हो जायँगी और पकावट (Tannage) हमवार न होगी। दूसरे दिन इन खालों को मशीन से या पत्थर की मेज़ पर डालकर स्लीकर से दबाकर अच्छी तरह फैला देते हैं, जिससें मोडनें, धारियें (Creases)

निकल जायँ। यदि दूसरे घोल में जाने से पहिले ये धारियाँ न निकाल दी जायँ, तो फिर कभी नहीं निकल सकतीं ; जम जाती हैं।

एक गठरी पर प्रयोग करने के बाद इस घोल को प्रायः फेंक देते हैं। पर कमी को पूरी कर-कर के एक ही घोल कई बार प्रयोग हो सकता है। रसायनवेत्ता (Chemist केमिस्ट) विश्लेषण द्वारा (Analysis एनेलेसिस से) इस कमी को आसानी से मालूम कर सकते हैं।

इसके बाद खालें लघुकारक (Reducing रिड्यूसिंग) घोल में डाली जाती हैं जहाँ कि, जैसा ऊपर बता चुके हैं, क्रोमिक एसिड से क्रोम का एक खारी लवण (Basic Salt) बन जाता है। इसीसे खालें पक जाती हैं। यह क्रिया पैडिल में करनी चाहिए, जिससे कि क्रिया होते में खालों की देख-भाल आसानी से हो सके। इसमें सल्फर डाइआक्साइड (Sulphur dioxide) बहुत निकलती है। यदि यह घोल में रही आए तो अच्छा होता है। इसलिये इस पैडिल को सुप्रकार ढक देते हैं और देखने भालने के लिए इसमें एक तरफ़ एक खिड़की रखते हैं।

पैडिल में पानी भर कर चूने की तौल पर १५ % हाइपो उसमें घोल देते हैं। ५ % एसिड को बहुत-से (दसगुणे) पानी से पतलाकर उसका दसवाँ हिस्सा हाइपो के घोल में डालते हैं। इससे पानी में ज़रा-सी देर में सफ़ेदी आ जाती है, यह गन्धक है। जब गन्धक निकल आवे, खालों को झटपट इस घोल में डाल देते हैं। अम्ल (एसिड) डालने से जो परिवर्तन होता है। इस प्रकार है:—


$$३ सो_2 सो_2 आ_3 + २ ह क्लो = २ सो_2 स आ_4 + २ सो क्लो + ४ स + ह_2 आ$$
$$2 Na_2 S_2 O_3 + 2 HCl = 2 Na_2 SO_4 + NaCl + 4 S + H_2 O.$$
(हाइपो) अम्ल (गन्धक)

इस समय खालों और घोल को देखते रहना चाहिए। बहुधा खालों के डालते ही कुछ मसाला खालों में से घुलकर घोल में आने लगता है

जिससे कि घोल का रंग हरा-सा हो जाता है ; इसे बहना (Bleeding ब्लीडिंग) कहते हैं। इसको रोकने के लिये थोड़ा सा अम्ल (Acid) और फ़ौरन् दे दो। ईटनर की राय है कि जो चीज़ इस प्रकार खालों में से निकलती है वह बाइक्रोमेट है, क्रामिक एसिड नहीं है। हाइपो अधिक होने से यह ब्लीडिंग रुक सकता है, पर बहुत अधिक हो जाने से दाना खिंचने (Drawn grain ड्रान ग्रेन) का डर रहता है। बाक़ी ६ हिस्से अम्ल धीरे-धीरे डालते जाना चाहिए ; शुरू में तेज़ी से और बाद में धीरे-धीरे। अम्ल जितनी जल्दी जल्दी दिया जायगा उतना ही हाइपो और अम्ल अधिक चाहिए क्योंकि तेज़ी से डालने में अम्ल को हाइपो के साथ क्रामिक एसिड (अम्ल) पर असर करने का मौक़ा तो मिलता नहीं—यह तो खाल के अन्दर है—वह हाइपो पर असर कर उसे बेकार करदेता है। दोनों ही विना काम दिये बेकार जाते हैं।

यदि खालों की रंगत शुरू से ही ग़ौर से देखी जाय, तो पता लगेगा कि पहिले उनकी रंगत भूरी-सी (Olive brown) हो जाती है फिर साफ़ हरी सी। घोल भी साफ़ हो जाता है ; और अन्त में खालों की रंगत नीली (Blue or duck egg blue)-सी हो जाती है। जब मोटी-सी जगह पर के ताज़े काट की सतह की रंगत आरपार ऐसी ही या काहिया नीली हो जाय कोई धारी न हो और रेशे-रेशे दिखाई दें, तो समझना चाहिए कि सारा क्रोमिक एसिड (अम्ल) बदल गया है और खालें पक गई हैं।

इस दूसरे घोल—लघुकरण घोल (Reducing solution)—में जो रसायनिक परिवर्तन (Chemical reactions) होते हैं, वे कई हैं। ये परिवर्तन घोल में नहीं बल्कि खालों के अन्दर होते हैं। इनमें मुख्य बात यह है कि क्रोमिक एसिड का होते-होते क्रोम का एक शिथिल लवण (Neutral salt) बनता है। यदि हाइड्रोक्लोरिक एसिड प्रयोग

किया जाय, तो क्रोमियम क्लोराइड (क्रो क्लो$_3$ Chromium chloride) और यदि सल्फ्यूरिक एसिड हो, तो क्रोमियम सल्फेट (क्रो$_2$ सश्रा$_4$)$_3$ (Chromium sulphate) बनता है। यह फिर बेज़िक लवण—क्रोमियम हाइड्राक्सीक्लोराइड, क्रो (आ ह) क्लो, या क्रोमियम हाइड्राक्सी सल्फेट, क्रो$_2$ (आ ह) (सआ$_4$)-में बदल जाता है। यही बेज़िक क्रोम लवण (salt) खाल के रेशों पर जमा होकर खाल को सड़ने से रोकते हैं अर्थात् चमड़ा बना देते हैं। इस लवण के बनने के साथ ही बहुत-सी सल्फर डाइआक्साइड नामी गैस और सल्फर (गन्धक) बनती है। यह गन्धक घोल में नहीं रहती, बल्कि खाल के अन्दर रेशों पर और रेशों के बीच में बनती है। यही चमड़े को नर्मी देती है। फ़ैटलिकर (Fat liquor) के तेल के साथ मिलकर यह किसी तरह ऐसा असर करती है कि चमड़ा अधिक नर्म हो जाता है। दो घोल और एक घोल से पकाने में अन्तर यही पड़ता है कि दो घोल से पके में अन्दर गन्धक होती है।

जब रंगत से और काटकर देखने से खालें पकी हुई मालूम दें, उनकी जाँच खौलते हुए पानी से कर लेनी चाहिए। इसे बायलिंग टेस्ट (Boiling Test) कहते हैं। इसकी विधि यह है कि खाल की मोटी जगह पर—पुट्ठा, गर्दन या पिटवार—से दो-तीन टुकड़े लेकर, हर एक को दो इंच चौकोर कर लेते हैं। काग़ज़ पर रखकर हरएक का निशान ले लेते हैं। और फिर इन टुकड़ों को खौलते पानी में डाल देते हैं। ठीक दो मिनट बाद निकालकर निशान पर रखकर मिलाते हैं। यदि टुकड़े बिल्कुल उतने ही हैं जितने पहिले थे, कुछ छोटे नहीं हुए हैं, तो खाल ठीक पक गई हैं। यदि टुकड़े कुछ सिकुड़ गए या छोटे हो गए हैं (Shrunken) या उनके किनारे मुड़ गए हैं (edges curled up) तो कसर है—खालें ठीक नहीं पकी हैं। इस कसर को थोड़ा-सा और

बाइक्रोमेट, अम्ल या हाइपो आवश्यकतानुसार देकर दूर करना चाहिए। इतनी इतनी चीज़ें लेने से कसर रहती तो नहीं है।

पर्क: खालों को उसी घोल में रात भर छोड़ देना लाभदायक है। जो परिवर्तन अब तक हो रहे थे वे इतने समय में पूरे हो जाते हैं। यदि उसमें हाइपो बच रहा है तो इतने समय में वह उस छुट्टा अम्ल को थोड़ा-बहुत शिथिल (neutralise न्यूट्रलाइज़) कर देगा जिस को आगे चलकर दूर करना ही है। हाइपो से शिथिल होने में गन्धक और बन जायगी जो नर्मी देती है। इसी लिए शुरू में इतना हाइपो लेना चाहिए कि लघुकरण (Reduction) हो चुकने पर कुछ बच रहे।

क्रोम के एक घोल से चमड़ा बनाना—One (Single) bath method of chrome-tanning:—शूल्टज़ (Schultz) ने जब सफलता पूर्वक क्रोम से चमड़ा बना लिया, उसने अपनी विधि को पेटेन्ट करा दिया। उसकी सफलता को देखकर और लोगों ने और और चीज़ों से लघुकरण (Reduction) करके क्रोम का चमड़ा बनाने की कोशिश की, पर हाइपो-सा अच्छा कोई दूसरा पदार्थ नहीं मिला। इसी खोज में १८६३ ई० में मार्टिन डैनिस (Martin Denis) ने नैप (Knapp) के लेखानुसार एक पेटेन्ट लिया जिस से वह चमड़ा बनाने का एक ही घोल बना बना कर बेचने लगा। यह घोल (liquor) क्रोम के खारी लवण का घोल (Solution of basic chrome salt) है।

मार्टिन डैनिस यह घोल इस प्रकार बनाता था। क्रोम फिटकरी और सोडे को अलग अलग पानी में घोलकर दोनों को मिला देता था, इससे क्रोमियम सल्फेट क्रोमियम हाइड्राक्साइड के रूप में तलछट हो जाता है। इस तलछट को पानी से धोकर अम्ल में घोलता था। इससे क्रोम का शिथिल लवण (Neutral salt) बन जाता है। इसे फिर सोडा

देकर जितना खारी करना होता था उतना खारी (Basic) कर देता था। यही उसका एक घोल से पकानेवाला मसाला है।

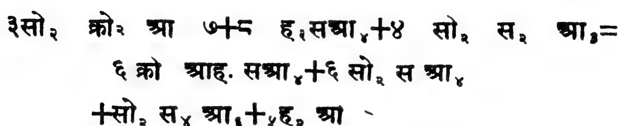
क्रोम फिटकरी के घोल को सिर्फ़ खारी कर लेने से भी यही मतलब सिद्ध होता है। १० हिस्सा फिटकरी को ८० हिस्सा गर्म पानी में और २½—३½ हिस्सा धोने का सोडा (Washing soda) १० हिस्सा पानी में घोलते हैं। दूसरे घोल को लगातार धीरे-धीरे हिलाते हुए पहले घोल में डालते हैं। इस तरह जो बेज़िक क्रोमियम सल्फेट (Basic chromium sulphate) का घोल बनता है, वह मार्टिनडेनिस की विधि के घोल से किसी प्रकार बुरा नहीं है। इससे बहुत अच्छा चमड़ा बनता है। क्रोम फिटकरी को घोलने के लिए एक ढोल में पानी और फिटकरी डालकर चला देने से या एक पीपे में पानी भर सतह पर टोकरी में फिटकरी रखने से घोलने में आसानी होती है, क्योंकि यह कम घुलती है और घुलने में बड़ा समय लेती है। इसको गर्म करके भी घोल सकते हैं।

इसी प्रकार के एक घोल से पकानेवाले और घोल (Single bath tanning Solutions) इस प्रकार बनाए जा सकते हैं:— सोडियम बाइक्रोमेट को पानी में घोल उसी में अम्ल मिला देते हैं। ग्ल्यूकोज़ (Glucose) को पानी में घोलकर इसमें मिलाने से जो घोल बनता है, उससे चमड़ा बहुत अच्छा बनता है। अम्ल और बाइक्रोमेट से क्रोमिक एसिड बन जाता है; यह ग्ल्यूकोज़ से लघु (reduce) होकर क्रोम के खारी लवण (Basic salt) के रूप में आ जाता है। ज़्यादातर सल्फ्यूरिक एसिड ही इस काम में इस्तेमाल होता है। इससे घोल में क्रोमियम हाइड्राक्सी सल्फेट (क्रो ओह सओ$_४$) रहता है। लघु क्रिया होते हुए इसमें से कितनी ही हवाएँ (Gases) निकलती हैं, घोल उफनने (Boils over) लगता है, इसलिये बड़ा बर्तन लेना चाहिए।

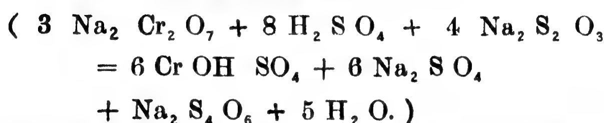
शुरू में परिवर्तन चलाने के लिए, कभी-कभी गर्मी देने की आवश्यक्ता पड़ जाती है। पर बाद में तो अपने आप उसमें काफ़ी गर्मी पैदा हो जाती है। लघुकारक घोल (Reducing solution यहाँ पर ग्ल्यूकोज़ का घोल) इतना डालना चाहिए कि रंगत बदल कर बिल्कुल हरी हो जाय। उसमें बिना लघु हुआ (unreduced) बाइक्रोमेट न रहना चाहिए। इसकी परीक्षा इस प्रकार की जाती है कि थोड़े से घोल में थोड़ा-सा पानी मिलाते हैं और अमोनिया से उसमें के सारे क्रोमियम को क्रोमियम हाइड्राक्साइड (Chromium hydroxide) के रूप में तलछट करते हैं। छानकर छने घोल को देखते हैं। यदि उसमें पीली रंगत है तो कुछ क्रामिकएसिड बे लघु हुआ रह गया है। इस घोल को बनाने के लिए तीन हिस्सा सोडियम बाइक्रोमेट, छः हिस्सा गाढ़ा हाइड्रोक्लोरिक एसिड और इतना ग्ल्यूकोज़ कि कुल बाइक्रोमेट लघु हो जाय लेते हैं। ग्ल्यूकोज़ के बदले ये चीजें भी लघु करने के लिए प्रयोग की जा सकते हैं:—गुड़, शीरा (molasses), शक्कर, ग्लिसरीन (Glycerine), सत निकले हुए पकानेवाले वनस्पति-पदार्थ (Spent Tanning Materials स्पैन्ट टैनिंग मैटीरियल्स), बकला हड्डा या और चेतन पदार्थ (Organic matter)। इन भिन्न भिन्न चीज़ों से बनाने में एसिड की मात्रा उतने ही बाइक्रोमेट के लिये एक सी नहीं होती। ये सब पदार्थ आक्सीजन लेनेवाले (Oxidisable) हैं। अन्त में घोल में क्रोम के खारी लवण के साथ इनके आक्सीजिन लिए हुए पदार्थ (Oxidised products) और इनके घुलनेवाले पदार्थ भी रहते हैं, और चमड़े पर अपना असर दिखाते हैं। यह ऊपर कही चीज़ें काम में लाई जा चुकी हैं। किसी-किसी से अच्छा भरा हुआ-सा नर्म चमड़ा निकलता है।

हाइपो का घोल (Hypo liquor) —२० हिस्से सोडियम बाइक्रोमेट को २० हिस्सा पानी में घोल उसमें १७½ हिस्सा गाढ़ा सल्फ्यूरिक

एसिड (Strong Sulphuric Acid) धीरे-धीरे डालते हैं। कुछ ठंडा होने पर २४ हिस्से हाइपो को ३६ हिस्से पानी में घोलकर धीरे२ पहिले घोल में डालते हैं। जब रंगत बिल्कुल हरी हो जाय और बेलघु हुआ क्रोमिक एसिड उसमें न रहे, तब समझते हैं कि घोल ठीक बन गया है। यह लगभग ३०० हिस्से चूने की खाल (Pelt) के लिए काफ़ी है। इसमें के रसायनिक परिवर्तन को इस प्रकार दिखाते हैं:—



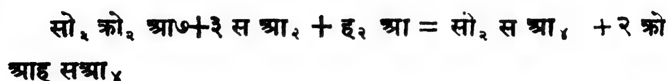
३सो$_2$ क्रो$_2$ आ ७+८ ह$_2$सआ$_4$+४ सो$_2$ स$_2$ आ$_3$=
६ क्रो आह. सआ$_4$+६ सो$_2$ स आ$_4$
+सो$_2$ स$_4$ आ$_6$+५ह$_2$ आ



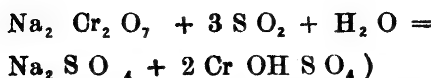
$$(3\ Na_2 Cr_2 O_7 + 8\ H_2 S O_4 + 4\ Na_2 S_2 O_3 = 6\ Cr\ OH\ SO_4 + 6\ Na_2 S O_4 + Na_2 S_4 O_6 + 5\ H_2 O.)$$

फिटकरी और हाइपो का घोलः—१००० हिस्सा फिटकरी को २४८ हिस्से हाइपो के साथ पानी में उबालकर बनाते हैं, जब तक कि सल्फर डाइ-आक्साइड (Sulphur dioxide) का निकलना बन्द न हो जाय।

सल्फर डाइआक्साइड का घोलः—४० हिस्से बाइक्रोमेट को १०० हिस्से पानी में घोल उसमें सल्फ़र डाइआक्साइड छोड़ते हैं। इसमें अम्ल देने की कोई आवश्यकता नहीं, वैसे ही क्रोमियम हाइड्राक्सी सल्फेट बन जाता है। रसायनिक परिवर्तन (Chemical Change) इस प्रकार होता है:—



सो$_2$ क्रो$_2$ आ७+३ स आ$_2$ + ह$_2$ आ = सो$_2$ स आ$_4$ +२ क्रो आह सआ$_4$



$$Na_2\ Cr_2\ O_7 + 3\ S\ O_2 + H_2\ O = Na_2\ S\ O_4 + 2\ Cr\ OH\ S\ O_4)$$

सल्फर डाइक्साइड पास ही भट्ठी में गन्धक को जलाकर बनाई जा

सकती है। इससे यह घोल सस्ता पड़ता है। इससे चमड़ा पकता भी जल्दी है। यह शायद छुट्टा सल्फर डाइआक्साइड के कारण हो जोकि उसमें रह जाती है।

इन घोलों को काम में लाने से पहिले इनका खारित्व अंक (Basicity figure—बेसिसिटी फ़िगर) मालूम कर लेना चाहिए। लघुकारक पदार्थ (Reducing agent) डालने की रफ़्तार, ताप (Temperature) की घटन-बढ़न और अम्ल (एसिड) में के अम्ल-तत्त्व की मात्रा (Percentage of Acid in the commercial product) आदि कारणों से इन घोलों का खारित्व अंक (Basicity figure) हर बार एक सा नहीं बैठता, कुछ अंतर पड़ ही जाता है। यदि अंतर थोड़ा सा है तो कोई बात नहीं, वर्ना प्रयोग करने से पहिले उस घोल का खारित्व अंक ठीक कर लेना चाहिए। अच्छे-बुरे चमड़े का बनना इस पर बहुत कुछ निर्भर है। धोखे से ग़लत खारित्व अंक के घोल को प्रयोग कर चमड़ा ख़राब करने की अपेक्षा घोल को जाँच करके प्रयोग करना अच्छा है॥

खारित्व अंक से मतलब यह है कि उस घोल के पकानेवाले खारी लवण में क्रोमियम और अम्ल (सल्फ्यूरिक एसिड—क्योंकि यही इन घोलों के बनाने में प्रयोग होता है) किस मात्रा (Proportion) में मिले हैं। विश्लेषण द्वारा (By analysis एनेलेसिस से) यह मालूम करते हैं कि घोल की किसी मिक़दार में कितना क्रोमियम और कितना अम्ल है। इससे हिसाब लगाते हैं कि इतने क्रोमियम से तो इतना अम्ल मिला है, तो ५२ हिस्से क्रोमियम से कितना अम्ल मिला है। यह जो अंक (संख्या Figure) आया, यही खारित्व अंक (Basicity figure) है। अस्ल में यह खारी हिस्से को नहीं बल्कि अम्लवाले हिस्से को बताता है कि इतना अम्ल ५२ हिस्से

क्रोमियम से मिला है। शुद्ध क्रोम की फिटकरी में ५२ हिस्सा क्रोमियम १४४ हिस्सा सल्फ्यूरिक एसिड से मिला हुआ है। इसका खारित्व अंक १४४ है। जब सोडे से इसका कुछ अम्ल घटा देते हैं, तो खारित्व अंक घट जायगा। यह खारी लवण हुआ और पहला सादा। परन्तु अंक के घट जाने से पहिला दूसरे की अपेक्षा अधिक खारी मालूम होगा। ९६ अंक के लगभगवाले घोल से अच्छा चमड़ा बनता है। इसमें खारी लवण (Basic salt) क्रोमियम हाइड्राक्सी सल्फेट को आह सआ, है। इस लवण में ५२ हिस्सा क्रोमियम ९६ हिस्सा अम्ल से मिला है। यह पहले से ४८ अंश कम है; यानी इसमें ४८ हिस्से खार है। पर कहने में ९६ को ही खारित्व अंक कहते हैं। अतः ध्यान रखना चाहिए कि यह अंक जितना घटता है उतना ही घोल अधिक खारी हो जाता है, और जितना बढ़ता है, उतना ही कम खारी होता है। क्रोमियम हाइड्राक्साइड (Chromium hydroxide) का खारित्व अंक o है क्योंकि इसमें अम्ल है ही नहीं; पर अस्ल में यह खार है, इसमें अम्ल o है।

दूसरी बात जिससे घोल के अच्छेपन का झट से पता चल जाता है वह तलछट बिंदु (Precipitation point प्रेसीपिटेशन पाइंट) है। इसके लिए घोल को केयोलिन (Kaolin) मिलाकर छानते हैं। छने में के १० सी. सी. (C. C.) में $\frac{\text{एन}}{१०}$ ($\frac{N}{10}$) सोडे का घोल मिलाते हैं और हिलाते जाते हैं। जब तलछट बनने लगता है तो जितने सी. सी. (C. C.) सोडा लगा है, मालूम कर लेते हैं। यही तलछट बिन्दु है। इस तरह क्रोम के साथ मिले अम्ल के सिवाय और भी जितना अम्ल घोल में है, सब मालूम हो जाता है। इसका भी पकाने की क्रिया से सम्बन्ध है।

जैसा अल्यूमिनियम से पकाने के अध्याय में बता चुके हैं, सादा लवण (Neutral salt) से चमड़ा अच्छा नहीं बनता, खारी

(Basic) से अच्छा बनता है, वही बात यहाँ भी है। अकेली फिटकरी अपने अम्ल से खाल को फुला देती है जो खाल के अन्दर शीघ्र चली जाती है और एक-सी रंगत दे देती है। चमड़ा पतला और कम पका निकलता है। धोने पर मसाला घुलकर निकल जाता है। जितना-जितना अधिक खारी लवण प्रयोग होता है, उतनी ही पकाई धीरे-धीरे होती है, पर भारी और अच्छी होती है; रंगत गहरी नीली निकलती है और धोने से बहुत कम लवण निकलता है। इतना होते हुए भी बहुत खारी (Basic) घोल भी हानि करते हैं; क्योंकि ऐसे घोल ठहरनेवाले नहीं होते हैं। पानी मिलाने से या खाल उसमें डालने से वे दो हिस्सों में टूट जाते हैं; अधिक खारी भाग तो तलछट बन जाता है और अधिक अम्लवाला भाग घुला रहता है। ऐसे घोल से चमड़ा बिलकुल खराब हो जाता है। अम्ल से खाल फूलती है और खारी भाग से जो तली पर बैठ रहा है, दाना अधिक पक जाता है। इसी कारण अन्दर ठीक असर नहीं होता। इससे दाना चटखने भी लगता है।

इन मसालों से चमड़ा बनाने के लिए प्रति १०० पा० चूने की खाल (Pelt) पर ५ पा० बाइक्रोमेट का मसाला लेते हैं। ढोल में कोई २००% (प्रतिशत) पानी लेकर उसमें ४% नमक घोल देते हैं; फिर इसमें पकानेवाले घोल (बाइक्रोमेट का मसाला) में से थोड़ा-सा डालते हैं। इसमें पिकिल की हुई खालें डालकर ढोल चला देते हैं। बाक़ी हिस्सा चार-पाँच भागों में बाँटकर एक-एक हिस्सा घंटे-घंटे भर बाद डालते हैं। इस प्रकार हल्का घोल बनाकर मसाले को प्रयोग करने से दाना नहीं खिंचता, मसाला मज़े में अंदर चला जाता है और पकावट सब जगह एकसी होती है। पिकिल के अध्याय में कह चुके हैं कि पिकिल की हुई खालें, बिना अम्ल दूर हुए यदि पानी में डाल दी जायँ, तो फूल जाती हैं, और उनसे फिर अच्छा चमड़ा नहीं बनता। इसीलिए

फूलन रोकने के वास्ते घोल में नमक भी दे देते हैं। कितना नमक लेना चाहिए, यह मसाले के खारित्व अंक और खालों की पिकिल या बेपिकिल की हालत और पिकिल में प्रयोग हुए अम्ल की मात्रा पर निर्भर है। साथ ही जैसा चमड़ा बनाना हो और जैसा क्रोम का मसाला हो उसका भी विचार करना होता है। क्लोराइड के घोल (Liquor) के साथ नमक चमड़े को अधिक नर्म कर देता है और बहुत अधिकता में प्रयोग होने से चमड़ा चपटा हो जाता है। ईटनर की राय है कि सल्फेट के घोल (Chrome sulphate liquors) के साथ नमक प्रयोग करना व्यर्थ है क्योंकि इससे उनका असर अधिक खारी का सा हो जाता है।

इतना मसाला देने के बाद खालों की पहिले बताए अनुसार (पृ० १२३) जाँच करते हैं कि वे पक गई या नहीं। पक जाने पर रात भर तो उनको उसी घोल में पड़ा रहने देते हैं। फिर निकालकर घोड़ी (horse हार्स) पर लगा देते हैं। काम में आए हुए घोल को फेंक देते हैं। दूसरी गठरी इसमें नहीं पकाते, गो इसमें काफ़ी क्रोमियम होता है और गो वह कई प्रकार से फिर काम में लाया जा सकता है। बात यह है कि प्रयोग किए हुए मसाले का खारित्व अंक (Basicity figure) पहिले मसाले का सा नहीं होता। उसको ठीक करने की दिक़्क़त और चमड़ा बिगड़ने के भय से उसको फेंक ही देते हैं। थोड़ी सी जाँच के बाद यह फिर काम में लाया जा सकता है।

क्रोम के खारी लवण बहुत ही अस्थिर होते हैं (Unstable जल्दी से बिगड़नेवाले)। पानी में मिलाने पर वे टूटकर क्रोम के अधिक खारी लवण और अम्ल में बट जाते हैं (Hydrolyse into a more basic salt and acid)। यही कारण है जो क्रोम के बहुत खारी लवण पानी मिलाने पर तलछट देते हैं। यह तलछट क्रोम का उससे

भी अधिक खारी लवण है। इन घोलों में कच्ची खालें डालने से, ये पहिले अम्ल चूसती हैं; चूसते-चूसते जब ये अम्ल से पूरी भर जाती हैं (Saturated) तब और अम्ल का अन्दर जाना बन्द होता है। क्रोम का अन्दर जाना भी लगा ही रहता है और धीरे-धीरे अधिक खारी क्रोम की जरूरत होती है। बाद में अम्ल तो खाल से लिया नहीं जाता और वह बचे हुए मसाले में पहिले की अपेक्षा अधिक हो जाता है। अन्त में आवश्यकता होती है कि ठीक पकने के लिए क्रोम का अधिक खारी घोल लिया जाए। इसके लिए कभी-कभी सोडा देते हैं। परंतु पिकिल (pickling) करके पकाने से यह आवश्यकता नहीं पड़ती। शुरू में तो खाल में के अम्ल के कारण यह मसाले अधिक अम्लवाले लवण का-सा काम देते हैं जिससे दाना खिंचता नहीं और क्रोम का लवण अन्दर चला जाता है। अन्त में इसी खारी लवण (basic salt) के प्रयोग से सोडा या अधिक खारी लवण की आवश्यकता नहीं होती। अर्थात् यही घोल अब अधिक खारी का-सा बर्ताव करते हैं। अम्ल की अपेक्षा अब क्रोम अधिक लिए जाने से घोल में अम्ल इकट्ठा होता-होता अधिक हो जाता है।

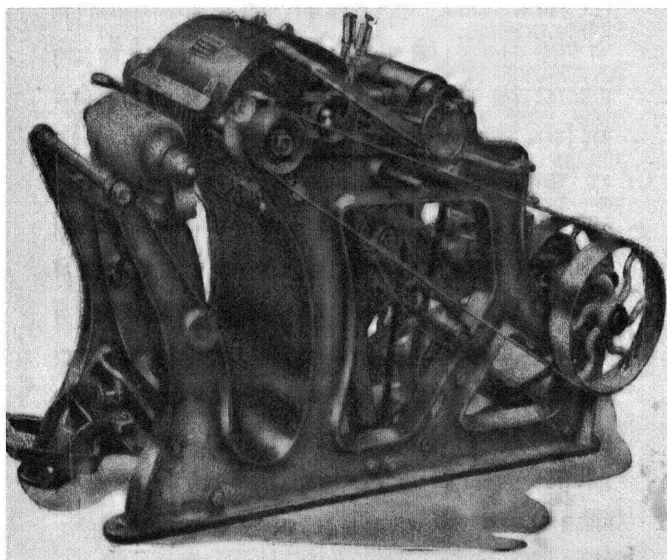
इन बचे हुए घोलों को नई गठरी पर प्रयोग करने से पहिले इनमें के कुछ अम्ल को शिथिल (neutralise) करने की आवश्यकता है। बाद में यही खारी लवण (Basic salts) काम में लाए जा सकते हैं। इन घोलों को आगे को गठरी पर प्रयोग करने की दूसरी तरकीब यह है कि खालों को बिना पिकिल किए चोकर (bating) के बाद सीधे इसी में डाल दें। बार-बार सोडे से अम्ल शिथिल करने से घोल में बहुत-सा सोडियम सल्फ़ेट (Sodium Sulphate) जमा हो जायगा; यह हानि करता है। तीसरी तरकीब यह है कि पिकिल या बे पिकिल की हुई खालों को बचे घोल में डालकर चला लें। जब सारा

क्रोम चुस जाय और पानी में क्रोम की रंगत न रहे, तब खालों को नए घोल में पकावें।

कुछ चर्मकार (tanners) क्रोम से पकाने से पहिले खालों को थोड़ा-सा फिटकरी (एलम फिटकरी Aluminium alum) से पका लेते हैं; या पिकिल में ही फिटकरी दे देते हैं। इससे वे पहिले फिटकरी से पक जाती हैं; तब इन्हें क्रोम के पकानेवाले घोल में देते हैं अर्थात् फिर क्रोम से पकाते हैं। कहते हैं कि इस विधि से अच्छा चिकने दाने का चमड़ा बनता है। ऐसे चमड़े को देखने से पता चलता है कि अन्त में पकावट क्रोम की ही रहती है; इसलिए फिटकरी से पहिले पकाने में कोई विशेष फ़ायदा नहीं है। इस तरह पकाने की विधियें ये हैं:—(१) ५% अल्यूमिनियम सल्फेट (aluminium sulphate), ७½% नमक और ३% सल्फ्यूरिक एसिड को १००% पानी में घोलकर इस घोल में खालों को पिकिल करते हैं। फिर ६% बाइक्रोमेट के शिथिल घोल में चलाते हैं। १५% हाइपो और ४½% हाइड्रोक्लोरिक एसिड से खालों में बने क्रामिक एसिड को लघु (reduce) करते हैं। (२) ३% अल्यूमिनियम सल्फेट या ४½% फिटकरी और ५% नमक के घोल में घंटा भर चलाते हैं, और फिर क्रोम की फिटकरी के खारी घोल में (basic solution) पकाते हैं। (३) कभी-कभी पिकिल करते हैं और फिर इस पिकिल को नमक और सफ़ेदी से दूर कर ३% अल्यूमिनियम सल्फेट और ६—८% नमक के घोल में घंटा भर पकाते हैं। पक चुकने पर घोड़ी पर लगा देते हैं। फिर इनको मामूली तरह से क्रोम के खारी घोल से पकाते हैं।

शिथिलीकरण (Neutralisation न्यूट्रैलाइज़ेशन)—क्रोम से पकी खालों (Chrome Tanned Skins) की तैयारी वनस्पतियों से पकी खालों की तैयारी से भिन्न है। क्रोम से पकी खालें

यदि योंही सूख जायँ, तो फिर इनसे ठीक चमड़ा नहीं बन सकता, इस-लिए इनको पकने के बाद ही तैयार करते हैं। घोड़ी पर लगी खालें (Horsed Skins) जब निचुड़ जायँ, उनको हवा में टाँग कर इतना सुखाते हैं कि किसी हिस्से को चौहरा दबाने से पानी की बूँदें न निकलें; साथ ही खाल कहीं पर सूखे भी नहीं। ऐसी हल्की सूखी (Sammed condition सैम्ड) दशा में इनको चीरनेवाली मशीन पर चीरते



चित्र ११ छिलाई (शेविंग) की मशीन

हैं। जितना मोटा चमड़ा रखना हो उससे दो-तीन नम्बर अधिक मोटा चीरते हैं। दानेवाली तह अच्छे कामों के लिए और गोश्त की तरफ़-वाली अन्दर की पट्टी अस्तर आदि के लिए तैयार करते हैं। खालों को बिना चीरे छीलने की मशीन (शेविंग मशीन Shaving Machine) पर छील कर आवश्यकतानुसार पतला करने से यह अन्दर की

पट्टी टुकड़े-टुकड़े होकर खराब जाती है। चीरने के बाद फिर भी छिलाई करते हैं जिससे दानेवाली पट्टी की अन्दरवाली सतह बराबर हो जाय और छुट्टा रेशे न रहें। मुटाई पुट्ठे पर नापी जाती है; पेट पर यह कम होती है। परन्तु छीलने में सब जगह छिलाई करते हैं और हर जगह एकसी मोटाई रखने की कोशिश करते हैं। क्रोम के चमड़े की छिलाई हाथ की छुरी (Hand shaving knife) से कठिनता से होती है। एक तो अम्ल के कारण छुरी जल्दी-जल्दी कुन्द हो जाती है दूसरे इसकी कटाई कड़ी होती है; छुरी मुश्किल से चलती है। जहाँ छीलकर मुटाई कम करनी हो आफ़त आ जाती है। मशीन से ऐसी खालें आसानी से छिल जाती हैं। इससे भी सारी मुटाई एक ही काट पर नहीं उतारी जा सकती। थोड़ी-थोड़ी छीलकर आवश्यकतानुसार कम की जाती है।

छिलाई की मशीन (Shaving Machine शेविंग मशीन)—(चि० ११) इसमें छीलने की छूरी चूने की छिलाई (Fleshing) की मशीनों की-सी स्पाइरैल (Spiral) छुरी होती है। पर यह छूरी १ फ़ुट लम्बी, जैसे सिंगिल विडथ शेविंग मशीन (Single width shaving machine) में, या २ फ़ुट लम्बी, जैसे डबल विडथ शेविंग मशीन (Double width shaving machine) में, होती है। चमड़े को छूरी के पास लाने के लिए एक बेलन होता है, जो फ़ुट लिवर (Foot lever पैर के पास लगे एक पुर्जे) से दबाकर पास लाया जाता है। छुरी पर धार रखने के लिये रेतीले पत्थर (एमरी emery) का एक पहिया होता है, जो अपनी कीरी पर घूमता हुआ छुरी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक आता जाता रहता है। इसको जब खसकाकर छुरी के पास कर देते हैं, तब छुरी पर सान धरी जाती है। छिलाई से पहिले सान धर लेनी चाहिए। और खासकर वनस्पति से पके चमड़ों में तो अवश्य

ऐसा करना चाहिए क्योंकि लोहे के कण, जो चिनगारी के रूप में निकलते हैं, चमड़े पर जम जाते हैं और वनस्पति पदार्थ से रंगत देते हैं। छुरी में से चमड़े के टुकड़े छुटाने के लिए नीचे को चिपटा हुआ एक लम्बा बेलन का-सा ब्रुश लगा रहता है। यह भी साथ-साथ घूमता रहता है।

इस मशीन पर जब चमड़ा कहीं पर मोटा आ जाता है और छुरी उतना गहरा नहीं काट पाती, चमड़ा खिंचकर मशीन में चला जाता है और कट जाता है। छीलनेवाला इतने ज़ोर को रोक नहीं पाता, यदि वह उसको छोड़ न दे उसका हाथ भी अन्दर खिंचकर कटने का डर रहता है। इससे बचने के लिये अब छीलने की मशीनों में सैमूरजोन्स का यंत्र (Seymour Jones attachment) लगा देते हैं। इसमें एक बेलन होता है जो मशीन से घूमता रहता है और खाल को छुरी से लगाकर धीरे-धीरे आगे बढ़ाता है। ज़ोर इसी पर रहता है। कारीगर तो खाल को सिर्फ़ सँभालता है। इससे उस पर ज़ोर नहीं पड़ता। इस बेलन को फ़ीड रोलर (feed roller) भी कहते हैं। वनस्पति से पकी खालों को छीलने में यह बेलन मोटा होता है और क्रोम की खालों के लिए पतला, क्योंकि इसको छीलने में पकड़ अच्छी चाहिए।

छीलते समय ध्यान रहे कि चमड़ा न तो सूखे और न गीला ही रहे। सूखने से अम्ल गाढ़ा होकर रेशे कमज़ोर करता है। दूसरे ये खालें फिर ठीक नहीं भिगोई जा सकतीं; क्योंकि रेशे अलग-अलग नहीं होते, और उनके बीच में तेल नहीं पहुँच पाता चमड़ा नर्म नहीं होता। गीला रहने पर चमड़ा मशीन के बेलन से चिपट जाता है, आगे नहीं बढ़ता और कट जाने का डर रहता है। छिलाई हो चुकने पर फिर भिगो देना चाहिए।

चाहे जिस विधि से—दो घोल या एक घोल की विधि से—खालें पकी हों, छिलाई के बाद उनको ढोल में धोते हैं। धोने के लिये ५५ श०

(55° C) का गर्म पानी खोखली नली द्वारा (through the hollowaxle) ढोल में छोड़ते हैं। धोवन का पानी छेददार ढक्कन में से निकलता रहता है। जब इस पानी में कोई रंगत न रहे, क्रोम का रंग उसमें आना बन्द हो जाय तब खालों में का अम्ल शिथिल करते हैं। रेशों पर जो क्रोम का लवण जमता है जिससे पकावट होती है वह खारी लवण (basic salt) अवश्य होता है, फिर भी खाल में बहुत-सा छुट्टा अम्ल होता है जिसको शिथिल कर देना चाहिए। यदि यह शिथिल न किया जाय तो तेल का घोल (fat liquor फ़ैट लिकर) फट जाता है यानी तेल ठीक नहीं लग पाता। दूसरे, सूखने पर यह रेशों को कमज़ोर कर देता है।

शिथिल (neutralise) करने के लिये ४५°श० (45°C) के पानी में खालों को ढोल में चलाते हैं, और खार (alkali एलकैली) का घोल खोखली नली द्वारा चलते ढोल में छोड़ते हैं। खालों के ठीक-ठीक शिथिल हो जाने को जाँच इस तरह करते हैं:—खाल को कहीं पर से धोकर, दबाकर फिर सतह को धोते हैं; और उस धुली जगह पर नीला लिटमस (blue litums) का काग़ज़ लगाकर दबाते हैं। यदि लाल हो जाय तो अम्ल खालों में बाक़ी है और खार देने की जरूरत है; यदि इसका रंग न बदले तो खालों में छुट्टा अम्ल नहीं है। खार (alkali) सिर्फ़ इतना ही देना चाहिए कि यह छुट्टा अम्ल दूर हो जाय, इससे अधिक नहीं। इससे अधिक खार से क्रोमियम हाइड्राक्सी सल्फेट क्रोमिक आक्साइड (Chromic Oxide) में बदल जाता है, जिसमें पकाने की शक्ति नहीं है।

केवल धीमे खार (weak alkali वीक एलकैली) इस काम में लाने चाहिए। बली (strong) खार से ज़रा-सी अधिकता हो जाने पर चमड़ा कठोर और खाल-सा हो जाता है। धीमे खार से ऐसा नहीं

होता। इसलिये सुहागा (Borax बोरेक्स) सबसे अच्छा है। इसको कुछ अधिकता होने पर भी बिगड़ने का कोई डर नहीं। खालों को छिलाई के बाद पानी में डालने से पहिले तौल लेते हैं। छिली खाल की इस तौल पर २% (१०० सेर खाल के लिये दो सेर) सुहागा चाहिए; घोल में सुहागा ½% (१०० सेर पानी में आध सेर) से अधिक न होना चाहिए। खार पकावट को हटा देती है, जिससे पकी हुई खाल फिर कची खाल के रूप में बदल जाती है; क्रोम से पके चमड़े पर खार का इतना असर नहीं होता जितना वनस्पति से पके पर। अम्ल को दूर करने के लिये जो और-और चीजें प्रयोग हो सकती हैं, ये हैं:—
(१) सोडियम सिलीकेट (sodium silicate) या वाटर ग्लास (water glass)। यह सुहागे से तेज है (२) हाइपो (Hypo) और खड़िया (whitening)। (३) दो हिस्सा सोडा (soda) और एक हिस्सा नौसादर (Ammonium chloride; Sal ammoniac)। (४) खड़िया (chalk) या मग्नीशिया (magnesia)। (५) सोडियम कार्बोनेट या बाई कार्बोनेट (Sodium carbonate या bicarbonate) या अमोनिया (ammonia)। इन चीजों से इकसार फल लाना कठिन है; और इनकी अधिकता से चमड़ों के बिगड़ने का भय है। अम्ल शिथिल हो जाने के बाद खालों को फिर ५५° श० (55°C) के गर्म पानी से धो डालना चाहिए। खार के पानी को निकालकर चलते ढोल में यह पानी लगा देते हैं, जिससे खालें खूब धुल जायँ। यदि खालें धोई न जायँ तो खार (alkali) से रँगने (dyeing) के लिए जो रंग प्रयोग होंगे वे ख़राब हो जायँगे।

दो घोल और एक घोल से बने चमड़े में अन्तर केवल गन्धक का है। परन्तु हाइपो से बने क्रोम के घोल से पकाने में या हाइपो से अम्ल शिथिल करने से एक घोल से पके चमड़े में भी गंधक दी जा सकती है।

छिली खाल को धोने के बाद या धोने से पहिले हाइपो के घोल में देने से कम या अधिक गंधक उसके अन्दर पहुँचती है।

रँगाई (Dyeing डाइंग)

अब खालों को रँगना है और उनमें तेल देना है। प्रायः पहिले रँगते हैं, क्योंकि तेल देने के बाद फिर रंग हमवार नहीं आता। रँगना और तेल देना अम्ल दूर करने के बाद ही फ़ौरन् करना चाहिए, खालों को वैसे न पड़े रहने देना चाहिए। इस हालत में चमड़े के अन्दर क्रोम के लवण (Chromium salt) में हेर-फेर होता रहता है जिससे क्रोम का अधिक खारी लवण (more basic salt) और अम्ल बनता है। यह हानि करता है। रँगने और तेल देने के बाद सुखा लेना चाहिए।

रँगने से पहिले धुली खालों की जाँच कर लेते हैं कि कौन-कौन-सी किस रंगत के योग्य हैं। इस तरह छाँटकर अलग-अलग कर लेते हैं। काले रंगत में तो सब ऐब ढक जाते हैं, पर हल्की रंगतों जैसे पीली, हरी, नारंगी, बादामी (brown) के लिए बेऐब खालें होनी चाहिएँ। वे ऐब यह हैं:—(१) लोहे के धब्बे (Iron या salt stains) जो टैनिन (tannin) से मिलकर काले हो जाते हैं। हल्की रंगत देने में ऐसे चमड़ों पर सब जगह एक-सी रंगत नहीं आती। (२) दाने (ग्रेन) पर किसी तरह के दाग़, खुर्चट के निशान, पहिचान के निशान, धारिएँ, छिलाव न होने चाहिए। दाना कमज़ोर न होना चाहिए। जिन खालों पर इनमें से कोई भी बात होती है, रंगत एक-सी नहीं आती। ऐसी खालों को तो काला रंग देने से ख़ासे दाम उठ आते हैं—बादामी रँगने पर ऐसे नहीं।

कितने ही फल-फूलों में रंग होते हैं; पुराने ज़माने में इन वनस्पति पदार्थों से जो कुछ रंग प्राप्त होते थे, वे ही चमड़ा रँगने के काम में लाए

जाते थे। इस रँगना शब्द के बारे में याद रखना चाहिए कि चर्मकार चमड़ा पकाने को रँगना और पकाने के घोलों (Tanning liquors) को रंग कहते हैं। वनस्पति पदार्थों से पकाने के घोल रंगतदार होते हैं, शायद इसी से इनको रंग कहते हैं। इस गड़बड़ को दूर करने के लिए इस पुस्तक में रंग शब्द रँगने (dyeing डाइंग) के लिए प्रयोग किया है। जब से कोलतार (Coal Tar) से रंग (Dyes डाइज़) बनने लगे हैं, यह पुरानी विधि छूट गई है। इन कोलतार के रंगों से चाहे जिस रंगत का चमड़ा रँगा जा सकता है। यूरोप में, ख़ासकर जर्मनी में, इन रंगों के बनानेवाले कितने हो कारख़ाने हैं। वे सब एक-सा ही रंग नहीं बनाते। हर रंगत का रंग बनाते हैं और उसका कुछ नाम रख देते हैं। ये रंग या तो एक ही रसायनिक सम्मेलन (Chemical compound) होते हैं या कई ऐसे ही सम्मेलनों के मेल से बने होते हैं (मिक्सचर्स mixtures)। भिन्न-भिन्न कार्यालयों के एक ही रंगत के रंग भी एक से नहीं होते ; ज़रा से हेर-फेर में रंगों की रंगत काफ़ी बदल जाती है। कहने का मतलब यह है कि अगर पीली रंगतवाला रंग क, ख, ग, तीन कारख़ानों ने बनाया है : क ने उसका नाम रक्खा लेदर यलो एस एक्स (Leather yellow S X); ख ने एसिड यलो ७६२१० (Acid yellow 79210); ग ने एरोडेल यलो (Aredale yellow)। कहने को तीनों रंग पीले (yellow) हैं, पर उनके नाम भिन्न-भिन्न हैं। हो सकता है कि यह भिन्न-भिन्न रसायनिक सम्मेलन हों। इनसे रंगत भी भिन्न-भिन्न आती है—किसी से पीली नींबू की-सी रंगत, किसी से हरापन लिए और किसी से लाली लिए हुए। इसलिए सिर्फ़ नाम से पता नहीं लग सकता कि किस रंग से कैसी रंगत निकलेगी। इसके लिए रँगकर देखने ही से पता लग सकता है कि कौन-सा रंग ठीक रहेगा।

बहुत-सी ऐसी रंगतें (Shades) हैं, जिन्हें रँगने के लिये कई

रंग मिलाकर रँगना होता है। मुख्य रंगतें तो लाल, पीली और नीली हैं, बाक़ी जितनी रंगतें हैं वे इन्हीं से मिलकर बनी हैं। नारङ्गी रंगत पीले और लाल से मिलकर, हरी पीले और नीले से मिलकर बनी है। यही रंगतें सूर्य की किरणों को तिपहल काँच (Prism प्रिज़्म) में से निकालने पर दिखाई देती हैं। हर रंगत के लिए रंग बनानेवाले भिन्न-भिन्न रंगों को मिलाकर बेचते हैं। रँगनेवाले भी मेल मिलाने के लिए अपनी आवश्यकतानुसार इन रंगों को मिलाकर इस्तेमाल करते हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि एक पीलिया हरा रंग पीले और नीले को मिलाकर ही बना है। कोलतार से बना हुआ ऐसा रसायनिक सम्मेलन हो सकता है, जो बिना कुछ मिलाए ही पीलिया हरा रंगत देता हो। इसी प्रकार और रंगतों के बारे में भी है। एक भीगे ब्लाटिंग काग़ज़ पर सूखे रंग को छिड़कने से अगर उसमें कई रंग मिले होंगे तो कहीं पर कैसी, कहीं पर कैसी रंगत दिखाई देगी। इन रंगतों से पहिचाना जा सकता है कि उसमें कौन-कौन से रंग हैं। जब घुलकर सब एक हो जाते हैं तब एक अलग ही रंगत (shade) निकलती है।

किसी रंग से रँगने में अन्त में क्या रंगत (Shade शेड) होगी, रंग के नाम मात्र से नहीं कहा जा सकता। भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थों से पके हुए चमड़ों (On different Tannages) पर एक ही रंग से भिन्न-भिन्न रंगतें निकलती हैं। जो रंगत गीले में होती है, सूखे पर नहीं रहती। घोल की रंगत कुछ और ही होती है। आगे के मसालों से रंगत में कुछ और फ़र्क़ होता है; घोटा फेरने पर रंगत और भी बदल जाती है। इसलिये किसी रंग से चाहे वह सादा हो या मिला हुआ, जो रंगत निकलेगी उसका ठीक पता घोटा फेरने के बाद लगता है। रंग पसन्द करते समय इन सब बातों का ध्यान रखना चाहिए। अन्तिम रंगत इन सबके असरों पर निर्भर है।

रँगने की विधि के अनुसार कोलतार के रंगों (Coaltar colours-dyes) के ये भेद हैं:--(१) डाइरैक्ट कलर्स (Direct colours), (२) एसिड डाइज़ (Acid Dyes)—आम्लिक रंग, (३) बेसिक डाइज् (Basic dyes)—खारी रंग।

डाइरेक्ट कलर्स वे रंग हैं जो बिना और किसी चीज़ के रँग सकते हैं। आम्लिक रंग (Acid Dyes) वे हैं, जिनसे रँगने के लिए अम्ल (Acid) देने की ज़रूरत होती है। ये लवण (Salts) हैं। इनमें खारी हिस्सा (Alkali radicle) सोडियम(Sodium) है और अम्ल-वाला हिस्सा (Acid radicle) एक चेतन अम्ल (Organic Acid आर गेनिक एसिड) है। रँगने की शक्ति इस अम्ल (Acid) में है। ये रंग पानी में घुल जाते हैं। जब तक इस लवण में से अम्ल द्वारा यह चेतन अम्ल छुड़ाया न जाय, यह रंग रँग नहीं सकते। कभी-कभी इस छुटाए हुए अम्ल का रंग सफ़ेद या और किसी रंगत का होता है; रँगने पर अस्ल रंगत खुलती है। इनमें से कुछ रंग ऐसे भी हैं जो बिना अम्ल के रँगते हैं। आम्लिक रंगों (एसिड डाइज़) से रंगत हल्की पर एक सी हमवार (uniform) आती है चाहे दाना कहीं ख़राब हो या अच्छा। धूप में कुछ पक्के भी होते हैं। अम्लों में से सल्फ्यूरिक एसिड इनके साथ इस्तेमाल होता है। इससे हानि यह है कि अधिक हो जाने से यह चमड़े को कमज़ोर कर देता है। इसके बजाय फ़ारमिक एसिड (Formic acid) या सोडियम बाइसल्फेट (Sodium bisulphate) प्रयोग होता है। सल्फ्यूरिक एसिड वज़न में रंग के वज़न के बराबर लेते हैं; फ़ारमिक एसिड दुगुना या तिगुना। और अम्ल भी इस काम में आ सकते हैं, परंतु उनसे ऐसी अच्छी रंगत नहीं आती जैसी सल्फ्यूरिक एसिड से। फ़ार्मिक एसिड से भी सल्फ्यूरिक एसिड की अपेक्षा कम रंगत आती है।

खारी रंग (Basic Dyes बेसिक डाइज़) भी लवण हैं। इनमें रँगनेवाला हिस्सा एक चेतन खार (organic base आरगेनिक बेस) है। इनमें से थोड़े से ऐसे हैं जो पानी में नहीं घुलते: इनको मद्यसार (alcohol अल्कोहाल) में घोलते हैं। इनमें की रँगनेवाली खार (Base) पानी में कम घुलती है। रंग के घोल में सोडा दे देने से यह खार तली में बैठ जाती है। इनकी रंगत में आम्लिक रंगों की रंगत की अपेक्षा अधिक तेज़ी होती है। इनमें से बहुत-सी ऐसी हैं जो धूप में उड़ जाती हैं। यदि इन खारी रंगों का गाढ़ा घोल इस्तेमाल किया जाय तो चमड़े की सतह पर ताँबे की-सी झलक आती है: इसे ब्रॉंज़िग (Bronzing) कहते हैं। खारी रंग तेज़ी से रँगते हैं। इसी से कभी-कभी चमड़ा चितकबरा रँगा जाता है और रंगत अन्दर तक नहीं जा पाती। जिस जगह दाना ख़राब होता है, वहाँ इनसे रंगत गहरी हो जाती है। इसलिए ऐसी खालों को आम्लिक रंगों से रँगते हैं। रँगते समय यदि खारी रंगों के घोल में थोड़ा-सा एसेटिक एसिड (Acetic acid) या लैक्टिक एसिड (Lactic acid) दे दिया जाय, तो यह धीरे रँगती हैं। अक्सर चमड़ों को पहिले आम्लिक रंगों (एसिड डाइज़) से रँगते हैं: इससे ख़राब जगह पर भी रंगत ठीक आ जाती है। फिर खारी रंगों से रँगते हैं: इससे रंगत चटक हो जाती है। खारी रंगों से रँगने में अस्थायी भारीपन का पानी (Temporary hard water) नहीं इस्तेमाल करना चाहिए। यदि पानी ऐसा हो, तो उसमें एसेटिक एसिड (Acetic acid) डालकर इस भारीपन (hardness) को दूर कर देना चाहिए। रँगने के घोल में नमक दे देने से सब रंग चुस जाता है। रंगों को गर्म पानी में घोलकर और छानकर इस्तेमाल करना चाहिए। खारी रंगों (Basic dyes) को ८०° श० (80° C) से ज़्यादा गर्म न करना चाहिए। आम्लिक और खारी रंगों

(Acid and basic dyes) को एक ही घोल में न मिलाना चाहिए, क्योंकि दोनों के मिलने से रसायनिक परिवर्तन (Chemical change) होता है, जिससे एक न घुलनेवाला पदार्थ बनता है, जो तलो पर बैठ जाता है; दोनों रंग व्यर्थ जाते हैं।

आम्लिक और खारी रंगों को पहिचान यह है कि यदि पानी में इनको घोलकर उसमें टैनिक एसिड (Tannic acid) का घोल डालें, तो खारी रंग तलो पर बैठ जाते हैं; आम्लिक रंग नहीं बैठते। एक हिस्सा टैनिक एसिड को १० हिस्से पानी में घोलकर उसमें १ हिस्सा सोडियम एसीटेट (Sodium acetate) मिलाने से यह जाँचने का टैनिक एसिड का घोल तैयार हो जाता है।

क्रोम का चमड़ा इन रंगों से सीधे ही नहीं रँगा जा सकता और न ऐसे रँगना ही चाहिए, क्योंकि न तो यह रंग क्रोम के चमड़े पर अच्छी तरह से जमते ही हैं और न ऐसे रँगने से चमड़े पर चमक आ सकती है। इसलिए इनको पहिले मार्डेन्ट (Mordant) करते हैं। मार्डेन्ट वह चीजें हैं जो चमड़े को रंग जमने योग्य बना देती हैं। क्रोम के चमड़े के लिए वनस्पति पदार्थ (Vegetable products) मार्डेन्ट के तौर पर प्रयोग होते हैं; पर इसके लिए वे पदार्थ प्रयोग करने चाहिए जिनमें टैनिन बहुत कम हो। आवश्यकता यह है कि सिर्फ सतह पर ही टैनिन का असर हो, अंदर तक नहीं। टैनिन की अधिकता से चमड़े का खिंचाव उसका खास लुचाव (Toughness) और नर्मी कम हो जाती है। काली रंगत रँगने के लिये लाग वुड (Logwood) या उसका सत हिमेटिन (Hematin—Logwood extract) अमोनिया के साथ प्रयोग करते हैं। बिना अमोनिया (Ammonia) दिये रंगत ठीक नहीं आती। लगभग दो प्रतिशत (%) हिमेटीन (१०० सेर के लिए २ सेर) काम में लाते हैं। बादामी रंगत रँगने के

लिए सुमैक (Sumac), फ्यूस्टिक (Fustic), पीच वुड (Peach wood), गैम्बीयर (Gambier) आदि काम में लाते हैं। जैसी रंगत लानी हो, वैसा ही इनको मिलाते हैं। इनमें से चाहे कोई अकेली प्रयोग हो या मिलाकर, कुल जमा में छिलाई की तौल पर २% लेते हैं।

डार्क ब्राउन के लिए			१½%	गैम्बीयर का सत			और	०.५%	फ्यूस्टिक	का	सत
मीडियम	"	"	१%	"	"	"	"	१.०%	"	"	"
लाइट (हल्के)	"	"	१%	"	"	"	"	१.५%	"	"	"

लेने से अच्छी रंगत आती है। इसी प्रकार बहुत से मेल आवश्यकतानुसार किए जा सकते हैं। ये उस ख़ास रंगत पर निर्भर हैं जो रँगनी हो।

इनका असर हो चुकने पर उसी घोल में यदि खारी रंग डाल दिये जायँ, तो बचे हुए तथा छुट्टा टैनिन से बहुत-सा रंग तली पर बैठकर बेकार जाता है। इसलिए उसमें रंग डालने से पहिले ऐसे मसाले डालते हैं, जिनसे कि टैनिन का यह असर दब जाय : इनको फ़िक्सेटिव (Fixative) कहते हैं। इनसे रंगत भी बदल जाती है, इसलिए इनको स्ट्राइकर (Striker) भी कहते हैं। टारटर एमैटिक (Tartar Emetic), एन्टीमनी पोटाशियम टारटैरेट (Antimony Potassium Tartarate), एन्टीमनी लैक्टेट (Antimony Lactate) और टिटाक्स (Titox)—टाइटेनियम पोटाशियम आक्सलेट (Titanium Potassium Oxalate) इस मतलब के लिए प्रयोग होते हैं। यह केवल ०.५% (१०० सेर के लिए आध सेर) लिए जाते हैं। इनको पानी में घोल, मार्डेन्ट हो चुकने पर, उसी घोल में डाल देते हैं। कुछ देर बाद जब इनका असर हो लेता है, उसी में घुले छने रंग डाल देते हैं। १% से २% तक रंग काफ़ी होता है। काले के लिए निग्रोसीन (Nigrosine) नामी रंग इस्तेमाल करते हैं। इसके साथ

अम्ल भी देते हैं। टिटाकस या लोहे के लवणों (Iron salts) से अच्छी काली रंगत आती है।

रँगाई ट्रे (Tray) या पैडिल (Paddle) या ढोल (Drum) में करते हैं। रँगने का पुराना अंग्रेजी तरीक़ा एक ट्रे में दो-तीन दर्जन चमड़ों को उलट-पलटकर रँगने का है। रंग का घोल दो-तीन हिस्सों में डाला जाता है, और जब तक चमड़ों पर ठीक रंगत नहीं आ जाती चलाते रहते हैं। चमड़ों की गोश्तवाली सतह को वे रँगा रखने या रंग की बचत करने के मतलब से दो-दो चमड़ों को गोश्त की सतह से गोश्त की सतह मिलाकर मेज पर डालकर स्लीकर से दबाकर फैला देते हैं : रँगने में वे फिर अलग नहीं होतीं। कभी-कभी रीढ़ पर से चमड़े को ऐसा दोहरा करते हैं कि रीढ़ (ridge) के एक तरफ़ का हिस्सा दूसरी तरफ़ के हिस्से से गोश्त से गोश्त पर जुटा रहे। जब एक रंगत की बहुत-सी खालें रँगनी होती हैं, तो पैडिल में रँगते हैं। इसमें गोश्त की सतह भी रँग जाती है। जर्मनी में दो ट्रे में करके रँगते हैं और हर एक में चमड़े की सिर्फ़ एक-एक जोड़ी डालते हैं। चमड़े पहिले दो दफ़े प्रयोग की हुई घोल में जाते हैं जिसका लगभग सब रंग चुस गया हो। कुछ देर लौटा-फेरी के बाद वे दूसरी ट्रे में रँगे जाते हैं जिसमें से सिर्फ़ एक जोड़ी चमड़ा निकला हो। पहिले घोल को फेंक उसमें नया घोल बना, उन चमड़ों को फिर इसमें चलाते हैं कि जब तक रंगत ठीक न आ जाय। इस तरह रँगने में कुल चन्द मिनट लगते हैं। नया घोल बनाने के लिए, ट्रे में गर्म पानी लेकर थोड़ा-सा रंग का तेज घोल (Strong solution) डालते हैं। इन दोनों विधियों से बहुत-सा रंग ख़राब जाता है।

ढोल (Drum) में रँगना सबसे अच्छा रहता है : पानी कम लेना पड़ता है और रंगत हमवार (Uniform) आती है : रंग कम ख़राब जाता है। रँगने के लिए कुल १००% (१०० सेर छिले चमड़े के लिए

१०० सेर) पानी लेते हैं। नाँद (Vat वैट) में रँगने में पानी अधिक चाहिए ; रंग भी ज्यादा खराब जाता है, और दो-तीन आदमियों को हर समय काम करना पड़ता है। रँगाई ५५° श० (55° C) पर करने से रंग अच्छी तरह चुसता है। इतनी गर्म चीज़ों को हाथ से छूना कठिन होता है, इससे धब्बे पड़ जाने का डर रहता है। ट्रे में एक दो खाल रँगने की कोई बात नहीं, पर बहुत-सी रँगने में परेशानी बढ़ जाती है ; समय अधिक लगता है ; मेहनत होती है ; तथा कई आदमी चाहिए। बचत बस इसमें होती है कि एक ही तरफ़ रँग सकने से कुछ कम रंग लगता है। ट्रे में ५५° श० का ताप रखना कठिन हो जाता है।

ब्रुश से रँगने (Brush dyeing) में होशियारी चाहिए। जब रंग बहुत क़ीमती हो, या एक ही तरफ़ रँगना हो, या हर चमड़े को अलग-अलग रँगना हो, तो ब्रुश से रँगते हैं। क्रोम के चमड़े पर इस प्रकार रंग कठिनता से चढ़ता है। वनस्पति पदार्थ से पके हुए चमड़े (Vegetable-tanned leathers) अक्सर ब्रुश से रँगे जाते हैं। इस काम के लिये ०·५% वाला रंग का घोल इस्तेमाल करते हैं।

चमड़े रँगने के नुसख़े

१—काला रँगना :—(१)

अम्ल को दूर करने और फिर घोलने के बाद चमड़ों को ढोल में डालकर उसमें ६०°श० (C) का इतना पानी डालते हैं कि वे भली प्रकार तैर सकें। फिर छिलाई के वज़न पर १०० पाउन्ड (५० सेर) छिले चमड़े के लिए

२ पा० (१ सेर) दानेदार हिमेटीन (Haematin)
१ पा० (½ सेर) दानेदार निग्रोसीन (Nigrosine)
१ आ० (½ छं) अमोनिया लेते हैं।

हिमेटीन को पानी में घोल उसमें अमोनिया मिलाते हैं। निग्रोसोन को अलग खौलते हुए पानी में घोलते हैं। चलते ढोल में हिमेटीन का घोल डालकर २० मिनट चलने देते हैं। फिर निग्रोसीन का घोल डालकर कुल पौन घंटा चलने देते हैं। काली रंगत को गहरा करने के लिए ½—१ पा. (२—४ छं) हरा कसीस (Green vitriol ग्रीन विट्रियल) पानी में घोल और ज़रा-सा एसेटिक एसिड मिलाकर ढोल में डाल देते हैं। हरा कसीस न देकर १ पा. (½ सेर) टिटाक्स गर्म पानी में घोलकर डाला जा सकता है। १५ मिनट ढोल को और चलने देते हैं। लोहे (हरे कसीस) की अपेक्षा टिटाक्स अच्छा रहता है।

(२) १०० पा. (५० सेर) छिले चमड़े के लिए २ पा. (१ सेर) दानेदार हिमेटीन

१ पा. (½ सेर) डाइरेक्ट ब्लैक (Direct Black)

१ आ. (½ छं) अमोनिया लेते हैं।

पहिली विधि के अनुसार हिमेटीन को अलग और डाइरैक्ट ब्लैक को अलग घोलकर, पहिले डाइरेक्ट ब्लैक को ढोल में डालते हैं। बीस मिनट चलने के बाद हिमेटीन का घोल ढोल में छोड़ते हैं। इसके बाद २५ मिनट और चलने देते हैं। अगर बहुत काला चाहिए तो दो तिहाई घोल को फेंककर, १ पा. (½ सेर) बेज़िक ब्लैक (Basic Black) बाक़ी घोल में डालकर ढोल (Drum) आध घंटा और चला देते हैं। बेज़िक ब्लैक को ८५° श० के पानी में घोलकर और उसमें थोड़ा-सा एसेटिक एसिड मिलाकर इस्तेमाल करना चाहिए।

बादामी रँगना :—

हल्का टैन ब्राउन (light tan brown)

ऊपर कहे-अनुसार चमड़ों को ६०° श० के काफ़ी पानी में ढोल में चला देते हैं। उसमें फिर प्रति १०० पा. (५० सेर) छिले चमड़े के लिये

२ पा० (१ सेर) फ्यूस्टिक का सत और १ पा० (½ सेर) गैम्बीयर का सत घोलकर छोड़ देते हैं। जब यह रँगनेवाली लकड़ी के टैनिन के मार्डेन्ट (Tannin dyewood mordant) सब चुस जायँ, ½ पा० (¼ सेर) टिटाक्स घोलकर उसमें डाल देते हैं। इसके बाद १२ आउन्स (६ छं) सिट्रोनीन आर (Citronine R) (British Dyestuff Corporation ब्रिटिश डाईस्टफ कारपोरेशन की) और ४ आ. (२ छं) एसिड ब्राउन १५८० (क्लेटन Clayton का) को घोलकर आधा घोल ढोल में डालते हैं। १५ मिनट बाद ८ आ० (४ छं) सोडियम बाईसल्फेट (Sodium bisulphate) को घोलकर ढोल में डालते हैं। १५ मिनट ढोल चलने के बाद रंग का बाक़ी घोल भी डाल देते हैं। कुल घंटा-भर रंग के साथ ढोल में चलाते हैं जिससे कि रंग पूरी तरह चुस जाय।

मीडियम ब्राउन :—

पहिले की तरह १०० पा० (५० सेर) के लिए १½ पा० (१२ छं) गैम्बीयर और १½ पा० (१२ छं) फ्यूस्टिक का सत लेते हैं। और ½ पा. (४ छं) लेदर यलो एस एक्स (Leather Yellow S X) (एलायन्स Alliance का),

१ पा. (८ छं) एसिड ब्राउन (ब्रिटिश डाइस्टफ़ कारपोरेशन का)
१½ आ. (४ तो.) एसिड ग्रीन जी (" " " ")
१३ आ. (६½ छं) सोडियम बाइसल्फ़ेट
लेकर वैसे ही रँगते हैं जैसे नम्बर एक में।

डार्क ब्राउन :—

मार्डेन्ट १ पा. (८ छं) फ्यूस्टिक का सत
२ पा. (१ सेर) गैम्बीयर " "
४ आ. (२ छं) पीच वुड " "

रँगने के लिए १ पा. (८ छं) चाकोलेट ब्राउन (Chocolate Brown) (ब्रि. डा-स्ट. का. का)

½ पा. (४ छं) एजोफ्लेवीन (Azoflavine) (क्लेटन की)

२½ आ. (६ तो.) वूल ग्रीन एस (Wool Green S)

१२ आ. (६½ छं) सोडियम बाई सल्फेट

खारी रंगों (Basic Dyes बेजिक डाइज) से रँगनाः—

लाइट ब्राउन (हल्का)	मीडियम ब्राउन (बीच का)	डार्क ब्राउन (गहरा)
मार्डेन्ट के लिएः—		
२% फ्यूस्टिक	१½% फ्यूस्टिक	१% फ्यूस्टिक
१% गैम्बीयर	१½% गैम्बीयर	२% गैम्बीयर
		¼% पीचवुड
स्ट्राइकर (Striker):—		
½% टिटाक्स	½% टिटाक्स	½% एन्टीमनी लैक्टेट या टारटर एमेटिक
रँगने के लिएः—		
१% आरोमीन (Auromine)	½% आरोमीन	½% क्राइसायडीन (Chrysoidine)
¼% बिसमार्क ब्राउन	½% बिसमार्क ब्राउन	½% बिसमार्क ब्राउन
	½% मैलेकाइट ग्रीन	१/१०% मैलेकाइट ग्रीन

इन रंगों से रँगने में स्ट्राइकर का घोल देने के बाद सारा घोल ढोल में से निकाल देना अच्छा होता है। चमड़ों को धोकर रँगने के लिए और पानी लेना चाहिए। कुल रंग को दो हिस्सों में डालना चाहिए और कम-से-कम ४५ मिनट तक रंग में चलाना चाहिए।

आर्ट (Art) या पास्टेल (Pastel) रंगतों के लिए निम्न विधि अच्छी है। आर्ट ग्रीन (हरा):—

चमड़ों को ६०° श० (C) पर ढोल में ३% (१०० सेर के लिए ३ सेर) सुमैक के सत के साथ मार्डेन्ट कर लो। ४५ मिनट चलने के बाद ½ पा० (४ छँ) एसिड ग्रीन (Acid Green) घोलकर उसमें डाल दो और आधा घंटा चलने दो।

इसमें बिना अम्ल (Acid) के रँगना ठीक है। आम्लिक रंगों के बजाय डाइरेक्ट कलर्स (Direct Colours) प्रयोग किए जा सकते हैं। इसी प्रकार रंग आदि का हेर-फेर करके क्रोम का चमड़ा कितनी ही रंगतों का रँगा जा सकता है।

तेल देना—फैटलिकरिंग (Fatliquoring)

क्रोम के चमड़े में नर्मी देने के लिए साबुन (Soap) और तेल का मिला हुआ घोल देते हैं। साबुन को थोड़े-से पानी में गर्म करके घोल लेते हैं और फिर उसमें तेल फेंट कर मिलाते हैं। जब रंगत सफ़ेद हो जाती है, थोड़ा-थोड़ा करके पानी मिलाते हैं। यह फेंटने का काम बड़े पैमाने पर इमलसीफ़ायर (Emulsifier) नामी मशीन में करते हैं जो एंजिन से चलती है। थोड़े मसाले का इमल्शन हाथ से खूब मिलाने से, मट्ठा बिलोने की रई से या लोहे की रई (Churner चर्नर) से चलाने से बन जाता है। अच्छा इमल्शन बनाने के लिए प्रायः एक यंत्र प्रयोग करते हैं जो एक २ फुट ऊँचा गोल मोपा होता है। इसके अन्दर ठीक-ठीक आती हुई एक चलनी होती है। चलनी में एक खड़ा डंडा लगा रहता है। इसी डंडे को पकड़कर चलनी को ऊपर-नीचे धकेलते हैं। नीचे दबाने से चलनी के छेदों में होकर तेल साबुन ऊपर आता है; और ऊपर खींच लेने पर नीचे चला जाता है। इस तरह चलनी को चलाने से तेल और साबुन खूब अच्छी तरह मिल जाते हैं।

साबुन और तेल खूब मिल जाने पर पानी मिलाते समय भी चलाते रहना चाहिए। इससे अच्छा घोल तैयार होता है। यह घोल नमक की तरह का घोल नहीं है; इसमें तेल दिखाई नहीं देता और ठीक इसी तरह घुला है जैसे दूध में घी। दूध की ही सी रंगत होती है। ऐसे घोल को इमल्शन (Emulsion) कहते हैं।

इस काम के लिए नर्म (Soft साफ्ट) और शिथिल (Neutral) साबुन प्रयोग करना चाहिए। नर्म साबुन उसे कहते हैं जो कास्टिक पोटाश (Caustic Potash) से बना हो। शिथिल (न्यूट्रल Neutral) से यह मतलब है कि उसमें छुट्टा खार न हो। ऐसा साबुन इस प्रकार बनाया जाता है; एक पा० (८ छं) कास्टिक पोटाश को २½ पा० (१¼ सेर) पानी में घोलकर धीरे-धीरे लकड़ी से खूब हिलाते हुए ५ पा० (२½ सेर) अंडी के तेल (Castor oil) में मिला देते हैं। चौबीस घंटे योंही छोड़ देने पर बहुत अच्छा साबुन तैयार हो जाता है। साबुन के साथ जो तेल इस्तेमाल किए जाते हैं, ये हैं:—अंडी का तेल (Castor oil), नीट्सफुट आयल (Neatsfoot oil), जैतून का तेल (Olive oil), काड मछली का तेल (Cod oil), साड आयल (Sod oil), और डैग्रास (Degras)। साथ में कभी-कभी खनिज (Mineral मिनरल) तेल भी मिला देते हैं।

अंडी के तेल में सल्फ्यूरिक एसिड मिलाने से एक तेल बनता है जो पानी में घुलने से इमल्शन देता है। इस तेल को टर्की रेड आयल (Turkey red oil) कहते हैं। ऊपर कहे तेल इसमें मिलने से इमल्शन रूप में आ जाते हैं। टर्की रेड आयल अकेला ही और इनके साथ में भी प्रयोग होता है। अंडे की जर्दी (Egg yolk) अच्छा प्राकृतिक फ़ैट लिकर (natural fat liquor) है। इसमें जो तेल है वह इमल्शन रूप में है। इसे थोड़े-से पानी से पतला कर और छानकर प्रयोग

करते हैं। और तेल भी इसमें मिलने से इमलशन रूप में आ जाते हैं। अकेला यह या और तेलों के साथ प्रयोग किया जाता है। इमलशन रूप में तेलों को प्रयोग करने से चमड़ों की सतह चिकनी और चिपचिपी नहीं होने पाती। इसी कारण चमक (Glaze ग्लेज़) अच्छी आ जाती है। ऐसे घोलों को काम में लाने से पहिले देख लेना चाहिए कि उसमें छुट्टा तेल तो नहीं है। छुट्टा तेल सतह को चिकना कर देता है। चमड़े पर कितना तेल दिया जाए और उसमें क्या-क्या किस हिसाब से मिलाया जाए, यह जैसा चमड़ा बनाना हो उस पर निर्भर करता है।

तेल देने (फ़ैटलिकरिंग) की विधि यह है:—रँगने के बाद रंग का सारा घोल निकालकर या थोड़ा-सा छोड़कर चमड़ों को ढोल में फिर चला देते हैं। भाप देकर कुल की गर्मी ५५° श (C) कर देते हैं। इससे अधिक गर्म करने से चमड़ा ख़राब हो जाता है। तैयार तुली हुई फ़ैटलिकर (तेल के मसाले) में इतना गर्म पानी मिलाते हैं कि कुल घोल छिली खालों के वज़न पर ७५% और उसका ताप ५५° श० हो जाए। इसका आधा चलते हुए ढोल में डाल देते हैं; १५ मिनट बाद बाक़ी सब भी डाल देते हैं। जब साफ़ पानी रह जाए तो समझते हैं कि तमाम तेल का मसाला चमड़ों में चला गया है। घंटा, डेढ़ घंटा इस काम के लिए बहुत होता है।

साबुन से क्रोम के चमड़े में नर्मी आती है; पर इसको अधिक मात्रा में भी न प्रयोग करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से चमड़ा कड़ा पड़ जाता है। साबुन और पकावट के क्रोम से क्रोम का साबुन बनता है और शायद वही नर्मी देता है। इस काम के लिए भारी पानी (hard हार्ड water) हानिकारक है। ऐसे पानी में साबुन कैल्शियम के साबुन (Calcium soap) के रूप में बदलकर तली पर बैठ जाता है और तेल का घोल फट जाता है—तेल अलग हो जाता है।

यह छुट्टा तेल और कैल्सियम का साबुन सतह पर जम कर सतह को चिकटा देते हैं। यदि चमड़ा ठीक न धुला हो और उसमें छुट्टा क्रोम का लवण (Free chrome salt) हो तो वह फ़ैटलिकर—तेल के मसाले—के साबुन को क्रोम के साबुन (Chrome soap) में बदल देता है। यह क्रोम का साबुन सतह पर चिकट जाता है और छुटाए नहीं छुटता। इसलिए चमड़ों को पहिले ही खूब धो लेना चाहिए।

सारा तेल चुस जाने के बाद चमड़ों को घोड़ी पर लगाकर रात भर छोड़ देते हैं : इससे मसाला अच्छी तरह अंदर बैठ जाता है। फिर मशीन से इनकी बिठलाई (Setting सैटिंग) करते हैं यानी पानी आदि निकालकर फैला देते हैं। क्रोम से पके चमड़े की मेज़ पर हाथ से बिठलाई नहीं हो सकती, क्योंकि यह मेज़ (Stone table) पर वनस्पति से पके चमड़े की तरह चिपकता नहीं।

बिठलाई की (Setting सेटिंग or Putting-Out पुटिंग आउट) मशीनें कई तरह की हैं। रबर के बेलनवाली रालर (Roller) सेटिंग मशीन चूने की छिलाई की मशीनों की सी होती है। इसमें तेज़ छुरी के बदले पीतल के फले लगे होते हैं। टेबिल-सेटिंग (Table setting) मशीनों में चमड़े तख्तों (Tables) पर आगे बढ़ते हैं और फलदार बेलनों से फैलाए जाते हैं। वर्टिकल (Vertical) टेबिल सेटिंग मशीन में तख्ते (टेबिल) खड़े चलते हैं; और हारीज़ान्टेल (Horizontal) टेबिल सेटिंग मशीन में (टेबिल) लेटे हुए चलते हैं। किसी में एक, किसी में तीन, किसी में पाँच तख्ते होते हैं। टेबिल सेटिंग मशीन हल्के चमड़ों के लिए और बेलन (Roller) वाली भारी चमड़ों के लिए इस्तेमाल होती है। इन मशीनों से चमड़ों की सतह फैलकर बढ़ जाती है, दाना अच्छा हो जाता है, और चमड़ों का बहुत-सा पानी निकल जाता है।

फिर दाना ऊपर की तरफ रख चमड़ों को तख्तों पर खूब फैला और

तानकर कीलों से गाड़ देते हैं। फैलाकर गाड़ते समय ध्यान रहना चाहिए कि कोई झोल न रहे। जब बिल्कुल सूख जायँ, उखाड़ लेते हैं और तुड़ाई करते हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार के चमड़ों के लिए तेल देने के मसालेः—

भेड़ और मेमने की खालों के लिएः—

(१) २% घुलनशील खनिज तेल (Soluble mineral oil साल्यूबिल मिनरैल आयल)
½% जैतून का तेल (Olive oil आलिव आयल)
½% पोटाश का साबुन

(२) १% घुलनशील खनिज तेल
१% सल्फोनेटेड (Sulphonated) नीटस फुट आयल

ग्लासी किड (Glace kid) के लिएः—

(१) १% सल्फोनेटेड (Sulphonated) नीट सफुट आयल
२% सादा नीटस फुट आयल
½% अंडे की जर्दी (Yellow of egg-egg Yolk)

(२) १% सल्फोनेड नीटस फुट आयल
१% पोटाश का साबुन
२% अंडे की जर्दी

(३) १% साबुन
२% सादा नीटस फुट आयल
½% अंडे की जर्दी

बाक्स और विलोकाफ़ के लिए तैयार होनेवाली बछड़े की खालों के वास्तेः—

(१) २% सल्फोनेटेड काड आयल (Sulphonated Cod Oil)
१% अंडी का तेल (Castor Oil)

(२) १% घुलनशील खनिज तेल

१% अंडो का तेल

१% साबुन

(३) १% डेग्रास (Degras)

१% साबुन

१% टर्की रेड आयल

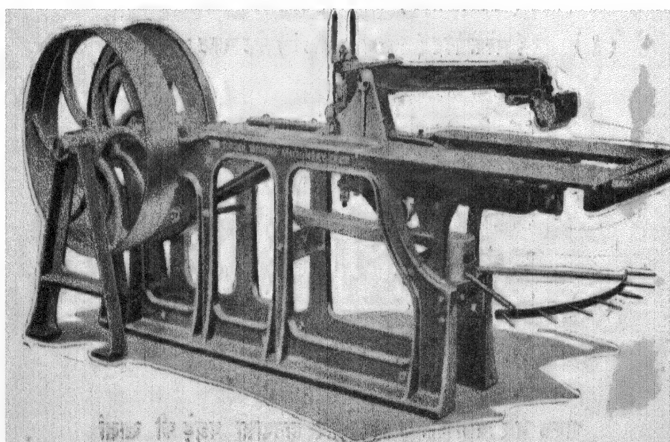
बाक्स साइड (फांकों) के लिए:—

(१) २% घुलनशील खनिज तेल

२% अंडी का तेल

(२) २% टर्की रेड आयल

१% खनिज तेल (Mineral Oil)



चित्र १२ तुड़ाई की मशीन

तुड़ाई करना (Staking स्टेकिंग)

तुड़ाई करने से मतलब स्टेकिंग (Staking) या चमड़ों को नर्म

करने का है। देसी चमार चूना दूर करन को भी तुड़ाई करना कहते हैं। तुड़ाई हाथ से (पृ० १०८) या मशीन से की जाती है। क्रोम से पके के लिए अक्सर मशीन काम में लाते हैं। स्लोकाम्ब (Slocomb) की सी तुड़ाई की मशीन (चि० १२) में दो जाबड़े (Jaws) होते हैं जो आगे-पीछे आते-जाते हैं। आगे आते समय ये जाबड़े खुल जाते हैं और पीछे जाते बार बंद हो जाते हैं। ऊपर के जाबड़े में एक फेल्ट (Felt) से ढका बेलन और उसके आगे एक प्लेट होती है। नीचे के जाबड़े में पीछे एक इबोनाइट (Ebonite) की प्लेट और आगे छुरी-सी होती है। जाबड़ों के बन्द होने में ऊपर का बेलन इन दोनों के बीच में बैठता है। कारीगर सामनेवाली मेज़ पर चमड़े को हाथ से फैलाता है और कमर से दाबे रहता है। जाबड़ों के बन्द होने पर चमड़े का कुछ हिस्सा यानी जाबड़े की चौड़ाई के बराबर जाबड़ों के बीच में आ जाता है। जाबड़ों के पीछे जाने में चमड़ा बीच में से निकलता हुआ वहीं फैला रहता है क्योंकि कारीगर उसको दाबे हुए है। खिंचने-मुड़ने के कारण चमड़ा नर्म हो जाता है।

तुड़ाई करने से पहिले चमड़ों को भिगोकर नर्म कर लेते हैं। भीगे बुरादे में २४ घंटे दाबने से ठीक भीग जाते हैं। एक बार तुड़ाई कर सूखने देते हैं; जब सूख जाएँ फिर तुड़ाई करते हैं। इस प्रकार दोहरी तुड़ाई करने से चमड़ा बिल्कुल नर्म हो जाता है। तुड़ाई करते समय ध्यान रखना होता है कि बीच या और कोई हिस्सा अधिक न खिच जाए वर्ना चमड़े में झोल आ जाता है। तुड़ाई में चमड़ा खिंचता है, यदि हर जगह बराबर का ज़ोर न दिया जाय तो झोल पड़ता है।

चमड़ों की गोश्तवाली सतह को साफ़ करने या मख़मल की-सी सतह देने के लिये बफिंग मशीन (Buffing or Fluffing Machine) पर लगाते हैं। इसमें अमरी (Emery) के काग़ज़ से ढका हुआ एक बेलन होता है जो अपनी कीरी पर घूमता रहता है। चमड़े को

गोश्तवाली सतह ऊपर कर इसके नीचे देते हैं। चमड़ा एक और बेलन पर रहता है जो नमदे से ढका रहता है। फ़ुट लीवर (Foot lever) दबाने से नीचेवाला बेलन ऊपर के बेलन के पास जाता है और चमड़ा उससे टकराता है। कारीगर चमड़े को रोके रखता है और धीरे-धीरे आगे सरकने देता है। इससे चमड़े की गोश्तवाली सतह पर मख़मल की-सी सफ़ाई आ जाती है। अमरी के बेलन को साफ़ रखने के लिए पास में एक ब्रुश का बेलन होता है। छिले हुए पदार्थ को हटाने के लिए एक पंखा रहता है जो साथ में चलता रहता है और इस धूल को बाहर निकालकर फेंकता है। इसमें वह मशीन अच्छी है जिसमें अपनी कीरी पर घूमता हुआ अमरी (Emery) का बेलन दोनों तरफ़ को भी खिसकता है। इससे धारियें नहीं पड़ने पातीं।

जब खालें इस प्रकार नर्म की जा चुकती हैं, दाने की सतह को उसकी चिकनाई आदि दूर करके साफ़ करते हैं। इसे क्लीअरिंग (Clearing) या साफ़ करना कहते हैं। चिकनई (Grease) को हटाने के लिए १० हिस्से पानी में १ हिस्सा लैक्टिक एसिड (Lactic Acid) या फ़ारमिक एसिड (Formic Acid) घोल कर ब्रुश से दाने पर लगाते हैं और फ़ौरन कपड़े से रगड़कर पोंछ देते हैं। यदि सतह पर ज़रा-सी भी चिकनई रह जाती है तो घोटे का मसाला सतह पर नहीं चिपकता। इसी कारण उन पर घोटा नहीं फिर पाता और चमक भी नहीं आती। इसलिए इस चिकनई को ऊपरी तह में से अच्छी तरह निकाल देना चाहिए। अब सतह को कपड़े से पोंछकर उस पर घोटे का मसाला लगाते हैं।

घोटे का मसाला (सीज़न Season)

इस मसाले की मुख्य चीज़ अल्ब्यूमिन (Albumen) है। यह पानी में घोलकर चमड़े पर लगाया जाता है। घोटा फिरने की

गर्मी से यह सतह पर जम जाता (Coagulates) है और चमड़े पर चमक आ जाती है : साथ ही रंग भी पक्का हो जाता है। अंडे की सफ़ेदी (White of egg) में बहुत अल्ब्यूमिन होता है। इसी को सुखाकर सूखा अंडे का अल्ब्यूमिन (Egg Albumen) बनता है। दूध और ख़ून में भी अल्ब्यूमिन होता है। ख़ून में लोहा होता है, इसलिए इसको केवल काले चमड़ों के लिए इस्तेमाल करते हैं।

इस मसाले में दूसरी चीज़ दाना भरने की होती है। इससे सतह सारे में यकसा हो जाती है। ये चीज़ें चपड़ा (शैलक Shellac), सरेस (Glue ग्ल्यू), अलसी (Linseed) और आयरिशमास (Irish Moss) हैं। चपड़ा अमोनिया के साथ आसानी से घुल जाता है। अलसी और आयरिशमास में लेसा (Mucilage) होता है। यही लेसा काम में आता है।

तीसरी चीज़ रंग है। रंगीन चमड़े पर बिना रंग के यह मसाला सफ़ेद-सा झलकता है। इस बुराई को दूर करने के लिए रंग मिलाते हैं। जैसे रंग का चमड़ा हो, वैसा ही रंग देते हैं। इस काम के लिए आम्लिक रंग (Acid Dyes) ठीक हैं। खारी रंग अल्ब्यूमिन से तलछट (Precipitate) हो जाते हैं। साथ ही ज़रा-सा टैनिन भी मिला देते हैं। सरेस के साथ में टैनिन नहीं डालना चाहिए; इससे सरेस तलछट हो जाता है। रगड़ से पैदा हुई गर्मी से चमड़े को बचाने के लिए चौथी चीज़ एन्टी फ्रिक्शन एजेन्ट (Anti-friction agent) है। घुलने-वाले तेल तथा दूध इस काम के लिए इस्तेमाल होते हैं। अल्ब्यूमिन आदि से चमड़ा कुछ कठोर हो जाता है। इस कड़ेपन को दूर करने के लिये पाँचवीं चीज़ ग्लिसरीन (Glycerine) देते हैं।

कुछ मसाले को पानी में घोलकर, पतले घोल को दाने पर ब्रुश से रगड़कर लगाते हैं। सारे चमड़े पर मसाला एक-सा लगाना चाहिए; कहीं

पर गहरा कहीं पर हल्का या धारियें (Streaks) न पड़ने पाएँ। मसाला खूब घुट जाना चाहिए। इस काम के लिए भी अब मशीनें इस्तेमाल होती हैं; पर इनसे ऐसा अच्छा मसाला नहीं लगता जैसा हाथ से। इन मशीनों से हर जगह एक-सा मसाला लग जाता है, पर जानकार कारीगर पेट और गर्दन पर पुट्ठे से कुछ अधिक मसाला लगाता है। रगड़ जाने पर यह सारे में यकसा मालूम होता है। पेट और गर्दन का दाना और जगह के दाने की अपेक्षा कुछ ढीला होता है; उसको कुछ अधिक मसाला लगाकर भर देते हैं।

मसाला सूखने पर चमड़ों को गर्म घर में सुखाते हैं। और गर्म चमड़े पर घोटा फेरते हैं। चमड़ा गर्म होने से चमक अच्छी आती है। गर्म चमड़े के दाने पर नाखून से रगड़ने से यदि चमक आ जाय तो समझना चाहिए कि चमड़ा ठीक गर्म हो गया है।

घोटे (सीज़न Season) के मसालेः—

ग्लासी किड के लिएः—

(१) (अ) १ पा॰ (½ सेर) दानेदार हिमेटोन

१ पा॰ (,,) निग्रोसीन

को ५ गैलन (२५ सेर) पानी में घोलो

(आ) २ पा॰ (१ सेर) अंडे की सफ़ेदी

को २ गैलन (१० सेर) ३०° श॰ (C) के पानी में घोलो। जब ठंडा हो जाए तब (अ) घोल भी इसी में मिला दो और फिर

५ आ॰ (३ छं॰) ग्लिसरीन

५ आ॰ (२½ छं॰) घुलनेवाला तेल (Soluble oil)

इसी में मिला दो और कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) कर लो।

२. ४ पा. (२ सेर) ख़ून के सूखे अल्ब्यूमिन (Blood Albumen) को

५ गैलन (२½ सेर) ३०° श. के गर्म पानी में घोलो।

१ पा· (½ सेर) हिमेटीन

१ पा· (½ सेर) निग्रोसीन को ३ गैलन (१५ सेर) खौलते पानी में घोलो।

४ आ· (२ छं) चपड़े (Shellac) को थोड़े से पानी में २ आ (१ छं) अमोनिया डालकर घोल लो।

जब दूसरा घोल ठंडा हो जाए, इन तीनों घोलों को मिला दो और इसमें

७ आ· (३½ छं) ग्लिसरीन

½ गैलन (२½ सेर) दूध मिला दो

कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) बना लो।

बाक्स काफ़ (Box Calf) के लिये

(१) (अ) १ पा· (½ सेर) निग्रोसीन

१ पा· („) दानेदार हिमेटीन

½ आ (१ तो) अमोनिया

५ गैलन (२५ सेर) पानी में घोल लो

(आ) १ पा· (½ सेर) केसीन (Casein)

½ पा· (४ छं) सुहागा

एक गैलन (५ सेर) खौलते पानी में घोल लो

दोनों घोलों को मिलाकर उसमें

४ आ· (२½ छं) ग्लिसरीन

२ आ· (१ छं) कार्बोलिक एसिड

२ क्वार्ट (qt) (२½ सेर) बैल का ख़ून डालकर कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) बना लो।

(२) (अ) ३ पा॰ (१½ सेर) ख़ून का अल्ब्यूमिन
३०° श॰ के ३ गैलन (१५ सेर) पानी में घोल लो

(आ) १ पा॰ (½ सेर) निग्रोसीन
१ पा॰ (½ सेर) हिमेटीन
½ आ॰ (१ तो॰) अमोनिया

५ गैलन (२५ सेर) पानी में घोल लो। ठंडा होने पर दोनों घोलों को मिला दो और उसमें ६ आ॰ (३½ छं) ग्लिसरीन

२ पिन्ट (१¾ सेर) मैथिलेटेड स्पिरिट (Methylated Spirit)

डालकर कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) बना लो।

काली फांकों (black sides) के लिये:—

(१) (अ) १ पा॰ (½ सेर) निग्रोसीन
१ पा॰ (½ सेर) दानेदार हिमेटीन
⅔ गैलन (३⅓ सेर) खौलते पानी में घोलो

(आ) ३ पा॰ (१½ सेर) ख़ून के अल्ब्यूमिन को ३०° श॰ के गर्म पानी में घोलो

(इ) ५ आ॰ (२½ छं) चपड़ा ⅔ आ (१½ तो) अमोनिया के साथ घोलो, तीनों घोलों को मिलाकर उसमें
२ कार्ट (२½ सेर) गम ट्रेगाकान्थ (Gum Tragacanth)
२ पिंट (१¾ सेर) मैथीलेटेड स्पिरिट (Methylated Spirit)
५ आ॰ (२½ छं) घुलनेवाला तेल (Soluble oil)
डालकर कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) बना लो

(२) (अ) १२ आ॰ (६ छं) अलसी के बीजों को ⅔ गैलन (३⅓ सेर) पानी में ½ घंटा उबालकर छान लो

(आ) १० आ॰ (५ छं) निग्रोसीन
१० आ॰ (५ छं) दानेदार हिमेटीन को
½ गैलन खौलते पानी में घोलकर, दोनों घोलों को
मिला दो और ठंडा होने दो
१ गैलन (५ सेर) बैल का ताज़ा ख़ून
६ आ॰ (३ छं) कार्बोलिक एसिड (अलग घोलकर) और
५ आ॰ (३ छं) ग्लिसरीन

डालकर कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) बना लो।

काले की बजाए और रंगत के ग्लेज्ड किड (Glazed kid) के लिये:—

(अ) २ पा॰ (१ सेर) अंडे को अल्ब्यूमिन को २ गैलन (१० सेर) पानी में घोलो
(आ) १ पा॰ (½ सेर) आम्लिक रंग (एसिड डाई) को पानी में घोलो। ठंडा होने पर दोनों घोलों को मिला दो
फिर उसमें २ कार्ट (२½ सेर) दूध
५ आ॰ (३ छं) ग्लिसरीन
और २½ आ॰ (१¼ छं) कार्बोलिक एसिड (अलग घोलकर)

डालो और कुल को १० गैलन (नाप में ५० सेर पानी के बराबर) बना लो।

विलो काफ़ (Willow Calf) के लिये:—

(अ) २ पा॰ (१ सेर) अंडे की अल्ब्यूमिन ३ गैलन (१५ सेर) गर्म पानी (३०° श॰) में घोलो,
(आ) १ पा॰ (½ सेर) आम्लिक रंग (एसिड डाई) ½ गैलन (२½ सेर) खौलते पानी में घोलो, दोनों घोलों को मिलाकर उसमें

२ कार्ट (२½) सेर दूध
५ आ० (३ छं) ग्लिसरीन
१ पिन्ट (१० छं) मैथोलेटेड स्पिरिट (Methylated Spirit) डालकर कुल को १० गैलन (५० सेर पानी के बराबर) बना लो।

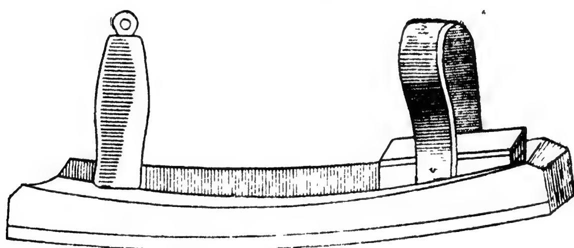
घोटा फेरना—ग्लेज़िंग (Glazing)

सीज़न के मसाले के सूखने पर, चमड़ों पर घोटा फेरते हैं जिससे चमक आ जाय। इस काम के लिए घोटा फेरनेवाली मशीन (ग्लेज़िंग-मशीन Glazing Machine) इस्तेमाल होती है। इनमें एक पतली सी मेज़ पर एक चौड़ी चमड़े की पट्टी लगी होती है। फ़ुट लीवर से यह ऊपर-नीचे को जाती है। कांच या एगेट (Agate) का एक बेलन, जो एक लकड़ी में लगा होता है, इस पट्टी पर आगे-पीछे घूमता है। आगे आते समय यह पट्टी पर से उठ आता है और पीछे जाते समय पट्टी को रगड़ता जाता है। इसको चलाकर पट्टी पर चमड़ा रख पट्टी को ऊँचा करने से कांच चमड़े को आगे-से-पीछे की तरफ़ रगड़ता है। इससे चमड़े पर चमक आ जाती है। चमड़े को घुमा-घुमाकर थोड़ा-थोड़ा करके उसका सारा हिस्सा घोटे के नीचे लाते हैं। इस प्रकार सारे चमड़े पर चमक आ जाती है। कुछ मशीनों में मेज़ नीचे को ढालू और कुछ में धरातल के सम होती है। पहिले कही मशीनों को इनक्लाइन्ड बेड (Inclined bed) और दूसरी तरह की मशीनों को हारीज़ान्टेल बेड (Horizontal bed) ग्लेज़िंग मशीन कहते हैं।

एक दफ़ा घोटा फेरने के बाद यदि दाना उठाना हो तो दाना उठाकर वर्ना वैसे ही घोटे का मसाला (सीज़न) लगाते हैं। इस बार पहिले मसाले को बराबर का पानी मिलाकर इस्तेमाल करते हैं। सूखने

पर फिर घोटा फेरते हैं और यदि दाना उठाना हो तो दाना उठाते हैं। नापकर यह बिकने को तैयार हैं।

दाना उठाना (ग्रेनिंग Graining) और नर्म करना (बोर्डिंग Boarding):— दाना उठाने (Graining) के लिए चमड़े को दाना ऊपर करके मेज़ पर डालते हैं। दाना अन्दर रखते हुए चमड़े को दोहरा कर देते हैं। दोहरी जगह को कार्क के तख्ते (Board) से दबाते हैं और साथ ही चमड़े को इस तरह बढ़ाते हैं कि मुड़ी जगह एक सिरे से दूसरे सिरे तक बदलती जाती है और कार्क मुड़ी जगह को दबाता है। दाना अन्दर रहने से दाने पर धारियाँ पड़ जाती हैं। यदि दाना बाहर कर गोश्त की सतह अन्दर रखते हुए चमड़े को तख्ते से रगड़ें, दाने पर कोई धारी नहीं पड़ती ; चमड़ा सिर्फ़ नर्म हो जाता है। चमड़ों को नर्म करने के लिए मशीन या हाथ की तुड़ाई के सिवाय इस प्रकार से भी नर्म करते हैं।



चित्र १३ दाना उठाने का तख़्ता (बोर्ड Board)

इसको बोर्डिंग कहते हैं। दाना उठाने के लिए भी अब मशीन इस्तेमाल करते हैं : क्योंकि दाना उठाना और नर्म करना दोनों काम एक ही मशीन से हो जाते हैं, इसलिए इसे ग्रेनिंग और बोर्डिंग मशीन (Graining और Boarding Machine) कहते हैं। दाना उठाने के तख्ते की शक्ल चित्र १३ से मालूम होगी।

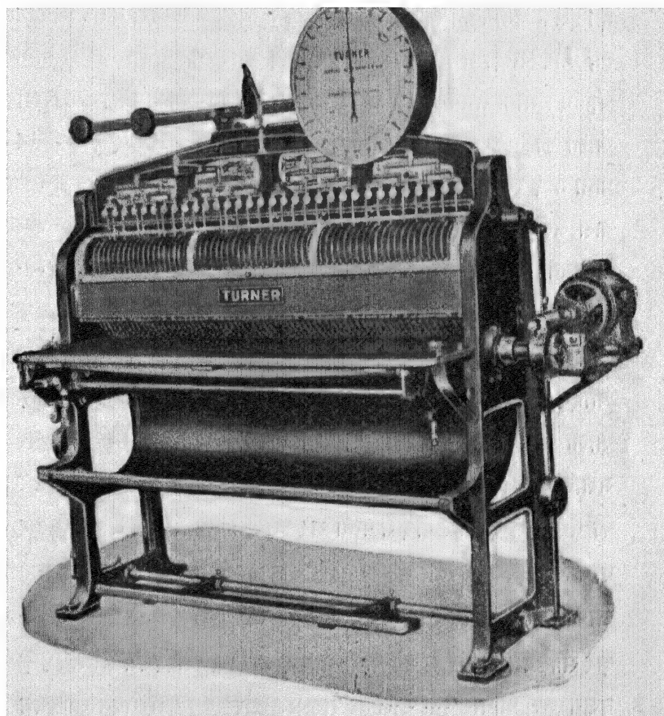
पुट्ठे से गर्दन तक लम्बान में दबाने से लम्बी धारी यानी लम्बा

दाना (Long grain लांग ग्रेन) पड़ता है। इसे विलोग्रेन भी कहते हैं। अब रोढ़ (Ridge) से पेट तक दोहरा दबाने से दाना चौकोर हो जाता है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न तरफ़ मोड़ने से भिन्न-भिन्न प्रकार का दाना उठाया जाता है जैसे चौकोर, अठपहलू, गोल आदि। सारे चमड़े पर हाथ से एक सा दाना उठाना बड़ी होशियारी का काम है। चमड़े की मोटाई और पुख़्तापन के हिसाब से दबाव कम या अधिक करना पड़ता है। कितनी भी होशियारी हो बारीक दाने का उठाना मोटाई और बनावट (Texture) पर निर्भर है। पतले या कड़े चमड़े पर मोटा दाना नहीं उठाया जा सकता। मोटा सील (Seal) का सा दाना (Grain) जो बैग (Bag) थैली और पाकेट बुक्स के लिए बहुत इस्तेमाल होता है, मोटे चमड़ों पर अपने आप उठ आता है; पतले पर नहीं। यदि ऐसे दाने का पतला चमड़ा चाहिए, तो दाना उठाने के बाद उसे चीरकर पतला कर सकते हैं।

क्रोम के चमड़े बहुधा नपकर बिकते हैं। इनका हिसाब प्रति वर्ग-फ़ुट (Square Foot) होता है, जैसे आठ आना वर्ग फ़ुट, १० आने वर्ग फ़ुट। बड़े-बड़े कारख़ानों में नापने के लिए नापने को मशीन काम में आती है। जहाँ थोड़ा काम होता है वहाँ पैमाना लेकर पुट्ठे से गर्दन तक फ़ुट में लम्बाई नापते हैं और बीच में रोढ़ (Ridge) से पेट तक फ़ुट में चौड़ाई नापकर लम्बाई-चौड़ाई को गुणा करते हैं। गुणनफल ही वर्ग फ़ुट में उतने की नाप है। यह तरीक़ा ठीक तो नहीं है पर अन्दाज़ के लिए काफ़ी अच्छा है।

नापने की मशीन (Measuring Machine) (चि. १४) में बीच में ऊपर को घड़ी का-सा एक डायल (Dial—गोल तख़्ता जिसपर घंटों के निशान लगे रहते हैं) होता है, वैसे ही केन्द्र (Centre) पर लगी हुई एक सुई (Pointer) इस स्केल (निशानों) पर घूमती

है। मशीन चलाकर चमड़ा मशीन में देने से चमड़ा आगे बढ़ता है; जहाँ यह सुई टिकती है उस निशान को पढ़ लेने से मालूम हो जाता है कि चमड़े का क्षेत्रफल (Area) कितना है। इस मशीन में बहुत-से छोटे-छोटे लिवर (Lever) होते हैं जो आपस में और सुई से इस प्रकार



चि० १४ नापने की मशीन

जुड़े होते हैं कि चमड़े के इनके नीचे पहुँचने से, जिनके नीचे चमड़ा है वे लीवर उठते हैं और चमड़े का क्षेत्रफल (Area) वर्गफ़ुट में स्केल पर पढ़ लिया जाता है।

अब यहाँ पर क्रोम से पके हुए मशहूर चमड़ों के बनाने की विधि संक्षेप में लिखते हैं:—

ग्लासी किड (Glace kid) बकरी की खाल से बनाया जाता है। बकरी की खाल का दाना बहुत खुरदरा होता है और खाल कड़ी होती है। इसके बनाने की तारीफ़ यह है कि दाना बिल्कुल खुरदरा न हो, चिकना हो, और चमड़ा नर्म बने; साथ ही चमक और झलक भी अच्छी होनी चाहिए। भीगी नमकीन खालों को रात-भर भिगोना काफ़ी होता है। सूखी खालों को एक-दो दिन भिगोना होता है; साथ में ०·१% (१००० सेर पानी में १ सेर) सोडियम सल्फाइड दे देना लाभकारी होता है। चूने में बाल जल्दी ढीले होने चाहिएँ, जिससे खाल का मसाला जितना कम हो उतना कम घुले और दाना खुरदरा न होने पाए। ज्यादा खार इस्तेमाल हो जाने से दाना ख़राब होने का डर रहता है। बाल ढीले करने के लिये आरसेनिक सल्फाइड को चूने के साथ बुझाकर इस्तेमाल करना चाहिए। इस मसाले को कूँची से गोश्त की तरफ़ लगा रीढ़ पर से मोड़ खालों को हौदे में ढेर लगा देते हैं। रीढ़ (Ridge) और गर्दन पर मसाला अधिक लगाते हैं; कोई किनारा कहीं से छुटने नहीं पाता। ढेर को तख्तों से दाबकर हौदे में पानी भर देते हैं। दो-तीन दिन में बाल उतार पाँच-छः दिन ताजे चूने में रखते हैं। जब खालें ठीक-ठीक फूल जाती हैं उनकी छिलाई करते हैं। बाल ढीले करने की दूसरी तरकीब यह है: ढेले-दार सोडियम सल्फाइड को पानी में घोलकर उसमें सोडियम सल्फाइड के वजन से आधा चूना डालकर रात-भर छोड़ दें। दूसरे दिन सोडियम सल्फाइड के वजन से सवाया कैल्शियम क्लोराइड (Calcium chloride) उसमें मिला दें। इस घोल को चूने से गाढ़ाकर गोश्त की सतह पर लगा दें। बाल मजे में ढीले हो जायँगे और दाना खुरदरा नहीं होगा। इस तरह बनाए हुए सोडियम सल्फाइड के मसाले से

दाना खुरदरा नहीं होता। इस तरह बने हुए मसाले के १ गैलन (नाप में ५ सेर पानी के बराबर) में एक पाउन्ड (½ सेर) सोडियम सल्फ़ाइड होना चाहिए।

छिलाई के बाद पैडिल में पानी से धोते हैं और आधा घंटा इनका प्योरिंग (Puering) करते हैं। विष्ठा से प्योर करने से दाना बिल्कुल चिकना और चपटा बनता है। फिर छुरी लगाते और धोते हैं। धोकर ½% (१००० सेर पानी में ½ सेर) बोरिक एसिड के घोल में चलाते हैं। फिर धोकर क्रोम की दो घोलवाली विधि से पकाते हैं। चूना लगी खालों (Pelts) की तौल पर २०% (१०० सेर के लिए २० सेर) नमक और २% (१०० सेर के लिए २ सेर) सल्फ़्यूरिक एसिड से पिकिल करते हैं। घंटा-भर पिकिल होने के बाद उसी घोल में ६% (१०० सेर के लिए ६ सेर) पोटाशियम बाइक्रोमेट (थोड़े से पानी में घोलकर) छोड़ देते हैं। जब मोटी-से-मोटी खालें भी अन्दर तक हमवार पीली हो जायँ निकाल लेते हैं।

लघुकरण (रिडकशन Reduction) के लिए २०% (१०० सेर के लिए २० सेर) हाइपो और ४%सल्फ़्यूरिक एसिड लेते हैं। इस अम्ल को तिगुने ठंडे पानी में मिलाकर पतला कर लेते हैं। इसका एक तिहाई हिस्सा शुरू में, दूसरा तिहाई हिस्सा खालों को डाल चुकने पर और बाक़ी एक घंटे बाद डालते हैं। अम्ल इस तरह डालते हैं कि वह खालों से न टकराए। जब खौलते पानी में जाँच करने से खालें ठीक पकी मालूम हों निकाल लेते हैं।

खालों को निकालकर घोड़ी पर लगा देते हैं। निचुड़ चुकने पर हवा में खालों को डाल देते हैं। जब छिलाई के लायक़ सूख जाती हैं शेविंग मशीन पर छिलाई करते हैं। छिलाई के बाद तोल लेते हैं क्योंकि आगे के मसाले इस वज़न पर लेते हैं। फिर धोते हैं और छुट्टा अम्ल दूर

(शिथिल Neutralise न्यूट्रलाइज़) करते हैं । इसके लिए २-३% सुहागा काफ़ी होता है । और फिर खूब धोते हैं ।

इनको प्रायः काला रँगते हैं । इसके लिए २% हिमेटीन और १% निग्रोसीन लेते हैं । १% टर्की रेड आयल (Turkey Red oil), १·५% नीट्सफ़ुट आयल (Neats foot oil) और ०·५% साबुन लेकर फ़ैटलिकर बनाते हैं । इस तेल के मसाले में खालों को चलाकर उनको चिठलाई करते हैं और उन्हें सुखा लेते हैं । सूखने पर इनकी तुड़ाई (Staking स्टेकिंग) करते हैं ।

फिर लैक्टिक एसिड का घोल दाने पर लगाकर और उसे पोंछकर साफ़ करते हैं । अब इन पर घोटे का मसाला (सीज़न Season) लगाते हैं । इस मसाले के लिये ½ गेलन (२½ सेर) बैल के खून को ½ गेलन (२½ सेर) पानी में मिलाते हैं ; ४½ आ· (२½ छं) निग्रोसीन को एक गेलन (५ सेर) पानी में घोलते हैं और ४ आ. (२ छं) हिमेटीन और ¾ आउन्स (पौन तो·) पोटाशियम बाइक्रोमेट को ½ गेलन पानी में घोलते हैं । इन तीनों घोलों को मिलाकर कुल तीन गेलन (१५ सेर) कर लेते हैं । ग्लासी किड पर दाना नहीं उठाया जाता है । दो बार घोटा फेरने पर काफ़ी अच्छी चमक आ जाती है ।

बाक्स साइडस (Box sides) के लिए गाय की खालें लेते हैं । चूना और सोडियम सल्फ़ाइड के लेप से बाल ढीले करने से चमड़ा अच्छा निकलता है । चूने में एक हफ़्ता भर रखते हैं । चूने के बाद हर खाल को रीढ़ पर से काट दो हिस्सों (Sides साइडस) में बाँट देते हैं । इनको इसी हालत में चीरकर (Split) पतला करते हैं : जो इस हालत में नहीं चीरते वे पकने पर या तो चीरकर छिलाई करते हैं या बिना चीरे ही छीलकर पतला करते हैं । चूना दूर करने (Deliming) के लिए चीने के बाद तीन चार घंटे ३५° श (35°C) पर पैन्क्रियाल

(Pancreol) के घोल में चलाते हैं। १% पैन्क्रियाल काफ़ी होता है। यह हुआ बेटिंग (Bating)। इससे दाना साफ़ हो जाता है और प्रायः सब चूना निकल जाता है।

पकाने के लिए ५% (१०० सेर चूने को खाल के लिए ५ सेर) बाईक्रोमेट लेकर गुड़ या हाइपो का मसाला (टैनिंग लिकर Tanning liquor) बनाते हैं। इसका खारित्व अंक (बेसिसिटी फ़िगर) ६०-८५ होता है। पहिले पिकिल करते हैं। इसके लिए २००% पानी, १०% नमक और १% सल्फ्यूरिक एसिड लेते हैं। पकाने (टैनिंग Tanning) के लिए ५% नमक और ऊपर बताया बाईक्रोमेट का मसाला इस्तेमाल करते हैं। २४ घंटे में खालें पक जाती हैं। गुड़ से यह मसाला बनाने के लिए १४½ पा० बाईक्रोमेट और १५½ पा० सल्फ्यूरिक एसिड को १५ पा० पानी में अलग और लगभग ५ पा० गुड़ को दस पा० पानी में अलग घोलते हैं। आहिस्ता २ दूसरे घोल को पहिले घोल में मिलाते हैं। इसका खारित्व अंक ६० के लगभग होता है। पक चुकने पर खौलते पानी में जाँच कर लेने के बाद खालों को २४ घंटे घोड़ी पर पड़ा रहने देते हैं।

छिलाई के योग्य सुखाकर छिलाई की मशीन पर छीलते (Shave) हैं। यदि चूने के बाद चिराई न की हो तो पहिले चीरकर फिर छीलना लाभकारी है। चीरने पर १४ नम्बर की मोटाई और छीलने पर १६, १७ नम्बर की मोटाई ठीक होती है। अम्ल दूर करने (शिथिलीकरण Neutralisation) के लिए २-३% सुहागा (Borax) लेते हैं। काला रँगने के लिए २% हिमेटीन (Haematin), ०.५% अमोनिया, १% निग्रोसीन, १% फार्मिक एसिड और ०.५% टिटाक्स (Titox) काम में लाते हैं। बादामी रँगने के लिए १% सिट्रोनीन (Citronine) के घोल में चलाकर १% फ्युस्टिक का सत (fustic ex-

tract) उसी में छोड़ देते हैं। आधे घंटे बाद ०.२५% कारीफ़ासफ़ीन (Coriphosphine) देते हैं। इसी प्रकार और रंगों के मेल जोड़ से कितनी ही रंगतें रँगी जा सकती हैं। तेल देने के लिए ३% टर्की रेड आयल, ०.५ % (१०० सेर खाल के लिए आधा सेर) साबुन और १.५ % अंडी का तेल लेते हैं।

काले के लिए पहिले बताया घोटे का मसाला (सीज़न) काम में लाते हैं। इस मसाले को लगाने से पहिले लैक्टिक एसिड के १०% के घोल से सतह की चिकनई दूर कर सफ़ाई करते हैं। बादामी के लिए ४ पा० सूखी अंडे की सफ़ेदी (Egg Albumen) १० गैलन (५० सेर) पानी में घोल छानकर उसमें १ पा० ग्लिसरीन (Glycerin) १ गैलन (५ सेर) दूध और ½ पा० रंग (Dyestuff) घोल और छानकर मिला देते हैं ; कुल को २० गैलन (नाप में १०० सेर पानी के बराबर) बना लेते हैं। इन पर चौकोर दाना उठाते हैं। इसे ही बाक्स ग्रेन (Box Grain) कहते हैं।

यदि बछड़े की खाल का ऐसा चमड़ा बनाया जाए तो उसकी फाँकें नहीं करते हैं। काला रंग कर चौकोर दाना उठा देते हैं। ऐसे चमड़े को **बाक्स काफ़** (Box Calf) कहते हैं। यदि बादामी रंग पर लम्बा दाना उठा दें तो इसे ही **विल्लो काफ़** (Willow Calf) कहते हैं।

क्रोम सोल (Chrome sole) क्रोम से पका तले का चमड़ाः—

यह भैंस या गाय की खाल का बनाते हैं। क्योंकि क्रोम से पकाने में चमड़े में भरावट ज़रा नहीं होती इसलिए चूना देने में खाल का मसाला बिल्कुल नहीं घुलने देना चाहिए। बाल ढीले करने के लिए चूने के साथ सोडियम सल्फ़ाइड देते हैं। फुलाने और ठोस करने के लिए सोडा देते हैं जिससे खालें चूने में जल्दी तैयार होती हैं। चूना लग चुकने पर इनकी भी फाँकें (Sides) कर देते हैं। चूना दूर करने

के लिए १% बोरिक एसिड के घोल में देते हैं। पकाने के लिए गुड़ का घोल इस्तेमाल करते हैं। शुरू में १२० खारित्व अंक (बेसिसिटी फ़िगर) का मसाला काम में लाते हैं; फिर १०० का और अन्त में ८० का। जल्दी पकाने के लिये ढोल में चला देते हैं वर्ना नाँदों (Vats) में लटका कर पकाते हैं।

क्रोम सोल को पकाने की दूसरी विधि इस प्रकार है:—पुट्ठों (Butts) को काटकर बिना चूना निकाले १०% अल्यूमिनियम सल्फेट (Aluminium Sulphate) के घोल में लटका देते हैं। जब अल्यूमिनियम की पकावट आर-पार हो जाए और चमड़ा कुछ फूल जाए, इनको गन्धक से बनाए हुए क्रोम के मसाले में पकाते हैं। इस मसाले का असर बड़ी जल्दी होता है। पकने पर शिथिल (Neutralise) करके तेल देते हैं। इसके लिए २-३% टर्की रेड आयल इस्तेमाल करते हैं। फिर बिठलाई कर तख़्तों पर गाड़ कर सुखाते हैं। जूते में तला लगाने के लिए अक्सर ऐसा ही चमड़ा इस्तेमाल करते हैं। परन्तु अच्छे तले के लिए इस चमड़े में मोम और भर देते हैं जिससे पानी का असर कम होता है।

इस मोम के मसाले में ये चीज़ें पड़ती हैं:—स्टीअरीन (Stearin), ट्रैगासोल (Tragasol), रोज़िन (Rosin), कारनौबा वैक्स (Carnauba wax), शहद की मक्खी का मोम (Bees' Wax), पैराफ़ीन वैक्स (Paraffin Wax), असफ़ाल्ट (Asphalt), खनिज तेल (मिनरैल आयल Mineral oil) आदि। अच्छा बना क्रोम का तला वनस्पति से बने तले की अपेक्षा कम घिसता है परन्तु भीगे फ़र्श पर फिसलता बहुत है। असफ़ाल्ट और राज़िन फिसलन को रोकते हैं, इसलिए ये अकेले या दोनों मोम के मसाले में दिये जाते हैं। इस मसाले के कुछ नुसख़े इस प्रकार हैं। (१) ८० हिस्सा ऊँचे ताप पर

पिघलनेवाली मोम (High Melting Point Paraffin Wax), १५ हिस्सा राजिन, और ५ हिस्सा कड़ी चर्बी (Hard Tallow) । (२) ७० हिस्सा ऊँचे ताप पर पिघलनेवाली मोम और ३० हिस्सा कारनौबा वैक्स (Carnauba Wax) । (३) इस तरह के चमड़ा बनाने के एक नुसखे में यह दिया है कि वे पहिले चमड़े को सरेस के घोल में भिगोते हैं । उसी में फिर फार्मेल्डीहाइड (Formaldehyde) डाल देते हैं । इसके बाद इस चमड़े को ऊँचे ताप (Temperature) पर दबाते हैं । दबा कर इस मसाले में डुबोते हैं:—ऊन की चर्बी (Wool Grease वूल ग्रीज़)—६० हिस्सा, अस्फाल्ट-१० हिस्सा, साफ्ट पिच (Soft Pitch)-२५ हिस्सा और गट्टापार्च, (Gutta Percha)-५ हिस्सा । इसको ६०° श.पर इस्तेमाल करते हैं ।

इन चीजों को चमड़े में भरने के लिए ऐसी नाँद में पिघलाते हैं जिसमें कि वे लटकाए जा सकें । चमड़ों को पहिले गर्म घर में सुखाते हैं । जहाँ तक हो सके उनकी नमी (Moisture) निकाल देते हैं और फिर झट से पिघले मोम में डुबोते हैं । जब मोम में से हवा के बुलबुले निकलना बन्द हो जाएँ समझ जाते हैं कि मोम अन्दर तक चला गया है । अब निकाल लेते हैं । दो-तीन मिनट में यह काम हो जाता है । निचुड़ने देने के बाद गर्म रहते हुए ही उन पर स्लीकर लगाते हैं । कपड़े से रगड़ कर छुट्टा मोम हटा देते हैं । फिर ठंडा होने के लिए टाँग देते हैं । ठंडा होने पर प्रेस (Press) में दबा देते हैं । इस प्रकार दबा देने से मोम अच्छी तरह अन्दर जम जाते हैं, चमड़ा फैल जाता है और उसकी सूरत भी भली लगने लगती है ।

अब इस तरह भराई के लिए नाँदों की बजाए ढोल (Drum) इस्तेमाल करते हैं । इन ढोलों के साथ में हवा गर्म करने का एक स्टोव और एक पंखा लगा रहता है । पंखे के चलने से हवा स्टोव में जाती

है जिसे भाप से गर्म करते हैं। स्टोव में गर्म होती हुई हवा ढोल में जाती है। इससे ढोल और उसमें की चीजें आसानी से खूब गर्म की जा सकती हैं। ढोल में गर्मी चाहे जितनी रख सकते हैं। इस तरह चमड़ों को पिघली मोम में हिलाने से मोम अच्छी तरह घुस जाती है। ऐसे ढोलों को हाट एअर स्टफिंगड्रम (Hot air stuffing Drum) कहते हैं।

दसवाँ अध्याय

VEGETABLE TANNING MATERIALS

पकानेवाले वनस्पति पदार्थ

इनमें जो पकानेवाली चीज है उसको टैनिन कहते हैं; इन पदार्थों से पकाने को ही टैनिंग (Tanning) कहते थे, अब खनिज पदार्थ (Mineral Products) से पकाने को भी टैनिंग कहते हैं। यों कह सकते हैं कि टैनिन वह चीज है, जो वनस्पति में मिलती है जो सरेस के घोल में से सरेस को तलछट कर देती है; जो खाल को चमड़ा बना देती है और जिसका असर सिकोड़ने का (Astringent) है। टैनिन के भी कितने ही भेद हैं। रसायनिक गुणों के अनुसार वे दो दलों में विभक्त की जा सकती हैं। एक कैटोकाल (Catechol) और दूसरा पायरोगैलाल (Pyrogallol)। एक जाति के वृक्ष की टैनिन दूसरी जाति के वृक्ष की टैनिन से भिन्न असर करती है। किसी जाति के वृक्ष की टैनिन ख़ाली एक ही दल की है, ऐसी बात भी नहीं है। बहुत सी एक ही दल की हैं। बहुत सी दोनों दलों के से असर दिखाती हैं। शायद दोनों प्रकार की उसमें मिली हों जो उनके असर में इतनी भिन्नता है। हो सकता है कि और-और चीजें भी उसमें मिली हों। ये कोलायड (Colloid) हैं: दानों के रूप (Crystalline form) में नहीं लाई जा सकतीं: इससे वे अब तक शुद्ध रूप में नहीं बनी हैं। एक वृक्ष की टैनिन निकालने को उसका जुशाँदा (Infusion)

कर लेते हैं (विधि आगे दी है)। यदि वह जुशांदा सरेस को तल-छट कर देता है, तो कहते हैं कि उसमें टैनिन है वर्ना नहीं। उस घोल को उस वृक्ष के टैनिन का सत कहते हैं। उसका असर कि वह काम का है या नहीं चमड़ा पकाने पर मालूम होता है। टैनिन के घोल में कुछ ऐसे भी पदार्थ घुल आते है जो ज़रा नहीं पकाते हैं। किसी पदार्थ में टैनिन की मात्रा देखने के लिये अच्छी खाल को चूना दे, क्रोम से पकाकर बारीक टुकड़े कर लेते हैं जिनको हाइड-पाउडर (Hide Powder) कहते हैं। सरेसया हाइड पाउडर से टैनिन को तलछट करने के बाद घोल में जो कुछ रह जाता है यही न पकाने-वाले पदार्थ (नानटैन्स Nontans) हैं।

किसी वनस्पति—फल, पत्ती, छाल इत्यादि—या उनके गीले सूखे सत में टैनिन की मात्रा इस तरह मालूम करते हैं:—फल, पत्ती, छाल को पहले चूरा कर लेते है। इसमें से थोड़ा सा पदार्थ लेकर उसे तौल लेते हैं। तुले हुये को पानी में घोलते हैं। घोल का कुछ भाग नापकर सुखाते हैं। सूखने पर तौल लेते है। इससे पता लग जाता है कि न घुलनेवाले (Insoluble) पदार्थ कितने हैं—(१) और घोल के कुछ भाग में हाइडपाउडर डालते हैं। जब यह सारा टैनिन चूस लेता है, घोल को छान लेते हैं। छने हुए का थोड़ा भाग सुखाकर मालूम करते हैं कि क्या नहीं चूसा गया—यह नानटैन्स हैं—(२)। घुलनेवाले पदार्थ की मात्रा में से नानटैन्स की मात्रा घटाने से टैनिन की मात्रा निकल आती है—(३)। पकानेवाले वनस्पति में और सत में पानी अवश्य होता है। थोड़ा सा भाग सुखाकर उसकी भी मात्रा मालूम करते हैं—पानी (Moisture मायस्चर) (४)। कितना पदार्थ हर काम के लिये तोला जाय और कैसे किया जाय इसके लिये चर्म के रसायनवेत्ताओं के संघों ने, जो कि यूरोप (Europe) और अमरीका में हैं, बड़े बड़े

क़ायदे बनाए हैं। जाँच करनेवाले को उनकी बताई हुई ही मात्रायें लेनी पड़ती हैं और उनकी बताई हुई विधि से जाँच करनी पड़ती है। इतने क़ायदे बनाने का कारण यह है कि यदि तरीक़े में ज़रा भी हेर फेर हो जाए, नतीजे में अन्तर हो जाता है।

लोहे के लवणों (Ferric salts—जैसे फेरिक क्लोराइड Ferric Chloride) के साथ कैटीकाल टैनिन्स हरा काही सा और पायरोगेलाल नीला काहिया रँग देते हैं। केटीकाल टैनिन्स से चमड़े पकाने में अन्दर-गहरे भूरे रंग की चीजें रह जाती हैं। जिनको रैड्स (Reds) या फ्लोबाफिन्स (Phlobaphenes) कहते हैं। पायरोगेलाल टैनिन से इलाजिक एसिड (Ellagic acid) के दाने (Crystals) जमा हो जाते हैं जिसको (Bloom) कहते हैं।

हर वनस्पति में थोड़ा-बहुत टैनिन होता ही है, परन्तु उसका प्रयोग उसी में की टैनिन की मात्रा और उसके चमड़ा अच्छा-बुरा बनाने पर निर्भर है। टैनिन वृक्ष के किसी ख़ास हिस्से में ही नहीं रहती, प्रायः छाल में और फल में अधिक होती है। यह सैलों (Cells) के अन्दर रहती है जिनकी कि दीवारें मोटी होती हैं और घोल को आसानी से नहीं निकलने देतीं। टैनिन ख़ुद भी बड़ी हौले-हौले निकलती है : निकलने में बहुत समय चाहिये परन्तु सैलों (Cells) को पहिले कुचल व तोड़ देने से आसानी और जल्दी से निकल आती है।

अब हम यहाँ भारतवर्ष के उन पकानेवाले पदार्थों के बारे में लिखते हैं जिनकी टैनिन रसायनवेत्ताओं (कैमिस्ट Chemists) ने जाँची है और जिनका खाल पर असर देखा जा चुका है। जो कुछ इनके बारे में जानने योग्य मालूम हुआ है वह यहाँ लिखते हैं। तत्पश्चात् संसार के मुख्य २ पकानेवाले (टैनिनवाले) पदार्थों के बारे में लिखेंगे।

कायफल—माइरिका नेगी (Myrica nagi)। छाल में १३—२७% टैनिन और मिरसिटिन (Myricetin) नामी रंग होता है जो सुमैक का सा है। इससे लाल से रंग का चमड़ा बनता है जो सुमैक में देने से चमक जाता है और फिटकरा लगाने से हल्के पीले रंग का हो जाता है। यह शायद अच्छे काम का पकानेवाला (टैनिंग का) पदार्थ निकले

ओक (Oaks)—कुअरसस पैकी फिला (Quercus pachyphylla)। इसके एकार्न कप्स (Acorn cups) प्रयोग में आते हैं। यह उत्तरी भारत में पहाड़ी देश में उगता है। इसके टैनिन से रंगत साफ़ आती है। सूखे कप्स में १३—१५% टैनिन और ६—१३% नान-टैनिन्स (Non-Tannins) होते हैं। सूखे एकार्न्स में २% टैनिन और ५-६% नानटैनिन मिली थी। प्रायः ७०% कप और ३०% एकार्न्स होते हैं। पत्ती और छाल में बहुत टैनिन होती है। पिलग्रिम (Pilgrim) ने १०% पत्तियों में और १२—१३% छाल में पाई थी।

आँवला—फाइलेन्थस एम्बलिका (Phyllanthus emblica)। टहनी की छाल में, पकी छाल में, पत्तियों में, और कच्चे फल में बहुत टैनिन होती है। अकेली प्रयोग होने से टहनी की छाल से दाना चिकना आता है और पकने में खालें बराबर फूलती हैं; लाल रंगत देती है। बहुत काम का पदार्थ है।

दोरसी— क्लीसटैन्थस कालिनस (Cleistanthus collinus)—दक्खिन में होता है। कहते हैं छाल में ३३% टैनिन होती है।

करौंदा—कैरिसा स्पाइनेरियम (Carissa spinarum)। मध्य और उत्तरी भारत में यह झाड़ी होती है। ८—११·५% टैनिन और १३·५—१५% नानटैनिन (ब्रमवैल Brumwell) होती है। खाल इसको आसानी से नहीं ले पाती। इसका घोल पीला और बहुत फुलानेवाला होता है। इससे कठोर चमड़ा बनता है (फ्रे़माउथ और पिलग्रिम Fraymouth Pilgrim)।

हड़्डा—टरमिनेलिया शैब्यूला (Terminalia Chebula)। इसका ४०-५० फ़ीट ऊँचा पेड़ होता है; अच्छी लकड़ी देता है। इसके फल को हिंदी में हड़्डा और अँगरेजी में मिरैब (Myrab-Myrobalans) या गालनट (Gallnut) कहते हैं। इन फलों में ३०-४०% टैनिन होता है। इन सबमें से बंबई के और ख़ास कर पतले हरे सबसे कम कच्चे होते हैं। कच्चे फल में सबसे अधिक टैनिन होती है। बंबई के की खाल चिकनी झुर्रीदार होती है। ये हड़्डे अंदर से छेददार (Porous) और हल्के रँग के होते हैं। जब्बलपुर और बिंगोरला के हड़्डों की झुर्रियें पास-पास और हल्की होती हैं। वे सख़्त, ठोस, और गहरे रंग के होते हैं। लेकिन घाल का रंग गहरा नहीं होता। पतले हरे हरे होते हैं; इनमें पीला रंग कम होता है। ये हड़्डे सुमैक से कुछ मिलते हैं पर इसमें शायद इलाजीटैनिक एसिड (Ellagitannic acid) गैलोटैनिक एसिड (Gallotannic acid) की अपेक्षा अधिक होता है।

ये हड़्डे रंगत में चमकीले होने चाहियें, कीड़ों के खाए या नर्म या मोम से नहीं होने चाहियें। सीली जगह में रखने से वे जल्दी पानी चूस लेते हैं और मोम से हो जाते हैं जिससे पीसने में कठिनता होती है। गुठली में या उसके छिलके (Kernel) में टैनिन नहीं होती है। परन्तु छिलके में एक तेल होता है जो चमड़े को एक अजीब ख़ुशबू देता है। टैनिन बड़े मोटी दीवारवाले सैलों (Cells) में होती है और ऐसी आसानी से नहीं निकल आती है। विना टूटे पानी में हड़्डे फूल आते हैं। छाल में भी इतना ही टैनिन होता है जितना फल में। इस वृक्ष पर गैल (Galls) भी होते हैं।

कहुआ—टी॰ अर्जुन (T. Arjun)—मध्यभारत में होता है। इसकी छाल में १८—२४% टैनिन होती है (पिलग्रिम)। चमड़ा हल्के गुलाबी (Fawn) रंगत का निकलता है। छाल हारनेस और तले

के चमड़े बनाने के लिये अच्छी है। यह मिश्रित टैनिन मालूम होती है।

धावा, ढावा, धौरा— ऐनोजिसस लैटीफ़ोलिया (Anogeissus latifolia)। यह मध्य और दक्षिणभारत में होती है। छाल और पत्ती में खूब टैनिन है। टहनी की छाल में १३·५% टैनिन और १३·७% नानटैनिन है। पक्की छाल में १५·५% टैनिन और ८·८% नानटैनिन है (पिलग्रिम)। यह और-और चीज़ों के साथ मिलाकर प्रयोग होती है। पत्ती में १०—१८% टैनिन और १२—२३% नानटैनिन (पिलग्रिम, ब्रमवैल आदि); हरी पत्तियों में व छोटी टहनी में २०—३०% टैनिन और १२—१६% नानटैनिन होती है। इनकी लाल नोकों में ५४% टैनिन और १४—५% नानटैनिन मिली थी। छाल और पत्ती मिलाकर पकाने से चमड़ा जल्दी पकता है और पीली हरी रंगत का होता है। योरोप के सुमैक की तरह यह भी रंगत साफ़ करती है। रंग की तौर पर भी प्रयोग होती है। बहुत कम फुलाती है। इसके पेड़ पानी में दलदली जगहों पर और बड़ी-बड़ी नदियों के किनारे होते हैं। सत निकालने में इसमें और-और छालें भी मिला देते हैं, यदि ख़ाली इसका ही सत तैयार किया जाय तो बहुत बढ़िया पकानेवाला पदार्थ हो।

बकऊ या टेंगा—सीरियोप्स कैन्डोलियाना (Ceriops Candolleana)—ईस्टइंडीज़ (East Indies) और बंगाल में होती है; बंगाल में इसको गोरन (Goran) कहते हैं। इसकी छाल में ४० % तक टैनिन होती है। इसको कच्छ (Cutch कत्था) के बजाय प्रयोग में ला सकते हैं। रँगने में यह कच्छ के बराबर है। ठोस सत में ६५% टैनिन होती है जिससे चमड़ा अच्छा पर गहरी लाल रंगत का बनता है।

जामुन—यूजिनिया या साइज़ीजियम जैमजोलाना (Eugenia or

Sizygium jamjolana)। इसकी छाल में १६% टैनिन (हूपर Hooper) है।

गोथार, घौट— जाइज़ीफस क्साइलोपाइरा (Zizyphus Xylopyra) मध्यभारत में होती है। इसका फल छोटे बेर का सा होता है जिसमें सख्त गुठली होती है। टैनिन और गूदा वज़न में बराबर २ निकलते हैं। टैनिन फल में होती है और इसके साथ में बहुत सा स्टार्च (Starch) सा होता है जिससे छानने में कठिनता होती है। अधिक प्रयोग करने से कहते हैं चमड़ा चटख़ जाता है। असर जल्दी करती है। घोल में ख़मीर जल्दी उठने लगता है और फिर तो यह चूना निकालने-वाले पदार्थों की तौर पर प्रयोग हो सकती है। यह बहुतायत से मिलती है और सस्ती होती है; गूदे में २३% टैनिन और ४१·५% नानटैनिन (अमवैल) होती है।

डिवीडिवी—(सीज़लपिनिया कोरियारा Cesalpinia coriaria) यह वृक्ष २०-३० फ़ुट ऊँचा होता है। यह मध्य अमरीका में पैदा होता है पर भारत में उगाया गया है। इसके सूखे पाड्स (Pods) में ४०—४५% पायरोगैलोल टैनिन होता है जो मुख्यतया इलाजी टैनिक एसिड (Ellagi-tannic Acid) है। इसमें ख़मीर यकायक उठने लगता है और एक गहरा लाल रंग पैदा हो जाता है। इसी कारण से यह बहुत प्रयोग नहीं होता; वरन् अच्छा पदार्थ है। पर यह क्यों होने लगता है, इसके कारणों का पता नहीं। गाढ़े घोलों में प्रयोग करने से भारी और पुख्ता चमड़ा बनता है। लेकिन प्रायः गैम्बियर (Gambier) के बदले ड्रेसिंग के चमड़ों (Dressing Leathers) पर प्रयोग होता है। जल्दी ढोल में पकाने से हल्के चमड़ों पर शायद अच्छी रंगत आ जाय। इससे गोश्त की सतह चिकनी और पुख़्ता बनती है। इससे पके चमड़े का रंग बाहर से चाहे साफ़ हो पर अन्दर नीला ऊदा सा होता है।

शायद लागवुड (Logwood) के रंग का सा कोई रंग बन जाता है। टैनिन बीज में नहीं होती; पाड के छिल्के में होती है। पाड्स (Pods) तीन चार सेन्टीमीटर लंबे होते हैं; बाहर का गहरे रंग के होते हैं; सखने पर S को शक्ल धारण कर लेते हैं। इनको तोड़ने पर बहुत सा टैनिन-वाला बुरादा निकलता है जो पानी में घुल जाता है।

तारी या तेरी के पाड (Pod) सी. डीगना (C. digyna) बर्मा और भारत में होते हैं, ये दवाई के तौर पर प्रयोग होते हैं। पाड के ढक्कन (Pod Cases) में ४४% टैनिन और बीज सहित पाड में २४% टैनिन (प्राक्टर) होती है। अगर इसमें डिवीडिवी को तरह खमीर न उठे तो शायद प्रयोग में बहुत आ जाय। इँगलैंड में यह व्हाइट टैन (White tan) के नाम से चला है। इससे चमड़ा ऐसा सफ़ेद तैयार होता है जैसा सुमैक (Sumac) से।

तरवद, आवारम—केशिया आरीक्यूलेटा (Cassia auriculata) दक्षिणभारत में भेड़ और बकरी को खालें पकाने के काम आती है। इसमें १७% कैटिकाल टैनिन है। इससे हलके पीले रंग का चमड़ा निकलता है जो धूप में जल्दी से लाल हो जाता है। छाल छोटी और पतली होती है और सूखने पर गुडिया जाती है। यह बबूल से कुछ मँहगा पड़ता है।

बबूल—अकेशिया अरैबिका (Acacia arabica) । छाल में १६—१७% कैटिकाल टैनिन होती है। यू० पी० में प्रायः हर काम में यही प्रयोग होती है। इसके पाड बेटिंग के लिये प्रयोग किए जाते हैं। इनमें उतनी ही टैनिन होती है जितनी छाल में, पर यह कैटिकाल नहीं है। यह डिवी की सी हल्की टैनिन है जो चूने से तलछट नहीं होती। छाल की टैनिन में बहुत लाल रंग होता है।

कत्था—अ. कैटिशू (A. Catechu) की लकड़ी में से काला कत्था निकलता है। हल्के रंग का भी कत्था बनता है जो पान में खाया जाता

है। इसका वृक्ष ३०-४० फ़ीट ऊँचा होता है। यह क्रोम और लोहे के मारडैन्ट पर बादामी और काली रंगत रँगने के लिये प्रयोग होती है। अच्छे कत्थे में लगभग ६०% टैनिन होती है।

ईच्छा, थवाई। वुड फार्डिया फ्लारीबन्डा (Woodfordia floribunda)। इसकी छाल और पत्ती में टैनिन होती है। छाल तले के चमड़े के लिये प्रयोग होती है; रंगत अच्छी आती है, पर इसको अकेले प्रयोग करने से दाना चटखता है। पत्ती में १५.४% टैनिन और १७.२% नानटैनिन होती है। छाल में २६.६% टैनिन और १३% नानटैनिन होती है (ब्रमवैल)।

आम—मैञ्जिफीरा इंडीका (Mangifera Indica)। इसकी छाल और पत्ती में बहुत टैनिन होती है। यह कैटिकाल टैनिन है।

अनार—Pomegranate—प्यूनिका ग्रेनेटम (Punica Granatum)। फल के छिल्के स्पन में पकाने के लिए प्रयोग होते हैं। यह सुमैक के बदले काम आ सकता है। सूखे वज़न पर २७—३०% टैनिन और १८—२०% नानटैनिन (ब्रमवैल) होती है। कहते हैं कि छाल में २२% टैनिन होती है। जंगली अनार के फल में ४६% तक टैनिन होती है।

अमलताश—केसिया फ़िसचूला (Cassia fistula)। यह दक्षिणभारत में मिलती है। छाल में १४.५% टैनिन और १६% नानटैनिन (ब्रमवैल) होती है। इससे सफ़ेद चिकने दाने का चमड़ा बनता है। यह बबूल या तरवद के साथ मिलाकर प्रयोग होती है। पाड के छिल्के (Husk) में १७% टैनिन होती है। गूदा दस्तावर होता है।

महुरें (Mahurain)—बाहनिया वहली (Bauhinia vahli)। यह बेल मध्यभारत में होती है। रेशों के बीच के जोड़नेवाले मसाले में टैनिन होती है। रेशे रस्सी बनाने के काम आते हैं। इससे सफ़ेद (Cream coloured) चिकना चमड़ा बनता है; इसमें फुलाने की शक्ति अच्छी होती है पर इसकी टैनिन तेज़ी से नहीं घुसती।

साल--शोरिया रोबस्टा (Shorea robusta)। पिसाई के बाद इसकी धूल में ६.२—१५% टेनिन होती है (ब्रमवैल)। बचे हुए रेशों में ३% से अधिक टैनिन नहीं होती। जब यह गोथर और करौंदे के साथ प्रयोग होती है, तो इससे हल्के रंग का मजबूत चमड़ा बनता है।

वाटल (Wattle)। यह आस्ट्रेलिया में होता है; पर नीलगिरि पर्वत पर भी उगाया जा रहा है। यह अकेशिया जाति के हैं जिसमें बबूल भी है। आस्ट्रेलिया के गोल्डन वाटल (Golden wattle) की छाल बहुत तेज पकानेवाली छालों में से है। इसमें ४०-४५% टैनिन होती है; ज्यादातर वाटल वृक्षों में २५—४०% टैनिन होती है। यह कैटिकाल टैनिन है।

अन्य देशों के मुख्य वनस्पति जो कि उनमें के टैनिन के कारण प्रयोग होते हैं, ये हैं:—स्प्रूस (Spruce)—एबीज एक्सैल्सा (Abies excelsa)। यह आस्ट्रिया का प्रधान पकानेवाला पदार्थ है। इसमें ७—१३% कैटिकाल टैनिन होती है। इसमें बहुत सी खमीर उठनेवाली (Fermentable) शक्कर होती है जिसके कारण इसमें फुलाने और जल्द असर करने की शक्ति होती है। पर इसकी पकावट भारी नहीं होती। लार्च का सत (Larch extract) इसी से बनता है।

हैमलाक (Hemlock; एबीज कैनाडेन्सिस Abies canadensis)। अमरीका का मुख्य पकानेवाला पदार्थ है। इसी से हैमलाक का सत बनता है। इसमें ८—१०% कैटिकाल टैनिन होती है। पुराने वृक्षों की छाल पकाने और सत बनाने में काम आती है।

आल्डर (Alder; आलनस ग्ल्यूटीनोसा Alnus glutinosa) में १६-२०% कैटिकाल टैनिन और बहुत सा लाल रंग होता है। रंगत पकने में और बाद में निखरती है। अकेले इससे लाल चटखनेवाला चमड़ा बनता है पर गैल्स, वैलोनिया आदि के साथ यह अच्छा काम देता है।

बर्च (Common Birch बेटुला एल्बा Betula alba) । रूस में इसको पकाने के लिए प्रयोग करने के सिवाय इसकी छाल से एक कोलतार का सा सत निकालते हैं, जिसके इस्तेमाल से रूस के चमड़े में एक ख़ास ख़ुशबू और कीड़ों को न आने देने को शक्ति आ जाती है।

चैस्टनट (Chestnut कैस्टेनिया वैस्का Castanea vesca)। इसकी छाल में ६-८%और लकड़ी में ३-६%टैनिन होती है, पर चैस्टनट का सत लकड़ी से ही बनता है। सत में २८—३२%टैनिन होती है। यह पायरोगैलाल टैनिन है और ओक की लकड़ी की टैनिन से इतनी मिलती है कि पहिचानी नहीं जा सकती। बहुधा इसके सत की रंगत को दूर कर इसमें कुबरैचो आदि दूसरे पदार्थों का सत मिला ओकवुड और ओकबार्क के सत के नाम से बेचते हैं। इसके सत से चमड़ा पुख़्ता बनता है; और गाढ़ा प्रयोग करने से बहुत सा ब्लूम जमा हो जाता है। यह वैलोनिया से अधिक लाल रंगत देता है। स्प्रूस की छाल के साथ मिलाकर प्रयोग करने से बहुत ठीक काम निकलता है। वैलोनिया, मिरैब आदि के साथ इँगलैंड में यह तले का चमड़ा पकाने के काम आता है।

ओक (Oak) में कितनी ही जाति हैं जिनकी छाल और लकड़ी में काम दायक टैनिन होती है। ओकवुड का सत कुअरसस पेडनक्युलेटा Quercus pedunculata की, जो स्लेवानिया में बहुत होता है, लकड़ी से बनाया जाता है। सुसैक्स और हैम्पशायर की छाल में १२—१४% टैनिन होती है। लकड़ी में २-४% टैनिन होती है। लकड़ी और छाल की टैनिन में अंतर है। लकड़ी की टैनिन पायरोगैलाल टैनिन है और छाल की टैनिन या तो कैटिकाल या मिश्रित टैनिन है। इसका सत तले और ड्रेसिंग के चमड़े बनाने में और मुख्यतया लेअर के घोलों की शक्ति बढ़ाने के काम में आता है। स्लैवानिया के सत में २६-२८% टैनिन, ४-५° लाल और २०—२५° पीला रंग होता है।

वैलोनिया (Valonia)—कु० एजीलोप्स (Q. Aegilops) । इसके एकार्न के कप्स (Acorn cups) ही चमड़ा पकाने में काम आते हैं। स्मिरना के सब से अच्छे वैलोनिया में ४०% तक टैनिन मिला है। यह पायरोगैलाल टैनिन है और बहुत सा ब्लूम जमा देता है। बीअर्ड (Beard) में कप (Cup) से अधिक टैनिन होता है। तले का चमड़ा बनाने के लिए यह बहुत अच्छा है। यदि सूखा प्रयोग हो तो चमड़ों को ठोस और गठा हुआ बनाता है; पर दाना कुछ खुरदरा हो जाता है। ठीक प्रकार इस्तेमाल करने से यह बिल्कुल ब्लूम नहीं देता। गैम्बीअर आदि के साथ हल्के चमड़ों के लिए अच्छा है।

एलैपो के गैल्स (Aleppo galls) कु. इन्फैक्टोरिया (Q. infectoria) ओक पर कीड़ों के कारण बन जाते हैं। अच्छों में ५०-६०% गैलोटैनिक एसिड (Gallotannic acid) होता है। व्यापारिक टैनिक इन्हीं से बनती है।

कुब्रैचो (Quebracho—कु० ब्रैचो कालोरेडो Q. colorado) दक्षिणी अमरीका में होती है। इसको लकड़ी में २५-२८% लाल कठिनता से घुलनेवाली टैनिन होती है। उसमें कैटीकाल और फ्लोरोग्ल्यूकाल है। इससे चमड़े में रैडस (Reds) जमा हो जाते हैं और पुख्ता लाल चमड़ा बनता है। इसके सत भी बनाए जाते हैं जो खार मिले होने से बिल्कुल घुल जाते हैं।

सुमैक (Sumac—रहस कारियारा Rhus coriara) सिसिली से आता है। इसकी पत्ती काम में आती है। अच्छे सुमैक में २५-२७% पायरोगैलाल टैनिन होती है। यह हल्के रंगों और नर्म पकाई के लिए बहुत अच्छो है इसलिए मड़ाको (Morrocco) रोन्स (Roans) और स्काइवर पकाने और माइमोसा, गैम्ब्रीअर जैसी गहरी पकावटों का रंग साफ़ करने के लिए प्रयोग होती है। इससे पके चमड़े पर धूप और

गैस के धुएँ का असर बहुत कम होता है। इससे पकाया चमड़ा औरों से पकाए की अपेक्षा रक्खे रक्खे कम खराब होता है।

गैम्बीअर (Gambier—अनकेरिया गैम्बीर Uncaria gambir)। इसका सत जो पत्ती और टहनी से निकाला जाता है घनों (Cubes) के रूप में बाजार में आता है। अच्छे को रंगत मिट्टी को सी होती है। इसकी टैनिन कैटिकाल और फ्लोरोग्ल्यूकाल से मिला पदार्थ है। मामूली क़िस्म का गैम्बीअर का सत बड़े ढेलों के रूप में आता है। इनमें ३५—४०% टैनिन होती है। अच्छे घनों में ५०-६४% टैनिन होती है। यह पान के साथ खाया भी जाता है। इसको भी कत्था कहते हैं। यह ईस्ट इंडीज में होता है।

मैनग्रोव (Mangrove) या मैंगिल (Mangle)। यह सारी दुनिया में समुद्र के किनारे के गर्म प्रदेशों में होता है। छाल में १५-४०% कैटिकाल टैनिन होती है जो आसानी से निकल आती है और गहरी लाल रंगत की होती है। अब यह ओक, माइमोसा आदि के साथ बहुत प्रयोग होती है।

अलगारोबिल्ला (Algarobilla—सीजिल्पीनिया ब्रिवीफ़ोलिया Caesalpinia brevifolia) यह चिली में होता है। जितने तेज पकाने-वाले पदार्थ हैं उनमें से यह एक है, इसमें ४५% डिवी की तरह की पायरो-गैलाल टैनिन होती है; इसकी रंगत कम बिगड़ती है। ठंडे पानी में आसानी से घुल जाती है। बीज में टैनिन नहीं होती, इसके पाड ही प्रयोग होते हैं।

लागवुड (Logwood—सी. कैम्पीशियानम् C. campechianum) मध्य अमरीका में होती है। इसमें ३% टैनिन और रंग होता है। यह क्रोम और लोहे के मार्डेन्ट के साथ काली रंगत रँगने के लिए प्रयोग होती है।

ग्यारहवाँ अध्याय

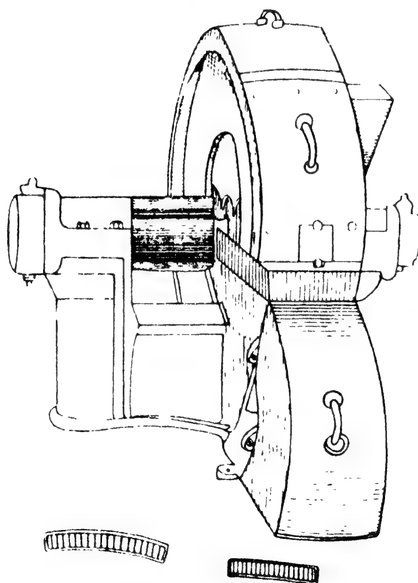
पकानेवाले वनस्पति पदार्थों का घोल तथा गीला और सूखा सत बनाना।

(LEACHING AND MANUFACTURE OF EXTRACTS)

छाल फलादि को पानी में भिगोने से उनका सत निकल आता है, पर जैसा पहले कहा है, टैनिन सैलों (Cells) में रहती है, जिनकी दीवालें मोटी होती हैं। अतः साबुत फल व छाल में से स्वत निकलने में उसे बड़ा समय लगता है; तोड़कर जितना बारीक कर दिया जाय उतनी ही जल्द टैनिन निकल आती है—इनको तोड़ने चूरा करने की आवश्यकता है। सब पदार्थों को तोड़ने के लिये एक ही सी मशीन काम नहीं दे सकती। हर एक के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार की चक्की चाहिये। डिवी आसानी से पिस जाती है पर हड्डा और बिलोनिया बड़े कड़े होते हैं; खास कर हड्डे की गुठली। इनके लिये बड़ी मजबूत मशीन चाहियें। पदार्थ जितना बारीक पिसा होगा उतना ही आसानी से सत निकल आयगा। पर ऐसी दशा में इतना बारीक पदार्थ लीच (Leach वह हौदे जिनमें सत निकाला जाता है) में जमकर चिकनी मिट्टी के समान कड़ा हो जाता है, और उनमें से सत निकल नहीं पाता। रसायनशाला में चन्द घंटों में सत निकालने के लिये बारीक पदार्थ अच्छा है, परन्तु

फेक्टरी के लिये इतना मोटा चाहिये जो जमे नहीं। इनमें से सारा टैनिन निकालने में हफ़्तों लग जाते हैं। इसलिये इतना बारीक पीसना चाहिये कि जितनी जल्दी हो सके सारा टैनिन निकल आवे और इतना बारीक भी न हो कि जम जाय। जो मशीन कि सब के लिये ठीक हों और कड़े से कड़े पदार्थ को भी चूरा कर दें वह डिसइन्टीग्रेटर (Disintegrator) हैं। सब से पहले आटे की सी पत्थर की चक्की इन कामों के लिये प्रयोग होती थी। सुमैक अब भी इसमें पिसता है, पर और पदार्थों के लिये यह बिलकुल ठीक नहीं है; गीला पदार्थ इसमें चिपक जाता है।

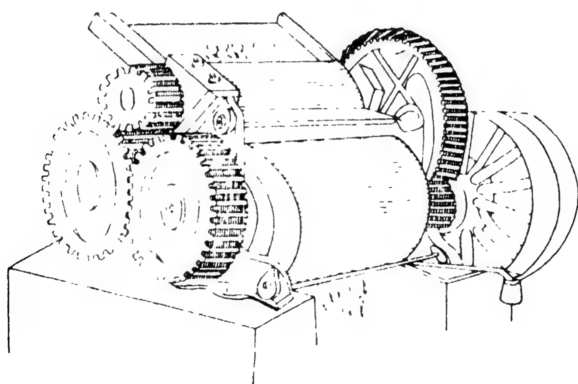
डिसइन्टीग्रेटर (चित्र १५) में धुर्रे से लोहे के चार मजबूत फले



चि० १५ डिसइन्टीग्रेटर

लगे होते हैं। वे बड़ी तेजी से घूमते हैं; फी मिन्ट में १५००—२००० चक्कर

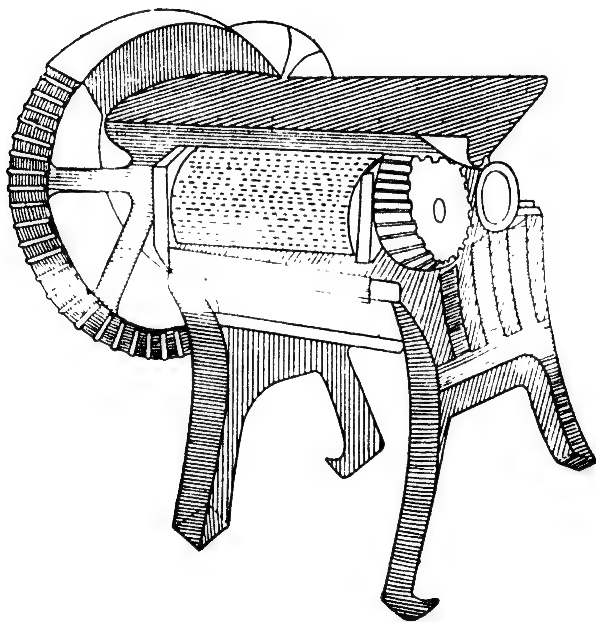
करते हैं। जिस ढकन में यह ढके रहते हैं वह भी अच्छे मज़बूत लोहे का बना होता है, और इस प्रकार का होता है कि पदार्थ भली प्रकार इन हथौड़ों की चोट में आ जाता है। इनमें ईंट लोहा तक चूर चूर हो जाता है। नीचे के मुँह पर जहाँ से पिसा पदार्थ गिरता है चलनी लगी होती है। जैसी मोटी बारीक चलनी होगी वैसा ही पदार्थ पिस कर गिरेगा। पर चलनी की तारें भी मज़बूत होनी चाहिये क्योंकि जो टुकड़ा बड़ा होने के कारण उन पर रह जाता है वह हथौडों से टकराता है। ऐसे में कमज़ोर चलनी टूट जायगी। डिसइन्टीग्रेटर्स में लोहे के कण पदार्थ के साथ चले जाते हैं, उनको न जाने देने की कितनी ही तरकीबें की जा चुकी हैं, पर कुछ सफल नहीं हुईं। यह एक बड़ी ख़राबी है पर यदि ज्योंही कोई हिस्सा ख़राब हो उसको बदल दें, तो यह झंझट दूर हो सकता है। यह मशीनें बड़ी तेज़ी से चलती हैं; अतः इनको बड़ी सावधानी से जमाना (Fit up) चाहिये वर्ना टूटने और शोरगुल होने का डर रहता है।



चि० १६ हड्डा तोड़ने की मशीन

इस मशीन से हड्डा ख़ूब बारीक पिस जाता है, पर सत निकालने के

लिये इतने बारीक की आवश्यकता नहीं। इसकी बनावट ऐसी है कि दरदरा हो तो भी टैनिन आसानी से निकल आती है। ऐसे बारीक चूरे के जम जाने तथा उससे सारा टैनिन न निकलने का डर है। इस लिये हड्डे पीसने को एक अलग ही मशीन है, जिसे मिरेबलन क्रशर (Myrobalan Crusher) कहते हैं (चित्र १६)। इसमें धारीदार तीन बेलन लगे हैं। पहला पदार्थ को दूसरे दो के बीच में ले जाने का



चित्र १७ बकला तोड़ने की मशीन

काम करता है। दूसरे दोनों के बीच में हड्डा पिस जाता है। और पिसा पदार्थ नीचे गिरता है। इसमें कुछ और भेद भी कर दिये गये हैं जिससे टूटने व घिसने पर सुधारने का काम आसान हो गया है। बकले आदि

के पीसने को [अमेरिका में शेविंग मिल (Shaving Mill) प्रयोग होती है, परन्तु कड़ी छालों जैसे ओक आदि के लिये यह ठीक नहीं है। इस काम के लिये बार्क ब्रेकर (Bark breaker चित्र १७) नामी मशीन अच्छी है। इस में दाँतोंवाले बेलन हैं, जिनके बीच में छाल टुकड़े-टुकड़े हो जाती है। फिर बाद में किसी चक्की से पीसी जा सकती है। इन मशीनों को ऐसे ऊँचे पर गाड़ते हैं कि पिसा पदार्थ नीचे जमा होता चला जाय। ज़मीन पर गाड़ने से मज़बूती होती है पर ऐसी हालत में उसके नीचे एक गड्ढा रखना होता है। पिसे पदार्थ को उठाने के लिये बकैट एलीवेटर (Bucket elevator) प्रयोग हो सकता है।

अमेरिका में पिसा पदार्थ गुदाम लेजाने, गुदाम से लीच और टेनिन निकला भीगा बकला लीच से बाइलर पर लेजाने के लिये प्रायः कनवेअर्स (Conveyors लेजानेवाली मशीनें) प्रयोग होती हैं। कनवेअर्स कई प्रकार के होते हैं और कितने ही कामों में आते हैं। इनका मुख्य काम एक स्थान से दूसरे स्थान पर सामान ले जाने का है। टैनरी के सिवाय और कामों के कार्यालयों में भी यह काम में आते हैं। मामूली में लोहे की चेन की एक बेल्ट होती है, जो दो स्थानों के बीच घूमती रहती है। हर कड़ी पर इसमें V की शक्ल की बाल्टी लगी होती हैं। पिसा हुआ पदार्थ यहाँ पर बालटियों में गिरता है। जब यह बालटी लौटने लगती हैं, उलटी हो जाती हैं और सामान वहीं गिर जाता है। इस प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान पर इनसे सामान ले जाया जाता है।

इन पीसने की चक्कियों को और तमाम इमारत से अलग लगाना चाहिये, क्योंकि इनमें आग लगने का बहुत डर रहता है। पिसा पदार्थ धूल-सा उड़ता रहता है और जहाँ पुली आदि पर जमा हुआ रगड़ बढ़ने से आग लग जाती है। डिसिन्टीग्रेटर में बकले आदि के साथ कोई कड़ी चीज़ चले जाने से उसमें रगड़ बढ़कर आग लग जा सकती है।

सत निकालने की कितनी ही विधिएँ हैं। पर भारत में जो विधि प्रायः काम में आ रही है वह हौदों में डालकर निकालने की है। लीच के हौदे 12′×12′×10′ होते हैं। इनमें तली से एक फ़ुट ऊपर एक छेददार तख़्ता रखता है जिसमें होकर घोल तो नीचे चला जाता है पर ठोस पदार्थ ऊपर ही रह जाता है। इस तख़्ते को झूठी तली (False bottom) कहते हैं। हर हौदे के एक कोने में खड़ी नाली होती है जो खड़े डंडे से खोली और बन्द की जाती है। इन हौदों की डाट के दोनों तरफ़ छेददार तख़्ते का कठेरा लगा रहता है जिससे टुकड़े नाली तक न पहुंच सकें। हौदों की पाँत के बीच में नाली होती है जो कुएँ (Well गहरे गढ़े) में गिरती है। हर हौदे की नाली इस नाली में गिरती है। इस प्रकार हर हौदे का घोल कुएँ में पहुँचता है। वहाँ से दूसरे लीच के हौदे या टैनरी में पम्प द्वारा भेजा जाता है।

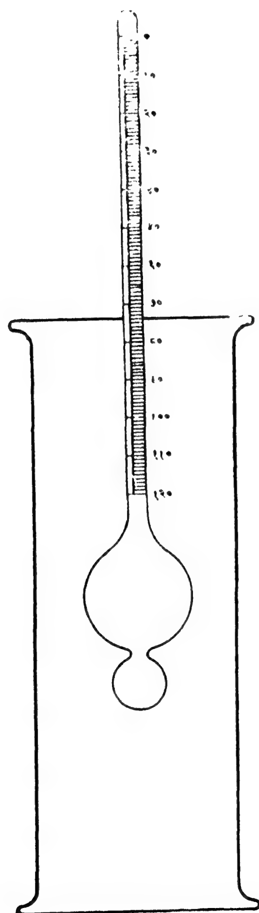
इन हौदों में पिसा पदार्थ डालकर उसमें जल भर देते हैं। ६, ८ या १२ हौदों का एक चक्कर होता है। प्रति दिन चक्कर के सबसे पुराने हौदे में का सत निकला हुआ पदार्थ निकाल उसमें नया पदार्थ भर सबसे नए हौदे का सबसे अधिक टैनिन (सत) वाला घोल उसमें डालते हैं। बाक़ी हर हौदे का घोल आगे के हौदे में बढ़ा देते हैं। जो सबसे पुराना बचा उसमें पानी भर देते हैं। प्रति दिन या प्रति दूसरे दिन ऐसा करते हैं। एक हौदे में से दूसरे में घोल डालने के लिये या तो पम्प या प्रेस लीच सिस्टम (Press leach system) प्रयोग करते हैं। यह बड़े-बड़े हौदे होते हैं, और एक लाइन में या पास-पास बने होते हैं। हर हौदे के बीच की दीवार में एक नाली होती है जो ऊपर एक हौदे में और नीचे दूसरे हौदे की तली पर निकलती है। इसी प्रकार पहले दूसरे, दूसरे तीसरे आदि हौदों के बीच की दीवाल में एक-एक खड़ी नाली होती है जिसका नीचे का सिरा पहलेवाले हौदे की तली पर निकलता

है और जिसका ऊपरी मुँह पहलेवाले हौदे की सतह से कुछ नीचा होता है। इस प्रकार सब हौदे एक दूसरे से मिले होते हैं।

इस सिस्टम में सत निकला हुआ पदार्थ निकाल उसमें नया पदार्थ भर सबसे पुराने पदार्थवाले हौदे में पानी भरते हैं। उस पानी के दबाव से हर हौदे का घोल आगे बढ़ जाता है। जब नया हौदा भर जाता है, पिछले में पानी लगाना बन्द कर देते हैं। यहाँ पर हलके घोल से भारी घोल को आगे बढ़ाना है, अतः जल को हौदे में ऊपर से छोड़ते हैं। ज्यों-ज्यों जल की सतह बढ़ती है, नीचे का घोल तले से खड़ी बीच की नाली में ऊपर उठता हुआ आगे के हौदे में चला जाता है, क्योंकि बीच की नाली का ऊपरी मुँह पहले हौदे में के जल की सतह से नीचा है। हर हौदे में नीचे का घोल भारी है, ऊपर से आनेवाला हलका, इससे दोनों मिल नहीं पाते। इस प्रकार घोल हौदे में नीचे उतरता है और खड़ी नाली में ऊपर चढ़ता है। सबसे पहले पदार्थ के घोल को गरम कर देने से वह और हलका हो जाता है, और मिलने नहीं पाता। हौदे को पदार्थ से पूरा-पूरा न भरना चाहिए बल्कि तीन चौथाई के लगभग, क्योंकि पानी चूसकर वह फूलता है। प्रेस सिस्टम (Press System) में छः हौदे का एक चक्कर ठीक रहता है। बारह हौदों के चक्कर में बीच के एक हौदे में से पम्प (Pump) द्वारा ले जाना पड़ता है। हलके घोल पदार्थ के साथ रखने या उनका पानी सुखा देने से भारी किये जा सकते हैं।

पम्प काम में लाने की विधि में जिस घोल को कहीं ले जाना हो या बदलना हो उसे कुएँ में ले जाते हैं। वहाँ से पम्प द्वारा जिस हौदे में या जहाँ चाहे भेज देते हैं। चर्म्म कार्यालय में ऐसे पम्पों की ज़रूरत है, जिनमें यदि थोड़ा-सा ठोस पदार्थ (Solid-matter) चला भी जाय तो रुके नहीं। जो पम्प आठ हज़ार गैलन (8,000 Gallon) फ़ी घन्टे निकाल सकें अच्छे होते हैं, उनमें तीन इंच का होज़ पाइप (Hose Pipe कपड़े का

नल) लगा सकते हैं। यह ठोस पदार्थ से नहीं रुकेगा। पम्प चलाने के लिये बिजली की मोटर से काम ले सकते हैं, वरना भाप से चलनेवाले पम्प



चि० १८ बार्कोमीटर

प्रयोग हो सकते हैं। इन पम्पों की वाल्व (Valves) ऐसी होनी चाहिए जो आसानी से खुल सकें। पम्प का वह हिस्सा जिसमें होकर यह घोल जाएँगे पीतल या फूल (Brass or gunmetal) का होना चाहिए। लीच के कुएँ के लिये सैन्ट्रीफ्यूगैल पम्प (Centrifugal pump) अच्छे होते हैं। पम्प में ठांस पदार्थ को जाने से रोकने के लिये छन्ना (जाली) न लगाना चाहिए। यह जल्दी से बन्द हो जाता है।

हल्का और भारीपन देखने के लिये घोल का गुरुत्व देखते हैं। इसके लिये गुरुत्वमापक (बारकोमीटर Barkometer चित्र १८) काम में लाते हैं। घोल डिब्बे में लेकर इस यन्त्र को घोल में डालते हैं। जिस निशान पर घोल रहे उसे पढ़ लेते हैं। जितना अधिक गुरुत्व (डेन्सिटी) होता है उतना ही भारी घोल होता है और वैसे ही उसमें अधिक टैनिन होती है। परन्तु काम में आये हुए घोलों (Solutions) का गुरुत्व यद्यपि बहुत होता है पर उनमें टैनिन कम होती है। उनका यह गुरुत्व न पकानेवाले पदार्थ (Non-tanning Matters) के कारण होता है। गुरुत्व नापने से टैनिन की मात्रा का पता नहीं चलता कि कितनी है पर अनुमान हो जाता है कि कौन सा घोल कैसा है। बार्कोमीटर पर जो अङ्क आयें उससे विशिष्ट गुरुत्व (Specific-Gravity) मालूम करने के लिये उस अङ्क को ५ से गुणाकर एक हज़ार में जोड़ देना चाहिए। जोड़ में एक हज़ार का भाग दे देने से विशिष्ट गुरुत्व निकल आता है। अर्थात् $\text{विशिष्ट गुरुत्व} = \frac{(\text{बा.} \times ५) + १,०००}{१,०००}$।

यथा ५° बार्कोमीटर का विशिष्ट गुरुत्व १.०२५ हुआ।

वनस्पति पदार्थ से जिस ताप (Temperature) पर जोश देकर घोल तैयार किया जाता है, उसका ठीक होना आवश्यक है। यह ख़्याल कि सबसे अधिक टैनिन खौलने पर निकलती है, ग़लत है। हर

पदार्थ के लिये एक ख़ास ताप होता है जिसको मध्यम ताप(Optimum Temperature) कहते हैं और जिस पर सब तापों की अपेक्षा अधिक टैनिन निकलता है।

बहुत से कामों में टैनिन के सिवाय जो रङ्ग साथ में निकलता है वह हानिकारक है, क्योंकि उससे चमड़ा रङ्गतदार पकता है। ऊँचे ताप पर अधिक रङ्ग निकलता है। अतः चर्म्मकार को देखना होता है कि किस ताप तक वह अधिक से अधिक टैनिन निकाल सकता है, जब कि जरूरत से ज्यादा रङ्ग भी नहीं आने पाता। प्रायः ५०° से ६०° श. तक पर सत निकालना ठीक रहता है। परन्तु अच्छी तरकीब यह है कि शुरू में ठन्डे पानी से सत निकाला जाय और बाद में गर्मी दी जाय। जहाँ बिलकुल बेरंग की घोल चाहिये वहाँ गर्म नहीं करना चाहिए। सबसे पुराने पदार्थ के घोल को ही गर्म करने से फल अच्छा होता है, क्योंकि इस प्रकार पदार्थ में से सारा टैनिन निकल आता है। ठन्डा होते में बहुत-सा रङ्ग और रेड्स (Reds) जो गर्म करने पर घुल जाते हैं बैठ जाते हैं। आगे बढ़ते हुये आगे के पदार्थों से छनकर अच्छे रङ्ग की घोल बनती है। सब लीच को गर्मकर देने से यह बात नहीं मिल सकती: उसमें रङ्ग भी होगा और जो घोल पकाने के लिये भेजा जायगा गर्म होगा। इन्हीं सतों को गाढा कर और पानी सुखा गीला व सूखा ठोस सत (Liquid or solid tanning extract) तैयार किया जाता है।

टैनरी में घोलों के गीले और सूखे सत बनाने की आवश्यकता नहीं, ये ऐसे ही प्रयोग हो जाते हैं। पर ऐसे कितने ही कारख़ाने खुलते जाते हैं जो वनस्पतियों के केवल गीले और सूखे सत बनाते हैं। चर्म्मकार के लिये यह सत इसलिये लाभकारी हैं कि वह उनको मिलाकर अपने घोलों में के टैनिन की मात्रा बढ़ा सकता है। वनस्पति पदार्थों की अपेक्षा सत मँगाने में महसूल कम लगता है और यदि चर्म्मकार चाहे वह

घोल बनाने के झंझट से बच सकता है। ये सत ठंडे पानी या घोल में घुल जाते हैं: कोई-कोई सत ४०-५०° श॰ तक गर्म करने पर घुलते हैं। चम्मकार की अपेक्षा सत बनानेवाला पदार्थ में से अधिक टैनिन निकाल पाता है और रंग को भी दूर कर देता है, जो चर्म्मकार के लिये अच्छा है। चर्म्मकार को भी घोल बनाने में ध्यान रखना चाहिए कि वह पदार्थ में से जितनी हो सके उतनी टैनिन निकाल ले। टैनिन निकले पदार्थ (Spent tan—स्पैन्ट टैन) में १% से अधिक टैनिन न रहना चाहिए। इन सतों को खरीदने से पहिले चर्म्मकार को विश्लेषण (Analysis) द्वारा जाँच कर उनमें की टैनिन की मात्रा मालूम कर लेनी चाहिए और उसी पर दाम लगाने चाहिए। गीले सतों की अपेक्षा सूखे सत अच्छे होते हैं, क्योंकि उनके लिये पीपे नहीं चाहिए और न उनमें खमीर उठने का डर होता है।

सत बनानेवाला आवश्यकतानुसार पदार्थ को गर्मकर ऐसा घोल तैयार करता है कि उसमें अधिक से अधिक टैनिन पर रंग कम से कम हो। इसके बाद वह उसमें ४०° श॰ पर खून या खून का अल्ब्यूमिन मिला उसको ७०° श॰ से ऊपर गर्मकर छोड़ देता है जिससे अल्ब्यूमिन जमकर बैठ जाता है और उसके साथ में रंग भी दूर हो जाता है। रंग दूर करने के लिए और भी पदार्थ प्रयोग होते हैं, पर वे इतने अच्छे नहीं हैं। सल्फ्यूरस एसिड से भी रंग दूर करते हैं पर क्योंकि इससे रंगवाले पदार्थ निकल नहीं जाते, सिर्फ़ सफ़ेद पदार्थ में बदल जाते हैं, घोल या उससे बना चमड़ा हवा लगने पर रंगत पकड़ जाते हैं। यह सत गहरी पकावटों के उजालने के काम में भी आते हैं। इसके बाद घोल का पानी हवा से शून्य भिन्न-भिन्न प्रकार की कलों में ठंडाकर सूखा सत तैयार करते हैं। इस प्रकार करने से घोल का ताप बहुत ऊँचा नहीं होता जिससे टैनिन खराब नहीं होने पाती और न कठिनता से घुलनेवाले रैड्स (Reds) बढ़ पाते हैं।

बारहवा अध्याय

वनस्पतियों से चमड़ा पकाने की विधि

VEGETABLE TANNING PROCESS

जो वनस्पति चमड़ा पकाने के लिये प्रयोग होते हैं या हो सकते हैं, वे पिछले अध्याय में दिये हैं। भिन्न-भिन्न चमड़ों के बनाने के लिये भिन्न-भिन्न पदार्थ प्रयोग किए जाते हैं। कौन सा पदार्थ किस-किस प्रकार से किसी चमड़े के बनाने में प्रयोग होता है। यह कई बातों पर निर्भर है। सबसे पहली बात तो यह है कि जो पदार्थ उस जगह पैदा होता है, और आसानी से मिल सकता है वही उस जगह बहुतायत से प्रयोग होता है। बाक़ियों का प्रयोग उनकी उपयोगिता, उनके मिलने और जो चमड़ा बनाना है उस पर निर्भर है। अब यहाँ पर तले का चमड़ा बनाने की विधि आधार सहित देते हैं, जिससे इस प्रकार के चमड़ा बनाने का पूरा-पूरा ज्ञान हो जाए।

तले का चमड़ा बनाने में चूने आदि में जो भेद करने चाहिएँ वे यह हैं, इनको पहले भी लिख चुके हैं:–इसके लिये खालों को ताज़े चूने में डालकर जल्दी तैयार करना चाहिए। प्रायः सोडियम सल्फाइड साथ में देते हैं। चूना देने की कुल विधि इस प्रकार करनी चाहिये कि खालें अच्छी फूल जाएँ, बाल आसानी से उतर जाएं, जितना कम हो सके उतना कम खाल की वस्तु घुले, क्योंकि इसके रहने ही से भारी ठोस चमड़ा

तैयार होता है। बाल कढ़ाई और छिलाई के बाद खालों को छाँटकर गर्दन, पेट और पुट्ठे अलग-अलग करते हैं। पुट्ठा ही पुख्ता होता है, और यही तले के चमड़े के योग्य होता है। इसलिये इसको तले के लिये पकाते हैं; गर्दन और पिटवार को सस्ते तरीक़े से पकाते हैं। पहले पुट्ठों को धोकर सीधे पकाने के घोल में डाल देते थे; पर अब प्रायः अम्ल (एसिड) से कम-से-कम दाने की तह का चूना तो निकाल ही देते हैं। धीमे चेतन अम्ल जैसे फ़ार्मिक, एसेटिक आदि या बोरिक या सल्फ़्यूरस एसिड ही इस काम के लिये प्रयोग होते हैं।

अम्ल से इस प्रकार चूना निकाल देने से चमड़े की रंगत साफ़ और एक सी आती है। दूसरे पकाने के घोलों में के अम्ल और टैनिन की बचत हो जाती है। पुराने तरीक़े में जबकि बहुत समय मिलता था, और बहुत-सा पदार्थ प्रयोग होता था, इन घोलों में ख़मीर (Fermentation) उठने लगता था, और आसानी से अम्ल पैदा हो जाते थे। अब सतों के प्रयोग में आने से ऐसा होना आसान नहीं। अतः चूना पहिले निकाल देने की आवश्यकता पड़ने लगी है। इतनी शक्ति (Strength) के अम्ल कभी न प्रयोग करने चाहिए, जिससे पुट्ठे फूल जाएँ। यदि सतह ही फूली हो, तब भी इस दशा में उनको पकने के घोलों में न डालना चाहिए, यदि सतह की फूलन हो, तो खालों को नर्म पानी में लटका देने मात्र से अन्दर के चूने से अम्ल शिथिल (Neutralise) होकर फूलन गिर जाएगी। इसीलिये इन अम्लों को सारा चूना निकालने लायक़ मात्रा में प्रयोग नहीं करते। तले के चमड़े के लिये चूना धोते समय जितना अम्ल डालना हो, सारा एकदम डाल देना चाहिए। इस तरह सतह का कैल्शियम कार्बोनेट तक (यदि कुछ बन गया हो) निकल जाता है। यहाँ पर इसकी जरूरत नहीं कि बराबर अन्दर तक का

चूना निकले, सिर्फ़ सतह साफ़ करनी और चूना कम करना ध्येय है।

पकाना (Tanning):—दुम की तरफ़ पुट्ठे के दोनों किनारों पर छेद करते हैं, और दोनों में एक-एक रस्सी पिरोते हैं। अब इन पुट्ठों को बड़े-बड़े हौदों में जो ज़मीन में बने होते हैं, जिनमें पुरानी प्रयोग की हुई घोल (Liquor) भरी होती है, रस्सी से लटका देते हैं। हौदों के ऊपर बांस रक्खे होते हैं, जिनसे कि उन रस्सियों का दूसरा सिरा बाँध देते हैं। कहीं-कहीं यह बाँस एक चौखटे में गड़े होते हैं, जिसको मशीन से हिलाते हैं। इनको ससपैन्डर्स (Suspenders) कहते हैं। इनमें प्रति दिन या प्रति दूसरे दिन एक नई गठरी आती है, और सबसे पुरानी निकाल दी जाती है; साथ ही सबसे पुराना घोल (Liquor) फेंक दिया जाता है, और नया घोल भरा जाता है। अब जो नया घोल आया उसमें बची हुई गठरियों में से पुरानी जाती है, और नई सबसे पुराने घोल में। इसलिये हर हौदे को उलटना-पलटना पड़ता है। सबसे पुराने घोलवाले हौदे की खालों को निकालकर हौदे के ऊपर रख देते हैं, और उसका घोल बहा देते हैं। उसमें नई तेज़ (भारी) घोल भर देते हैं। सबसे पहिली गठरी को चक्कर में से आगे के लिये निकाल देते हैं। अब बाक़ी गठरियों में से जो सबसे पहिली होती है, नयी घोल में और उससे पहली को इसकी जगह डालते हैं। इस प्रकार सब गठरियों को आगे बढ़ा देते हैं। जिसमें सबसे पुराना घोल होता है, वह आख़िरी हौदा कहलाता है और इस प्रकार खाली हो जाता है, उसमें नई गठरी लटकाते हैं। चक्कर से निकली हुई गठरी हैन्डलर्स (Handlers) को जाती है।

शुरू के चन्द घंटों में अति आवश्यक है कि खालों को हिलाते रहा जाय। यह हाथ से या मशीन से करते हैं। यदि वे हिलाई न जायँ तो पुट्ठे एक-दूसरे से लग जाएँ और छूती हुई जगह पर घोल के असर

न होने से धब्बे पड़ जाएँ। शुरू में यह धब्बे सफ़ेद होते हैं, बाद में हिलने से घोल मिलने पर फिर यह सफ़ेद धब्बे और हिस्से की तरह के हो जाते हैं। पर इनके किनारे जहाँ ज़रा-सा टैनिन और बहुत-सा चूना होता है, अमूमन आक्सीजन ले सदा के लिये काले नकशे से हो जाते हैं। हिलाने से पकने में समय भी कम लगता है और घोल मे की टैनिन अच्छी तरह घुस जाती है।

सबसे पुराने घोलों को सिर्फ़ इस कारण ही नहीं काम में लाते कि उनकी टैनिन काम में आ जाय, बल्कि इस कारण से कि खाल पर उनका असर हल्का और बहुत कम सिकोड़नेवाला (Less astringent) होता है। इसी कारण चर्मकार ऐसे घोलों को नर्म घोल (Mellow Liquors—मैलालिकर्स) कहते हैं। दस-पंद्रह दिन ससपैन्डर में रखने के बाद, खालों को हैन्डलर्स (Handlers) में रखते हैं, हैन्डलर्स के हौदे छोटे होते हैं। उनमें खालें चूने में की तरह एक-दूसरे के ऊपर रक्खी जाती हैं। प्रतिदिन सबसे पुरानी घोल ससपैन्डर्स को भेज देते हैं, और उसकी जगह नई घोल बनाते हैं। इसमें भी दस-बारह हौदों का एक चक्कर होता है। ससपैन्डर्स से जो गठरी आती है वह सबसे पुराने घोल में जाती है, और सब आगे बढ़ा दी जाती हैं। सबसे पुरानी यानी पहली गठरी निकालकर लेअर (Layer) को भेजी जाती है, और उससे पहले की नये घोल में। हैन्डलर्स में हर गठरी को २०° बार्कोमीटर (Barko-meter) से ४०° बा० की घोल मिलती है। हर गठरी हैन्डलर्स में एक महीने से तीन महीने रहती है। घोल का बदलना और गठरियों को आगे बढ़ाना प्रतिदिन व दूसरे दिन होता है, पर चाहे उसी हौद में क्यों न रक्खी जायें; और चाहे सबसे पहली कई दिन बाद लेअर्स (Layers) में जाए वे निकाली रक्खी रोज़ जाती हैं। नया घोल या तो लेअर्स से या सत निकालनेवाले गुदाम (Leach house लीचों) से आता है

यदि उसकी शक्ति बढ़ानी हो, तो ठोस सत (Solid extract) उसमें घोल देते हैं।

कभी-कभी हैन्डलर्स और लेअर्स के बीच में दो-चार हौदे ऐसे रखते हैं जिनमें घोल के साथ सूखा पिसा हुआ पकानेवाला पदार्थ भी डालते हैं। इससे घोल और भारी हो जाता है, उसकी शक्ति बढ़ जाती है और हर चमड़ा एक-दूसरे से कुछ अलहदा हो जाता है। चमड़ा डालते समय हौदों को खूब हिला लेना चाहिये। इन हौदों को डस्टर्स (Dusters) कहते हैं। एक डस्टर में एक हफ़्ता के लगभग गठरी रहती है, हफ़्ता भर तक छूते नहीं, इस तरह से डस्टर्स में हर गठरी एक से डेढ़ महीने तक रहती है। भारत में कुली हौदों में घुसकर हाथों से उठाकर चमड़े बाहर लगा देते हैं; और फिर हाथ से उठाकर जिस हौदे में डालने हों उसमें डालते हैं। और जगह रस्सी आदि से बाँधकर निकालते रखते हैं।

डस्टर्स के बाद चमड़े लेअर्स में जाते हैं। ये बड़े-बड़े हौदे होते हैं। एक में कई गठरी रक्खी जाती हैं। एक आदमी चमड़ों को फैलाकर डालता जाता है, दूसरा उसपर पिसा पदार्थ छाल बकला आदि छिड़कता जाता है। इस प्रकार खालें एक-दूसरे से खूब अलग हो जाती हैं। जब हौदे में ऊपर तक चमड़े भर जाते हैं, तब लीच से उसमें बहुत शक्तिवाला भारी घोल भर देते हैं। घोल की शक्ति (Strength) बढ़ाने के लिये सतों (Extracts) का भी प्रयोग करते हैं। एक लेअर (Layer) में एक हफ़्ते से एक महीने तक चमड़े पड़े रहते हैं। इतने दिन उनको छूते नहीं। आवश्यकतानुसार तीन-चार दफ़े लेअर में रखते हैं। जब वे चमड़े और अधिक पदार्थ नहीं ले सकते, उनको निकालकर तैयारी के लिये (Finishing) भेजते हैं।

साधारणतया चाहे कैसा भी चमड़ा बनाना हो खालों को वनस्पतियों से पकाने में यही बातें होती हैं। अब यह देखना है कि किन-किन

दशाओं में कैसा-कैसा चमड़ा बनता है तथा इस विधि से क्या-क्या भेद करने होते हैं।

तले का चमड़ा बनाने के लिये चमड़ा ठोस खूब भरा हुआ साफ़ रंगत का होना चाहिये। जिस समय खालें धुलकर ससपैन्डस में जाती हैं, उनमें थोड़ा-बहुत चूना होता है। कुछ गिरी भले ही हों अम्ल की फूलन उनमें नहीं होती। तले के बनाने में कितने हो वनस्पति पदार्थ प्रयोग होते हैं: योरोप में ओक की छाल पुराने जमाने से प्रयोग होती है। इससे बहुत अच्छा चामड़ा बनता है; पर यह महँगी पड़ती है; इसमें टैनिन कम होती है और चमड़ा हल्का बनता है। तले का चमड़ा तोल से विकता है। जितना भारी चमड़ा बने उतना अच्छा। इसलिये वेलोनिया (Valonia) बहुत प्रयोग करते हैं: इससे ठोस और भारी चमड़ा बनता है, क्योंकि यह बहुत ब्लूम (Bloom) जमा देती है। अब प्रायः इसके भी बदले ओक की लकड़ी का, चेस्टनट का माइमोसा का, और कुबरैचो का सत काम में लाते हैं, जिससे पीसने और लकड़ी से सत निकालने के दाम बचते हैं। लेअर्स में घोल की शक्ति बढ़ाने को भी यह बहुत प्रयोग होते हैं। इस प्रकार काम करने से पैसे ही नहीं बचते समय भी बचता है, और तोल और पुख़तगी बढ़ती है। जहाँ सत प्रयोग होते हैं, लेअर के घोलों (Layer Liquors) का गुरुत्व १२०-१५० बा० (Bk. Barkometer) पहुँच जाता है। खाली ओक की छाल से ३०°-३५° बा० भी मुशकिल से होता है, और यह भी तब जबकि उसमें बहुत से नानटैनिन (Nontannin) बढ़ जाते हैं। अच्छे चर्म्मकारों की राय है कि वैसे चाहे कम शक्ति की घोल हो पर रावर बदलते रहने से अच्छा नतीजा होता है। इन वनस्पति पदार्थों के साथ इनमें शक्कर (Sugar) के अंश भी होते हैं; कुछ अम्ल तत्त्व भी होते हैं। लीच में, लेअर में, और हैन्डलर में रहते घोल को

बहुत समय हो जाता है। इतने समय में इन शक्करों से खमीर उठता है जिससे अम्ल बन जाते हैं। लोच में ही ज्यों-ज्यों शक्कर आती है, खमीर उठने लगता है। लेअर्स में भी पड़े रहते यही हालत होती है, हवाओं (Gases) के बुलबुले सतह पर निकलते हुए दिखाई देते हैं। सत बनानेवाले (Extract Manufacturers) इस खमीर के उठने को रोकने के लिये कीटाणु रोकनेवाले पदार्थ (Antiseptics) प्रयोग करते हैं, क्योंकि गर्मी में बड़ी जल्दी बहुत खमीर उठता है। यह हानिकारक है। ये अम्ल लैक्टिक और एसेटिक एसिड (Lactic and Acetic acids) हैं। अतः जो घोल नई खालों को ससपैन्डर्स में मिलते हैं उनमें यही अम्ल होते हैं। इन अम्लों के होने पर ही अच्छे चमड़े का बनना निर्भर है। एक तो वे चूने को शिथिलकर निकाल देते हैं; दूसरे वे पुट्ठों को कुछ अम्ल की हालत में कर देते हैं, जोकि पकने के लिये आवश्यक है। ऐसे घोल में खाल फूली ठोस हो जाती है, और टैनिन धीरे-धीरे अन्दर जाकर रेशों को पका (टैन कर) देती है।

खालों के घोल में आने पर जो पहिला काम होता है, वह चूने का शिथिल होना है। साथ-ही-साथ चूने के कारण जो ठोसपन है वह जाता रहता है; और खालें नर्म या स्पंज की सी हो जाती हैं। यदि अम्ल आवश्यकतानुसार हैं तो चूना ही शिथिल नहीं हो जाता, पर खाल के बिना गिरे और पतली हुए यह नर्मी और स्पंज की हालत आजाती है। टैनिन के चुसने के लिये यह ठीक हालत है। जैसे-जैसे पकावट बढ़ती है, टैनिन और अम्ल दोनों ही खाल के अन्दर बढ़ते हैं। टैनिन सिकोड़ती है और अम्ल फुलाने की कोशिश करता है। ऐसे घोलों के होते हुए शुरू में कुछ चूने का खाल के अन्दर रहना ही अच्छा है, क्योंकि यह शुरू के पकने के समय खाल को ठोस बनाए रखता है, जिससे टैनिन जल्दी अन्दर जाती

है ; और झुर्रीदार दाना (Drawn-grain) होने का डर कम हो जाता है। टैनिन हल्की सी खारी (Alkaline) अवस्था में अम्ल की अवस्था की अपेक्षा अधिक शीघ्र घुसती है, गो जब तक अम्ल की अवस्था नहीं हो जाती पकावट नहीं होती।

परन्तु यदि इन ससपैन्डर्स के घोलों में काफ़ी अम्ल नहीं होता जैसा कि आज कल सतों के प्रयोग से होता है, चूना टैनिन से सम्मेलन (Compound) बनाता है। इससे पुट्ठे या तो फ़ौरन काले हो जाते हैं या जब सूखने को डाले जाते हैं तो आक्सीजन लेकर काले हो जाते हैं और खाल (Pelt) चपटी (Flat) गिरी हुई (Fallen) कम फूली रह जाती है। इसीलिये सतह का चूना निकालकर पकने भेजते हैं। कभी-कभी इन झंझटों से बचने के लिये इन घोलों में ऊपर से अम्ल (एसिड) देते हैं। इस काम के लिये लैक्टिक और एसेटिक एसिड बहुत अच्छे हैं। इन घोलों में कुछ ऐसे भी अम्ल होते हैं जो फुला तो नहीं सकते परंतु चूने को घोल सकते हैं। इन अम्लों से जितना चूना घुल सकता है यदि उससे भी अधिक चूना हो, तो खालों को हवा और रोशनी न लगने देना चाहिए क्योंकि रंगत तुरंत काली नहीं पड़ती है। आगे के घोलों में यह टैनिन से मिला चूना भी निकल जाता है, और खालें स्वच्छ रंगत की हो जाती हैं। अम्लों से चूना दूर करने की विधि से पहले, इसी आधार पर कि शुरू में हवा से बचाए रखने पर आगे चलकर रंगत साफ़ हो जाएगी काम होता था।

ससपैन्डर्स में जब खालें नर्म और घोल से फूली भरी हों, उनको दबाना नहीं चाहिए। इस समय दबाने से वे फिर फूलकर पहली दशा में नहीं आ सकतीं। इस समय जो दबाव के निशान या खिंचा हुआ दाना (Drawn grain) पड़ जाता है, वह फिर सदा के लिये

बन जाता है। खिचा हुआ दाना हो जाने का मामूली सबब यह है कि जब खाल गिरी फैली दशा में हो, दाना पक जाए और फिर फूलने या पकने से खाल अन्दर से सिकुड़े। चपटी वे फूली दशा में खालें पतली होती हैं, रेशे भी पतले और ढीले होते हैं, और खाल का क्षेत्रफल अधिक होता है। ऐसी दशा में दाना पक जाने के बाद जब अन्दर का भाग सिकुड़ता है (चाहे अम्लों से फूलने के कारण या अंदर के रेशों पर टैनिन के असर से) तो दाने पर झुर्री पड़ जाती हैं। खालों के मुड़े-तुड़े पड़े रहने पर दाने के पक जाने से जहाँ दाना बाहर होगा, खोलने पर वहाँ ही झुर्री (Wrinkles) पड़ जाएँगी।

गैम्बोअर प्रयोग करते समय सतह का सब चूना निकाल देना चाहिए, क्योंकि इसके टैनिन से जो चूने का सम्मेलन (Compound) बनता है वह फिर आसानी से दूर नहीं होता। यदि ससपैन्डर्स के लिये बिल्कुल नए घोल बनाने हों, तो कम सिकोड़नेवाले गैम्बीअर और हड़ (मिरैब Myrab) इस काम के लिये बहुत अच्छे हैं। अब अक्सर नैराडोल (Naradol) आदि बनाए हुए टैनिन्स (आर्टीफ़िशेल Artificial Tannins) प्रयोग किए जा रहे हैं। इनसे रंगत बहुत हल्की आती है। इन टैनिन्स में अम्ल भी होते हैं। चमड़े की तैयार होने पर ज्यादातर वही रंगत होती है जो ससपैन्डर्स में पड़ जाती है। इसलिये हल्की साफ़ रंगत के चमड़े तैयार करने हों, तो शुरू में ध्यान रखना चाहिए।

पहले कह चुके हैं कि इन पुराने घोलों को चर्म्मकार नर्म (Mellow मेलो) घोल (Liquors लिकर्स) कहते हैं। बात यह है कि शुरू में इनसे पकाने से दाना खुरदरा या खिचा हुआ नहीं होता। उन्हीं पदार्थों से बनाई हुई उतनी ही हल्की घोल क्यों न हो, यदि नई हो तो खालें उसमें पड़ने पर अवश्य ख़राब हो जाएँगी। इस नर्मी के कई

कारण हैं। एक ही वनस्पति पदार्थ में जो टैनिन हैं वे एक चीज़ नहीं बल्कि मिश्रण (Mixture) हैं। और जब कि कई वनस्पति पदार्थ मिलाकर प्रयोग किए जाएँ, तो उसमें फिर बहुत सी ऐसी चीज़ें आ जाती हैं जिनका कि खाल के रेशों के लिए आकर्षण भिन्न-भिन्न है। जब खालें ऐसे घोल में आती हैं, तब पहिले तो वह चीज़ें खालों में जाती हैं, जिनके लिए खालों में आकर्षण अधिक है; कम आकर्षणवाली बाद में। होते-होते घोल में वह टैनिन रह जाती हैं जिनके लिए आकर्षण बहुत कम है: अर्थात् उन पुराने घोलों की सिकोड़ने की शक्ति बहुत कम है। दूसरा कारण: इस्तेमाल किए हुए घोलों में चूने और पोटाश के चेतन अम्लों (Organic acids) के लवण (Salts) धीरे-धीरे बहुत से इकट्ठे हो जाते हैं। ये अपने अम्लों की फुलाने की शक्ति कम कर देते हैं; इसीसे पकना रुक-सा जाता है। पकने के लिए आम्लिक (Acidic) अवस्था की ज़रूरत है। कुछ लवणों के जैसे सोडियम एसीटेट या सोडियम सल्फाइट के डाल देने से पकाने के घोलों का असर बहुत हल्का हो जाता है, यहाँ तक कि बन्द भी हो सकता है। तेज़ी से पकानेवाली चीज़ों की सिकोड़ने की शक्ति (Astringency) इस प्रकार कम की जा सकती है। (३) टैनिन-वाले वनस्पति पदार्थों में टैनिन के साथ कुछ ऐसी चीज़ें भी होती हैं, जो टैनिन नहीं होती और जिनको नानटैन्स (Non-tans) कहते हैं। वे भी पकाने और सिकोड़ने के असर को हल्का कर देती हैं। कुबरैचो बहुत तेज़ और सिकोड़नेवाली टैनिन है। उसमें नानटैन्स औरों की अपेक्षा बहुत थोड़े हैं। यदि उसमें इतना गैलिक एसिड (Gallic acid) दे दिया जाए कि इसके नानटैन्स गैम्बीयर के नानटैन्स के बराबर हो जाएँ तो यह भी गैम्बीयर जैसी हल्के असरवाली हो जाती है।

ससपैन्डर्स में खालें थोड़े समय रहती हैं, घोल हल्के होते हैं, इसलिए घोल बहुत देने चाहिएँ। कच्ची खाल टैनिन और अम्ल के लिए बड़ी भूखी होती है। यदि ऐसे घोलों में जिनका सब माल चुस गया हो कुछ काल पड़ी रहने दी जाएँ तो सड़ने लगती हैं: फिर उनसे अच्छा चमड़ा नहीं बन सकता। अधिक सिकोड़नेवाले घोलों से भी खराब होने का भय है क्योंकि ये फूलन को रोकते हैं और सतह को कड़ा कर देते हैं। ऐसी सतह में से टैनिन आसानी से अन्दर नहीं जा सकती। इसलिए हल्के घोल इस्तेमाल करने चाहिए और जल्दी-जल्दी बदलने चाहिए। ससपैन्डर्स से निकलने पर खालों में ये घोल आर-पार पहुँच चुकने चाहिए। जैसा क्रोम से पकाने में बता चुके हैं, मोटी से मोटी जगह का टुकड़ा काटकर कटी सतह को देखने से इसका पता लग सकता है। कटी सतह में रंगत एक सी होनी चाहिए; बीच में सफ़ेद धारी न हो।

अब खालें इस दशा में पहुँच गई हैं कि पास-पास रहने से उन पर धब्बे पड़ने का डर नहीं है; अब वे बोझ से दबकर खराब न होंगी। इसलिए उनको हैन्डलर्स (Handlers) में लिटाकर डालते हैं। इससे जगह की भी बचत होती है। जब सतह एक बार पक गई, फिर उस पर भारी घोलों का बुरा असर नहीं होता। बिना घोलों की शक्ति बढ़ाए उनमें का टैनिन भी अंदर नहीं जा सकता। इसलिए प्रति दिन बढ़ती शक्तिवाले घोल देने चाहिए और जैसा ऊपर बता चुके हैं, दिए जाते हैं। जब तक रेशे बिना पके रहते हैं, वे आसानी से टैनिन ले लेते हैं; पर ज्यों-ज्यों रेशों (fibres) की दीवारें पककर मोटी होती जाती हैं, अंदर जाने के लिये और भी शक्तिवाले घोलों की जरूरत पड़ती है। अगर बाहर के घोल की शक्ति घट जाए और उसको बदला न जाए तो यह घोल अंदर न जाएँ। इसलिए घोलों को बदलते रहना ठीक है। अधिक टैनिनवाले घोल में अधिक अम्ल होने की भी जरूरत है, क्योंकि टैनिन

सिकोड़ता है। उसको फूली दशा में पकाने के लिये फुलाए रखने को वैसी ही शक्तिवाला अम्ल चाहिए। अम्ल से फूले हुए रेशे शिथिल (Neutral) अवस्था की अपेक्षा धीरे-धीरे टेनिन लेते हैं, पर ऐसी हालत में अधिक टैनिन लेते हैं। इस फूलन के कारण अधिक पुख्ता अधिक ठोस और कम लचलचा चमड़ा बनता है। तले के चमड़े में यही गुण चाहिए भी हैं। आप देख ही चुके हैं कि हैन्डलर्स में खालें किस प्रकार अधिक-अधिक शक्तिवाले घालों में फिरती हैं। यदि घोल ठीक हैं, तो हैन्डलर्स में से निकलने पर खालें पूरी तरह से पक चुकती हैं। काटी सतह की रंगत सारी मुटाई में एक सी होनी चाहिए, रेशे साफ़ दिखाई देने चाहिए। बीच में हल्की रंगत को धारी न होनी चाहिए। वनस्पतियों से पके चमड़े खौलते पानी में नहीं ठहर सकते, इसलिए इन पर बायलिंग टेस्ट (Boiling Test) नहीं करते हैं। इनकी जाँच काटकर देखने से हो जाती है। अब कमी सिर्फ़ वज़न और ठोसपन (Weight and Solidity) की है। इसलिए खालों को लेअर्स (Layers) में डालते हैं।

हैन्डलर्स में से निकलने पर खालें ऐसी दशा में हैं कि वे टेनिन जल्दी-जल्दी नहीं चूस सकतीं। इस कारण उनको एक-एक हौदे में हफ़्ते-हफ़्ते तक छोड़ देते हैं। चार हौदों का एक चक्कर रखते हैं। इनमें सूखा पदार्थ भी देते हैं। इनको डस्टर्स (Dusters) कहते हैं। डस्टर्स में दे देने से एक दम महीने का गोता नहीं लगता। धीरे-धीरे उनको लगातार महीना भर पड़ा रखने के लिये तैयार कर लेते हैं। क्योंकि अब बहुत तेज़ तथा वज़न और ठोसपन देनेवाले घोलों की ज़रूरत है, इसलिये घोलों के साथ सूखा पदार्थ या सत (Extracts) देते हैं। कुछ पकानेवाले वनस्पति पदार्थ ऐसे हैं कि जिनका असर सूखी दशा में और तथा घोल में और होता है। वैलोनिया

(Valonia), ओकवुड (Oak wood), हड़ा (मायरोबलान्स Myrobalans) और चेस्टनट के सत (Chestnut extract) में गैलोटैनिक एसिड या इलाजी टैनिक एसिड होता है। घोलरूप में और गर्म करने से इन पदार्थों की शक्ति घट जाती है, क्योंकि इलाजी टैनिक एसिड टूटकर इलाजिक एसिड के रूप में तलछट हो जाता है। इसी इलाजिक एसिड के रेशों के बीच में जमने से चमड़े में वज़न और ठोसपन आता है। इन पदार्थों से यदि यह फ़ायदा उठाना है; तो यह ज़रूरी है कि इन चीज़ों को चमड़ों के साथ में रक्खा जाए जिससे इलाजिक एसिड हौदों की तली पर न जमकर चमड़ों के अंदर जमे। हैमलाक, कुबरैचो (Quebracho) और माइमोसा ब्लूम (bloom) तो नहीं देते; पर ये कठिनता से पानी में घुलनेवाले रेड्स (Reds) या फ्लोबाफ़ीन्स (Phlobaphenes) नामी पदार्थ देते हैं। यदि ये पदार्थ खाल के पास बनें तो थोड़ा-थोड़ा करके यह घुलें और चुस जाएँ तथा काम में आएँ। इन चीज़ों के सत (extracts) या घोल (liquors) प्रयोग करने में ये रेड्स (Reds) आदि सत निकले हुए पदार्थ (Spent tans स्पैन्ट टैन्स) के साथ चले जाते हैं—यानी बेकार जाते हैं। इसीलिये सतों की अपेक्षा सूखा पदार्थ डस्टर्स और लेअर्स में डालना अच्छा है।

जब खालों के अंदर धारी न रहे, रेशों के बीच में भरावट पूरी हो और रंगत अंदर एक सी हो तब खालों को निकालकर सुखाते हैं। इँगलैंड (England) में प्रायः उनको उजालते (bleach) हैं। पानी या हल्के घोलों में धोकर खालों को उजालनेवाले सतों (bleaching extracts ब्लीचिंग एक्सट्रैक्टस) के घोल में डालते हैं। यह अक्सर कुबरैचो (Quebracho) का सत होता है जिसमें बहुत-सा सोडियम बाइसल्फ़ाइट (Sodium Bisulphite) मिला होता है। इसके सल्फ्यू-

रस एसिड (Sulphurous acid) से रंगत ही साफ़ नहीं हो जाती, बल्कि वे रेड्स (Reds) जो चमड़े में जमे होते हैं और पानी में नहीं घुलते हैं इससे घुलकर निकल जाते हैं। इस कारण वजन कम हो जाता है, गो सतह की रंगत साफ़ हो जाती है। ये घोल गर्म और बहुत तेज होते हैं। चमड़ा सूराखदार (Porous) और पानी से असर हो जानेवाला हो जाता है। बनाए हुए टैनिन्स (Synthetic or artificial tannins सिन्थैटिक या आर्टीफिशेल टैनिन्स) भी इस काम के लिये इस्तेमाल होते हैं।

तैयार करने में पुट्ठों को पत्थर की मेज पर डालकर उनके दाने और गोश्त की सतह को पत्थर के स्लीकर और ब्रुश से रगड़-रगड़कर पानी से धोकर साफ़ करते हैं। इस तरह दाने पर का ब्लूम (bloom) धुल जाता है और रंगत साफ़ हो जाती है। इस काम को स्काउरिंग (Scouring) या मँजाई करना कहते हैं। मँजाई करके दाने पर हल्का-सा मछली का तेल (fish oil) लगाकर सुखाते हैं। बिना तेल के सुखाने से दाने पर के टैनिन हवा में से आक्सीजिन लेकर काले हो जाते हैं; सतह की रंगत काली हो जाती है। तेल लगे होने से अन्दर का पानी दाने की तरफ़ से भाप बनकर नहीं उड़ने पाता, यानी टैनिन का ऊपर सतह पर आना रुक जाता है; रंगत ख़राब नहीं होने पाती। गोश्त की तरफ़ से ही पानी भाप बनकर उड़ता है और चमड़ा सूख जाता है। पूरा सूखने से पहिले, जब चमड़े में थोड़ी-सी नमी रह जाती है, तब इनको ढेरी लगाकर रख देते हैं। अगर इतने में चमड़ा कहीं-कहीं से बिल्कुल सूख जाए, तो सूखे चकत्तों को भिगो देते हैं; और तब ढेरी लगाते हैं। ऐसा करने से पानी सारे में एक-सा हो जाता है। फिर स्ट्राइकिंग पिन (Striking pin) या पत्थर के स्लीकर से दाना रगड़ते हैं। इसे स्ट्राइकिंग आउट (Striking out) कहते हैं। इससे

मतलब यह है कि दाना चौड़ा और चिकना हो जाए। कभी-कभी तेज़ पिन से इस तरह रगड़ते हैं कि झूम जितनी चाहें निकाल देते हैं। थोड़ा और सुखाकर फिर रगड़ते हैं (Strike out)। इस तरह दाना साफ़ और ठीक कर दाने पर हल्के दबाव से बेलन फेरते हैं। जितना इस समय चमड़ा भीगा है, उससे अधिक भीगा न होना चाहिए। अगर चमड़ा ज्यादा गीला होता है, तो बेलन के दबाव से अन्दर से टैनिन बाहर निकल आती है। यह सतह पर सूख जाती है और इससे दाना चटखने लगता है। थोड़ा और सूखने के बाद और अधिक दबाव से बेलन फेरते हैं। यह बेलन फेरने का काम विल्सन डबल बेड बट रोलर (Wilson double bed butt roller) से लेते हैं। इसके बाद काफ़ी गर्मी से सुखाकर हाथ के या मशीन के ब्रुश से पालिश करते हैं।

तले के चमड़े पर बेलन लगाने के लिये कई प्रकार की मशीनें इस्तेमाल होती हैं। पुट्ठों पर बेलन लगाने के लिये हारीज़ान्टेल डबल बैड बट रोलर (Horizontal double bed butt roller) अक्सर काम में आती है। हारनेस आदि भारी चमड़ों पर पैन्डयूलम रोलर (Pendulum Roller) से बेलन लगाते हैं। इस मशीन में छत से एक लकड़ी लटकी होती है। जिसके नीचे के सिरे पर एक चिकना बेलन लगा होता है। बेलन के चौड़ान के बराबर चौड़ी तख्ती (बेड bed) होती है, जिस पर चमड़ा रखते हैं। मशीन से बेलन को चलताकर फ़ुटलीवर (Footlever) से तख्ते को ऊपर उठाने से चमड़े पर बेलन लग जाता है। आफ़ैल रोलर (Offal roller) से पेटी (bellies) और कन्धे (shoulders) पर बेलन लगाते हैं। यह मशीन E की शक्ल की-सी होती है। इसमें एक भारी बेलन के ऊपर छोटा-सा बेलन चलता है। दोनों बेलनों के बीच की दूरी चाहे जितनी लगाई जा सकती है।

अमरीका में तले का चमड़ा पकाने के लिये ऐसे पदार्थ लेते हैं, जो ब्लूम नहीं देते। ऐसे चमड़ों को वे न तो माँजते (Scouring) हैं न स्ट्राइक आउट करते हैं। हौदे में से निकाल हल्का-सा तेल लगाकर बिल्कुल सुखा लेते हैं। इस तरह करने से गाढ़े रंगत की घोल चमड़े के अंदर घुस जाती है और सतह की रंगत साफ़ निकल आती है। फिर भिगोकर ढेरी लगा देते हैं। ठीक भीग जाने पर पेन्ड्यूलम रोलर (Pendulum roller—बेलन) से काफ़ी दबाव पर बेलन फेर देते हैं। यह बेलन बड़ी तेज़ी से चलते हैं, इस कारण चमक (Polish-पालिश) भी आ जाती है और चमड़ा चिकना भी हो जाता है।

पश्चिमी इँगलैंड में वैलोनिया से पके बहुत ब्लूमवाले चमड़े को तैयार करने में ब्लूम न हटाकर ज़रा-सा तेल लगाकर टाँग देते हैं। कुछ सूखने पर उनको ढेरी लगा देते हैं, फिर साबुन और पानी से जिसमें ज़रा-सा तेल भी मिला हो, दाने को भिगोकर कुन्दपिन (blunt striking pin) या मशीन से इस तरह रगड़ते हैं कि ब्लूम अन्दर ही घुस जाती है। ज़रा-सा और सुखाकर फिर ऐसा ही करते हैं। अब पानी से धोकर बेलन लगा देते हैं। ऊपर से रंग फेर देते हैं, जिससे साफ़ पके के समान लगने लगती है। इसके लिये सफ़ेदी (whitening), रंग, म्यूसिलेज (mucilage) और अलसी का तेल (Linseed oil) लेते हैं। इनको खूब मिलाकर चमड़े पर अच्छी तरह रगड़ देते हैं। फिर कपड़े से चिकनाकर देते हैं। ब्रुश से पालिश कर फिर सुखाते और पालिश करते हैं। इस प्रकार तैयार किए अच्छे चमड़ों में और पहिले तरीक़े से तैयार किए चमड़ों में अन्तर मालूम करना कठिन हो जाता है। यह सस्ता भी पड़ता है।

चमड़े के सन्दूक़ों जैसे सूटकेस (Suit case), हैन्डबैग (Handbag), एटैचीकेस (attache case) का चमड़ा बैग-

लेदर (Bag leather), फोते (strap स्ट्रेप) का चमड़ा, मशीन की बेल्ट (belting leather) का चमड़ा, ज़ीनसाज़ (Harness and saddles) का चमड़ा, किताबों की जिल्द बाँधने का चमड़ा (बुक बाईंडिंग लेदर Book binding leather), कुएँ में से पानी निकालने (चरस या मशक) का चमड़ा तथा और ऐसे ही कितने कामों के चमड़े वनस्पति पदार्थों से पकाए जाते हैं। भारी चमड़ों के लिये गाय, बैल या भैंस की खाल और हल्के चमड़ों के लिये भेड़ बकरी की खालें इस्तेमाल होती हैं। हर प्रकार के चमड़ा बनाने में खालें पहिले ससपैन्डर्स फिर हैन्डलर्स और फिर लेअर्स में जाती हैं। पर जैसा चमड़ा बनाना हो वैसे ही इनके घोलों का गुरुत्व (Specific gravity) टेनिन, अम्ल और नानटैन्स (non-tans) की मात्रा बदलनी पड़ती है। साथ ही पकानेवाले पदार्थों का चुनाव भी ठीक करना होता है, इन पदार्थों के घोल बनाने और तैयारी (करीइंग Currying) में भी अंतर करना होता है।

चमड़े को नर्म बनाने के लिये खालों को बिल्कुल गिरी अवस्था में पकाते हैं। इसलिये उनका तमाम चूना चोकर में निकाल देते हैं। और भी नर्म करने के लिये बेटिंग और प्योरिंग करते हैं जिससे इलासटिन भी घुल जाती है। अब प्रायः विष्टा के बदले पैन्क्रियाल से यह काम लेते हैं।

इन चीजों के बनाने में ऐसे वनस्पति पदार्थ लेते हैं जो ब्लूम न दें क्योंकि यहाँ पर वजन और ठोसपन की जरूरत नहीं है। यदि ऐसे ही पदार्थ इस्तेमाल करने हों, तो इस तरह काम में लाते हैं कि चमड़े पर ब्लूम न आए जैसे सूखे पदार्थ के बजाए केवल घोल इस्तेमाल करना। दूसरी बात चमड़े की रंगत का भी ख़याल करना होता है। किसी-किसी कामों के लिये बस वही पदार्थ अच्छे हैं जो हल्की रंगत दें जिससे वे चमड़े

चाहे जिस रंगत के रँगे जा सकें। कहते हैं कि सुमैक से पकाया चमड़ा बहुत दिन चलता है। इसलिये कुछ चीजें सिर्फ़ इसी से पकाई जाती हैं। जिल्दबंदी का चमड़ा सुमैक से ही पकाते हैं। भारत की भेड़ और बकरी की खालें जो मदरास प्रांत में बनाई जाती हैं, तरवद की छाल से पकाई जाती हैं। पदार्थ का चुनना बहुत हद तक स्थान पर निर्भर है। जहाँ जो पदार्थ बहुतायत मे होता है; वहाँ कुछ भेद करके सब कामों के लिये वही प्रयोग होता है। आवश्यकतानुसार दूर देश के पदार्थ भी काम में आते हैं। करीइंग में कोई चमड़ा कितनी चर्बी ले सकता है, यह भी पकाने के पदार्थ पर बहुत कुछ निर्भर है।

हल्के चमड़ों को शुरू में ससपैन्डर्स की बजाय पैडिल में चलाते हैं। इससे समय बहुत थोड़ा लगता है, चंद घंटों में ही काम पूरा हो जाता है। परंतु इससे चमड़े पर धारियाँ पड़ जाती हैं, जिससे दाना बनावटी दाने का सा हो जाता है। इस दाने को पैबिल्ड ग्रेन (Pebbled Grain) कहते हैं। ये फिर करीइंग में कठिनता ही से निकलती हैं। जब बिल्कुल ही चिकना दाना चाहिए, लटका कर ही पकाते हैं। पैडिल की बजाय ढोल भी इस काम में आते हैं, दाना इनसे भी पैबिल्ड ग्रेन हो जाता है। पैडिल या ढोल में चलाने को कलरिंग (colouring) कहते हैं। कलरिंग के घोलों में हल्का-सा अम्ल होता है जो पकाने के लिये आवश्यक है। इस अम्ल (acid) से फुलावट होना तो दूर, सारा चूना भी शिथिल नहीं हो सकता। और अधिक नर्म चमड़ा बनाने के लिये नमक आदि दे देते हैं। इससे वज़न कम और पकावट खोखली (Empty tannage) होती है। कलरिंग का घोल हैन्डलर्स का सबसे पुराना और हल्का घोल होता है।

हैन्डलर्स में खालों को वैसे ही रखते हैं जैसे तले के लिये। इन हैन्डलर्स के घोल हल्की शक्ति के और बहुत नर्म (mellow मैलो)

होते हैं। सूखा पदार्थ जो ब्लूम देता है इस्तेमाल नहीं करते। हैन्डलर्स में ही चमड़े पूरे पक जाते हैं। भारी चमड़ों को लेअर्स में देते हैं। इनके लेअर्स में भी सूखा पदार्थ नहीं होता; सिर्फ भारी घोल होते हैं, जिसमें खालें दो-तीन हफ़्ते पड़ी रहती हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार के चमड़ों को पकाने का वर्णनः—

बेल्ट का चमड़ा (belting leather) पकानाः—

बेटिंग के बाद खालें ८°—३०° बार्कोमीटर के घोलवाले ससपैन्डर्स में डाली जाती हैं। इनमें अम्ल बहुत नहीं होता। फिर वे ३०°—४५° बा. (बार्कोमीटर Bk) वाले हैन्डलर्स में चार हफ़्ते रहती हैं। क्योंकि गैम्बीयर से पकाने पर अधिक चर्बी भरी जा सकती है वे ५०°—५५° बा. (Bk) वाले गैम्बीयर के घोल में १४-१८ दिन रक्खी जाती हैं। अब वे लेअर्स में डाली जाती हैं, जिनका घोल ५०°—८०° बा. (Bk) का होता है। पहिले लेअर में ४ हन्डरवेट (Cwt ५३ मन) हड्डा (myrab) देते हैं और उसमें खालें एक हफ़्ता रखते हैं; इसकी घोल ५०° बा· (Bk) होती है। इसी प्रकार दूसरे में ५५° बा· का घोल बनाकर खालें २ हफ़्ते रखते हैं। तीसरे में ६० ° बा· का घोल बनाकर चार हफ़्ते रखते हैं। जो खालें भारी हों उनको चौथे ७०° बा· वाले लेअर में रखते हैं। जो उनसे भी भारी हों उन्हें ८०° बा· वाले पाँचवें लेअर में रखते हैं।

हार्नेस का चमड़ा (Harness leather) पकानाः—

इसके लिये खालों को ८°—२०° बा· (Bk) वाले ससपैन्डर्स में तीन हफ़्ते रखते हैं। फिर २०°—३५° बा· वाले हैन्डलर्स में ६ हफ़्ते रखते हैं। इनमें से दो को डस्टर (duster) की तरह इस्तेमाल करते हैं; इनमें ½ हंडरवेट (२८ सेर) हड्डा और इतना ही बकला डाल देते हैं। तीन लेअर ३५°—५०° बा.वाले घोलों के रखते हैं। पहिले में एक हफ़्ता दूसरे में दो, और तीसरे में तीन हफ़्ता खालें रहती हैं।

भारी खालों के लिये ससपैन्डर्स में घोलों की शक्ति ८°—३०° बा· होती है। हैन्डलर्स में ३०°—४०° और डस्टर्स में ४०°—४५° बा· होती है। तीन-चार लेअर रखते हैं जिनमें ८—६ हफ्ते लग जाते हैं। इनमें घोल ५०°—६५° बा. तक का होता है।

हार्नेस का चमड़ा पकाने की दूसरी विधि :—लीच में ८ या १२ हौदों का एक चक्कर रखते हैं। हर हौदे में ४२ मन (३० हंडरवेट Cwt) हड्डा और ६१ मन (४५ हंडरवेट) बबूल की छाल डालते हैं। लीच से सत निकला घोल लेअर्स और हैन्डलर्स को जाता है; जब लेअर्स से हैन्डलर्स को घोल नहीं मिलता तब लीच से लेते हैं। भाप से गर्म नहीं करते।

ढोल में आखिरी हैन्डलर के घोल में चोकर लगी खालों को डालते हैं—कलरिंग (colouring)। फिर खालों को हैन्डलर में भेज देते हैं। ४-५ घंटे में कलरिंग हो जाता है। भैंस की खाल को हार्नेस बनाने में हैन्डलर्स में घोल २३°—३६° बा· तक के होते हैं। एक २ लेअर में ५०० खालें या ६००—७०० फाँकें रखते हैं। ६०° बा· का घोल ७ मन (५ हन्डरवेट) बबूल की छाल और २८ सेर (½ हंडरवेट) हड्डा (myrobalans or gallnuts) एक-एक लेअर में डालते हैं। एक महीने तक एक लेअर में रखते हैं। इतने दिन में घोल की शक्ति ४०° बा· रह जाती है।

गाय की खालों के लिये, जो अलग पकाई जाती हैं, हैन्डलर्स में २२°—३०° बा· का घोल देते हैं। हलकी खालें तीन महीने में निकल जाती हैं; इन्हें लेअर में नहीं देते। बीच की भारी (medium) खालों को ढाई-तीन महीने हैन्डलर में रख १½-१¾ महीने लेअर में रखते हैं। भारी खालों को तीन महीने हैन्डलर में और २½—३½ महीने लेअर में रखते हैं। लेअर में ४०°—४५° बा· का घोल देते हैं। बहुत थोड़ा-सा बकला भी दे देते हैं।

बेल्टिंग (Belting) का चमड़ा पकाने के लिये ६०—७० पा० की खूब भारी और सारे में यकसा मोटी भैंस की खालें लेते हैं। इनको चूने के बाद रातभर ½% बोरिक एसिड के घोल में रख ससपैन्डर्स में देते हैं। इसके पन्द्रह दिन बाद हैन्डलर्स में देते हैं। हैन्डलर्स में घोल ३२°—४७° बा० तक होता है। ५-६ महीने इसमें रख लेअर में देते हैं। इनके लेअर में भी ६०°—७०° बा० का घोल देते हैं और दो-तीन महीने रखते हैं। जब तक कटी सतह में धारी रहे, गहरी रंगत न हो, रेशे और उनके बीच की जगह भरी हुई मालूम न हो, खालों को लेअर में डाले रखते हैं।

हल्के चमड़ों का पकाना—Tanning of light leathers:—

इनको अक्सर १२° बा० (Bk) के घोल में पैडिल में चलाते हैं; २-५ घंटे पैडिल में चलाने के बाद उनको ८°—१८° बा० (Bk) के घोलवाले हैन्डलर्स में चलाते हैं। १५ दिन बाद उनको १८°—३८° बा० (Bk) के घोलवाले हैन्डलर्स में रखते हैं; चमड़े इनमें लगभग एक महीने के रहते हैं। इसके बाद वे ४०°—४३° बा० वाले डस्टर्स में ६ हफ्ते रहते हैं। इनके लिये सत बनाने के वास्ते लीच में आठ हौदों का चक्कर अच्छा रहता है। डस्टर्स और हैन्डलर्स में इस्तेमाल की हुई घोल वैसी ही शक्तिवाले लीच के हौदे में डालते हैं। यह घोल घूमती हुई शुद्ध होकर फिर डस्टर और हैन्डलर में प्रयोग हो जाती है।

जूते के लिये बछेला पकाने की विधिः—

इसके लिये ओक की छाल और गैम्बीयर प्रयोग करते हैं। खालें ८°—१६° बा० वाले हैन्डलर्स में पन्द्रह दिन रहती हैं। फिर १६°—२०° बा० वाले हैन्डलर्स में १६ दिन रहती हैं। भारी खालों को २२° बा० वाले लेअर में दो हफ्ते रखते हैं।

दूसरी विधि में खालों को ५० बा० वाले गैम्बीयर के घोल में पैडिल में चलाते हैं। इसमें ६० खालों पीछे एक पिन्ट एसेटिक एसिड देते

हैं। जब रंगत आर पार हो जाती है उनको रात भर घोड़ी पर छोड़ देते हैं। फिर ५ घंटे बाद १०° बा॰ के घोल में चलाकर २-३ घंटे घोड़ी पर छोड़ देते हैं। फिर वे १५° बा॰ के घोल में पैडिल में चलाकर घोड़ी पर लगा दी जाती हैं। फिर इसी प्रकार २०° बा॰ वाले घोल में चलाई जाती हैं। जब तक आर पार एकसी न हो जाएँ घोलों की शक्ति सतों से बढ़ाकर, वे बढ़ती शक्तिवाले घोलों में पैडिल में चलाई जाती हैं यहाँ तक कि वे ३५° बा॰ के घोल में रह लेती हैं।

बैग, सूटकेस आदि का चमड़ा पकाने की विधिः—

इनको पहिले १२° बा॰ वाले घाल में चलाते हैं। फिर ८°—२०° बा॰ वाले हैन्डलर्स में चलाते हैं। इस समय हल्की चीज़ों के बनाने के लिये उन्हें चीर लेते हैं। पर भारी चमड़ों के लिये बिना चीरे आगे बढ़ाते हैं। इस समय खालों के कुछ ठोस (plump) होने से चिराई भली प्रकार हो जाती है। अब उन्हें २०°—४०° बा॰ वाले हैन्डलर्स में महीना भर रखते हैं। बैग के लिये खालें इतने में पक जाती हैं। पर भारी चीज़ों और रास (Bridle) के लिये ४०° बा॰ के दो लेअर में और देते हैं। साथ में कुछ बकला भी देते हैं। चीरी हुई पट्टियों (Splits) को सस्ती चीज़ों से ढाल में पका देते हैं।

बकरी की खालों का पकानाः—

बढ़िया, नर्म और चिकने दानेवाला चमड़ा बनाने के लिये, इन खालों को अक्सर थैली बनाकर पकाते हैं। इस विधि से २४ घंटे के अन्दर खालें पक जाती हैं।

मामूली खालों को या मोटे दाने का चमड़ा बनाने के लिये पैडिल में पकाते हैं। सुमैक का घोल इस्तेमाल करते हैं। तीन पैडिल का एक चक्कर रखते हैं। बीस दर्जन खालों के लिये दो-तीन बोरे सुमैक

काफ़ी होता है। पैडिल के इन घोलों का ताप २७° श० रखते हैं। १५ दिन में खालें पक जाती हैं।

पुख़्ता चमड़ों के लिए ओक की छाल और सुमैक मिलाकर प्रयोग करते हैं। इनको पहिले पुराने नर्म (mellow) सुमैक के घोल में चलाते हैं जिससे रंगत अच्छी आ जाए। पैडिल में पकाने से खालें जल्दी पक जाती हैं।

मडाका (morrocco)—असली मड़ाका बकरी या सील की खाल से बनता है। भेड़ की खाल को भी मड़ाका की तरह पकाकर बेचते हैं। अच्छे मड़ाका को सुमैक से पकाते हैं, पर भारत में तरवद या बबूल से पकाते हैं—इन्हीं को पर्शियन (Persian) कहते हैं। यह पर्शियन जूते स्लीपर आदि के लिये बहुत अच्छी हैं; पर जिल्दबन्दी के योग्य नहीं। रोशनी और धुएँ से यह जल्द ख़राब हो जाती हैं। चूने में हड़ताल (आर्सेनिक सल्फाइड arsenic sulphide) देते हैं। प्योरिंग के बाद सुमैक के ताज़े गर्म घोल में पैडिल में पकाते हैं।

सील (Seal) की खालों का पकाना: यह भी मड़ाका की तरह पकाई जाती हैं। इनका दाना ख़ास होता है।

जिल्दबन्दी के लिए छोटी खालें लेते हैं और इनको सुमैक से पकाते हैं। फ़ैन्सी कामों के लिए भारी खालें लेकर सुमैक और ओक की छाल से पकाते हैं। तीन दिन तक नर्म सुमैक के घोल में पैडिल में चलाते हैं जिससे रंगत आर पार पहुँच जाती है। अब इनको चीरकर, दाने की पट्टी को ८°—२४° बा० वाले हैन्डलर्स में तीन हफ़्ते रखते हैं। दस दिन तक रोज़ हिलाते हैं; फिर दूसरे दिन। इसके बाद दो दिन ताज़े सुमैक के घोल में चलाते हैं जिससे रंगत साफ़ आए। गोश्त की पट्टियों (flesh splits) को सतों से ढोल में पकाते हैं और वार्निश का मसाला लगाकर तैयार करते हैं।

एक विधि में खालों को गैम्बीयर और ओक की लकड़ी के सत में पकाते हैं। खालें पहिले १०°—१५° बा० वाले गैम्बीयर से बने हैन्डलर्स में जाती हैं। जब वे इसमें आर पार पक जाती है, तब १५°—२०° बा० वाले हैन्डलर्स में जाती हैः इन घोलों में ओक की लकड़ी का सत और कुछ गैम्बीयर दिया जाता है। अन्त में ताज़े सुमैक के घोल में चलाते हैं।

जूतों के लिए और वार्निश का (enamelled) चमड़ा बनाने के लिए भारी खालें काम में आती हैं। इनको पकाने में हफ़्तों लगते हैं।

जिल्दबन्दी के लिए बछेलों को थैली बनाकर (Bag tannage) सुमैक से पकाते हैं। दो बराबर की खालों को सीकर थैली बनाते हैं। दो-तीन दिन थैलो रूप में और फिर होदों में पकाई जाती हैं। सात-आठ दिन में पक जाती हैं। कितने ही चर्म्मकार इन खालों को पैडिल में पकाते हैं। उसकी विधि ऊपर दी ही है। फ़ैन्सी (fancy) कामों के लिए पहिले सुमैक से पकाते हैं, और फिर पैडिल में ओक की छाल, हड्डा आदि के सतों से पकाते हैं। हल्के कामों के लिए पहिले सुमैक के घोल में चलाते हैं और फिर १० दिन हैन्डलर्स में चलाते हैं। फिर सुमैक के ताज़े-हल्के घोल में से निकालकर तैयार करते हैं।

भेड़ी की खालों (Sheep skins) का पकानाः—

बेजिल्स (Basils) के लिए ये कई प्रकार से पकाई जाती हैं। स्काटलैन्ड में बेजिल्स पहिले ८° बा० वाले लार्च के सत के घोल में पैडिल में चलाई जाती हैं। घोल की शक्ति धीरे २ बढ़ाई जाती है, यहाँ तक कि दो दिन में मसाला आर पार पहुँच जाता है। फिर घोड़ी पर लगा देते हैं। निचुड़ने के बाद हाइड्रालिक प्रेस (Hydraulic Press) में दबाकर चर्बी निकाल देते हैं। फिर भिगोकर छाल के भारी घोलों (११°—२०° बा० Bk) में पकाते हैं। शुरू के घोलों में काफ़ी अम्ल होता है।

पश्चिमी इँगलैंड में ये खालें हौदों में शुरू में सुमैक के घोल में और फिर ओक की छाल से पकाई जाती हैं। अब अधिकतर पैडिल में ही पूरा पकाते हैं; थोड़ा पकने के बाद प्रेस से चर्बी निकाल देते हैं। एक हफ़्ते में पूरी पक जाती हैं।

अमरीका में दो तिहाई कुबरैचा और एक तिहाई हैमलाक मिलाकर पकाते हैं। कोई २ अकेले हैमलाक से भी पकाते हैं।

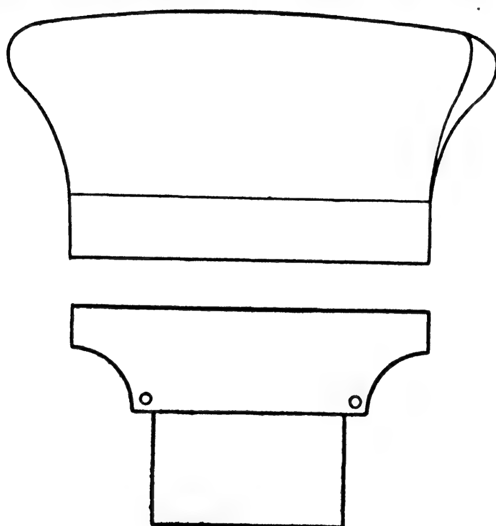
स्काइवर्स के लिए खालों को सुमैक से पकाते हैं। पहिले पुराने घोल में फिर ताज़े घोल में डालते हैं। ज्यों २ पकावट होती है घोलों को गर्म भी करते हैं।

रोन्स (Roans)—ये भेड़ की खालें होती हैं, जिनको चोकर के बाद दाना अन्दर कर सी डालते हैं। फिर उलटकर खुली जगह से सुमैक का घोल और कुछ पत्ती भर मुँह बन्द कर देते हैं। इस बन्द भरे थैले को सुमैक के गर्म घोल में डाल देते हैं। चन्द घंटों बाद निकालकर एक-दूसरे के ऊपर ढेरी में लगा देते हैं। दबाव पड़ने से घोल खाल में घुसता है। ज्यों ही ज़रा खाली होती हैं, फिर भरकर इसी प्रकार करते हैं। जब तक पक नहीं जातीं, ऐसे ही दोहराते हैं। एक-दो दिन में तैयार हो जाती हैं।

रोलर का चमड़ा (Roller leather)। इसके लिये दाना बिल्कुल चिकना होना चाहिए। ओक की छाल के हल्के घोलों में देर तक पकाते हैं। अब छाल के बदले सत प्रयोग करते हैं। पहिले पैडिल में कलर (colouring) करते हैं; तीन बढ़ती मात्रा के घोल काफ़ी होते हैं। फिर प्रेस में दबाकर चर्बी निकाल देते हैं। चर्बी निकालकर पैडिल में गर्म पानी में चलाकर नर्म करते है। जब बुरादा निकल जाता है, काफ़ी गर्म पानी में ढोल में चलाते हैं, जिससे तमाम धारिएँ निकल जाएँ। फिर ८-१० हल्के घोलों में घुमाकर २० दिन में पकाते हैं।

करीइंग (Currying)

वनस्पति पदार्थ से पके चमड़े पकने के बाद अकसर सुखा लिये जाते हैं। ये चाहे जब तैयार (finish) किए जा सकते हैं; पकने के तुरन्त बाद या सुखाकर रखके कभी भी तैयार हो सकते हैं: कोई ख़राबी नहीं होती। क्रोम से पके हुओं के बारे में पहिले बता चुके हैं कि तैयार होने से पहिले यदि वे सूख जाएँ तो उनसे अच्छा चमड़ा नहीं तैयार हो



चि० १६ स्लीकर्स (Slickers)

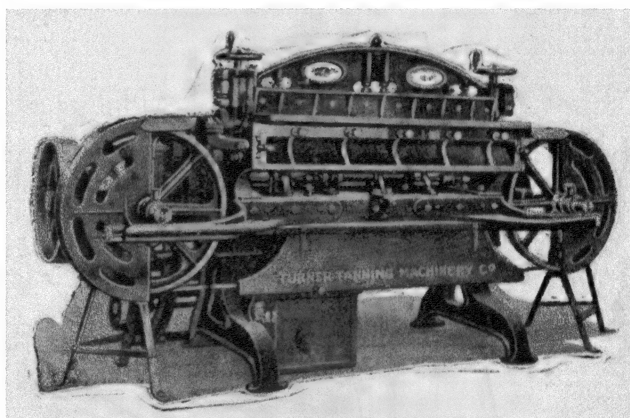
सकता; इनमें ऐसी बात नहीं है। इनको तैयारी में पहिला काम मँजाई (Scouring स्काउरिंग) है। इसके लिये पत्थर की मेज़ और स्लीकर चाहिए। ८ फ़ुट लम्बी, २½–३ फ़ुट चौड़ी, २ इंच मोटी पत्थर की शिला ज़मीन से तीन फ़ुट ऊपर ईंटों की चौतड़ी पर रक्खी जाती है। कारीगर लम्बे किनारे पर जो कमर के बराबर ऊँचा रक्खा जाता है, खड़ा होता

है। यह पत्थर की शिला उसके आगे नीचे की तरफ़ को ढलवाँ रहती है। ६ इंच का ढाल काफ़ी होता है। इस शिला को ऊपर की सतह गड्ढे-रहित चिकनी होनी चाहिए। स्लीकर्स (Slickers चित्र १६) लकड़ी के हैन्डिल में पड़े हुए लोहे, पीतल, पत्थर, और काँच के टुकड़े होते हैं। ये टुकड़े ६ इंच लम्बे, ३ इंच चौड़े, और ½ इंच मोटे होते हैं। पत्थर के स्लीकर का पत्थर और काँच (Glass) के का काँच चौथाई इंच मोटे होते हैं। सादे लोहे के स्लीकर पर छिलाई की छुरी की-सी मुड़ी हुई धार रख लेते हैं। ऐसे स्लीकर को बफ़िंग (Buffing) स्लीकर कहते हैं। यह चमड़े के दाने को छीलने के काम आता है। स्काउरिंग— मँजाई-मशीनों से भी की जाती है। मशीनों में ब्रुश लगे होते हैं, जो अपनी कीरी पर घूमते हैं। चमड़े को इनमें देने से चमड़ा इन ब्रुशों से खूब रगड़ा जाता है। ऊपर से पानी की धार का इन्तज़ाम होता है, जिससे सब मैल धुल जाता है।

हाथ की मँजाई में चमड़ों को पत्थर की मेज़ (Stone table) पर बिछाकर पत्थर और लोहे के स्लीकर से रगड़ २ कर खूब धोते हैं और पानी से साफ़ कर देते हैं। इससे जो कुछ ब्लूम या घुल जानेवाला पदार्थ होता है वह निकल जाता है और दाने की सतह बिल्कुल साफ़ हो जाती है। गोश्त और दाने दोनों की सतह पर मँजाई होती है। इससे चमड़े की सतह फैलकर चोरस हो जाती है। रंगत और भी साफ़ करने तथा मँजाई में दाने की जो टैनिन निकल गई हो उसको पूरा करने के लिये सुमैक के सत के साथ ढाल में चलाते हैं। इसे सुमैकिंग (Sumaching) कहते हैं। इसके बाद एक बार और स्लीकर से मँजाई कर देते हैं।

इसके बाद दाने पर थोड़ा-सा मछली का तेल (Fish Oil) लगाकर सूखने के लिये डालते हैं। थोड़ी सी नमी रहते चमड़ों को उठा लेते हैं। अधिक सूखी जगह को पानी से भिगो लेते हैं, और फिर इनको चिराई

की मशीन (Splitting Machine स्पिलिटिंग मशीन) से चीरते हैं। चिराई के बाद या बिना चीरे, जैसी ज़रूरत हो, गोश्त की सतह की छिलाई करते हैं। छिलाई (Shaving शेविंग) हाथ से या मशीन से करते हैं। इन चमड़ों की छिलाई हाथ से आसानी से हो जाती है। पहिले चीर लेने से गोश्त की तरफ़ की जो पट्टी निकलती है, वह भी काम में आ सकती है। बिना चीरे छीलने से यह पट्टी टुकड़े-टुकड़े होकर ख़राब जाती है। इसलिए अगर यह पट्टी काम के योग्य मोटी निकल सके, तो छीलने

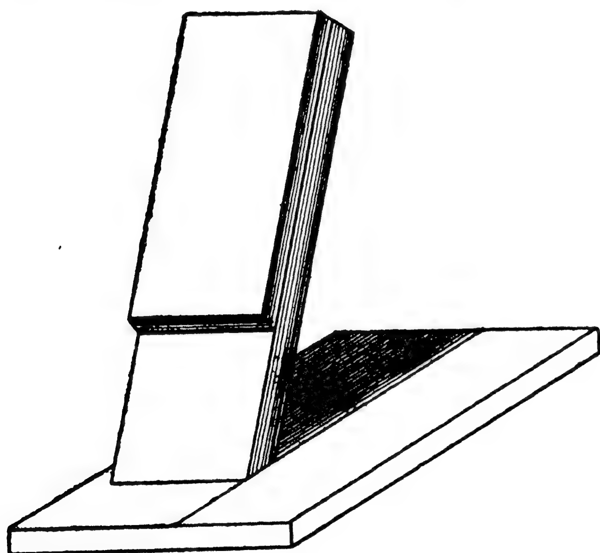


चि० २० चिराई की मशीन (स्पिलिटिंग मशीन)

से पहिले खालों को चीरना लाभदायक है। चीरने की मशीनें कई प्रकार की हैं। पर इनमें बैन्डनाइफ़ स्पिलिटिंग मशीन (चि० २०) ही ज़्यादातर इस्तेमाल होती है। इसमें दो इंच चौड़ी लोहे की पट्टी का घेरा (Band बैन्ड) होता है। यही छुरी है जो चीरती है। यह दो पुलियों पर तनी हुई घूमती है। इसको तेज़ करने के लिये पुलियों के पास एमरी (Emery) के पहिये होते हैं। ऊपर की तरफ़ यह छुरी दो बेलनों के बीच में होकर निकलती है, जिन्हें गाइड्स (Guides) कहते हैं।

इन्हीं बेलनों के बीच में से चमड़े को देते हैं। छुरी से टकराने पर चमड़ा दो तहों में कट जाता है। चमड़े की पट्टियाँ कागज की मोटाई के बराबर मोटी चीरो जा सकती हैं। इस मशीन को जमाना (fitting) बड़ी होशियारी का काम है। मशीन पर चीरने से चिरी सतह पर कुछ धारियें सी पड़ जाती हैं; इनको हाथ की छुरी या छिलाई की मशीन से बराबर कर देते हैं।

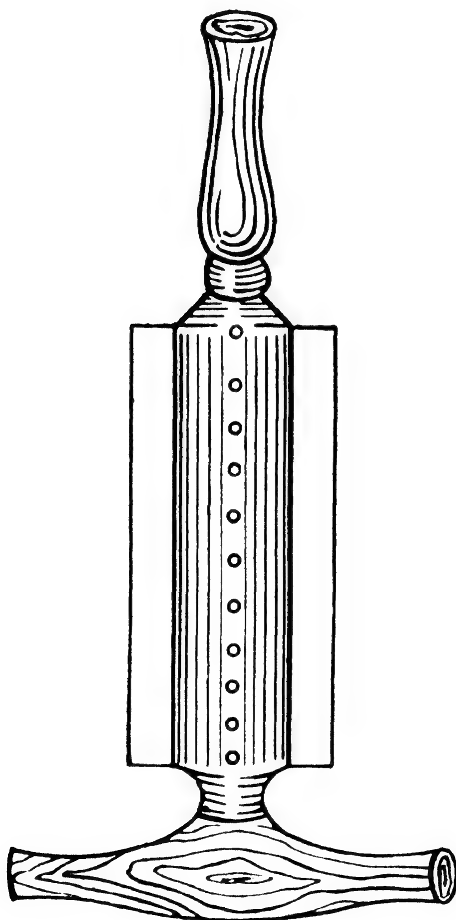
हाथ से छीलने (Hand-shaving) में चमड़े को एक बीम



चि० २१ पक्की छिलाई का बीम

(Beam चि० २१) पर डालकर छुरी से छीलते हैं। यह बीम एक चौकी पर ४५° का कोण (Angle) बनाए खड़ा ६ इंच चौड़ा लकड़ी का एक तख़्ता होता है। इसके ऊपर एक और पैड सा होता है।

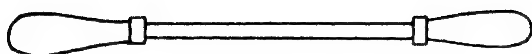
यह एक सख़्त लकड़ी (Lignumvitae) का होता है। हाथ की छिलाई की छुरी (चित्र २२) की बनावट ज़रा अजीब सी होती है। इसमें भारी



चि० २२ पक्की छिलाई की छुरी

चौखुंटा दोधारा फला होता है। यह १० इंच लंबा और ६ इंच चौड़ा होता है। बीचम-बीच में लंबाई में लोहे की छड़ लगी होती है जोकि इन फलों को दाबे रहती है, और जिसके सिरे पर लकड़ी के मूठ होते हैं। एक मूठ


सुई



चि० २३–२४ करीयर्स स्टील

तो छड़ी में लंबी और दूसरी समकोण बनाए हुए लगी रहती है। इस छुरी को काम में लाने के लिये दोनों किनारों पर दोनों किनारों को घिस-कर धार निकालते हैं। यह घिसने का पत्थर ३ फ़ीट ऊँचा, ६ इंच लंबा, ६ इंच चौड़ा रेतीले पत्थर का होता है। इस पर तेज़ करने के बाद सिल्ली के पत्थर (Water of Ayr stone वाटर आफ़ एयर स्टोन) पर तेज़ करते है। फिर सीधे बेंटे (Handle) को घुटनों में दबाकर, आड़े बेंटे के एक सिरे को जमीन पर टेककर धार को फले के एक तरफ़ समकोण बनाता भुकाते हैं। इस भुकाने के लिये लोहे की चिकनी छड़ी जिसमें दोनों तरफ़ बेंटा लगा होता है और जिसे करीयर्स स्टील (Currier's Steel चि० २४) कहते हैं काम में लाते हैं। दोनों हाथों से मूठों को पकड़ ज़ोर से दबाकर धार उलटते हैं। एक किनारे की धार उलटने के बाद, दूसरे किनारे की धार उलटते हैं, पर यह पहली धार के दूसरी तरफ़ होती है। इस तरह होने से छुरी के दोनों किनारों से छिलाई कर सकते हैं। ऐसी मुड़ी धार चमड़े पर से पतले-पतले छिल्के से उतार देती है। इस धार को तेज़ रखने के लिये कारीगर मूठ में चढ़ी हुई लोहे की सुई (चि० २३)

से काम लेते हैं। इस सुई को पहिले धार के सहारे लम्बाई में फेरते हैं; और फिर नोक को एक सिरे से दूसरे सिरे तक मुड़ी धार और फले के बीच में फेर जाते हैं। इस तरह करने से छुरी की धार तेज़ रहती है और जो टुकड़ा उस जगह घुस गया हो निकल जाता है।

छिलाई की मशीन क्रोम से पके चमड़े की छिलाई की मशीन की सी होती है। इसका बेलन (Roller) उसके बेलन की अपेक्षा मोटा होता है।

इसके बाद चर्बी (Tallow) देने का काम शुरू होता है। इसे स्टफ़िंग (Stuffing) कहते हैं। चर्बी देने की कई विधियें हैं:—(१) हाथ से चर्बी देना (Hand-Stuffing हैन्ड स्टफ़िंग)। (२) ढोल से भरना (Drum-Stuffing ड्रम स्टफ़िंग)। (३) गर्म हवा से चर्बी भरना हाट एअर स्टफ़िंग (Hot Air Stuffing)। (४) बर्निंग इन (Burning in)।

हाथ से चर्बी भरने में डब्बिन को ब्रुश से पत्थर की मेज़ पर इतनी दूर जितनी बड़ी खाल है रगड़ देते हैं, और मोटाई सारे में एकसी कर देते हैं। दाना ऊपर रखते हुए गोश्त की सतह के बल चमड़े को इस पर डालते हैं, और पत्थर के स्लोकर से फैलाते हैं। डब्बिन के कारण चमड़ा मेज़ से चिपका रहता है और जिधर खिंच जाए वहीं ठहर जाता है। ऐसी हालत में स्लोकर से दाबकर फैलाने से धारी आदि निकल जाती हैं, चमड़ा चौरस हो जाता है और दाना बैठ जाता है। इस काम को सेटिंग (Setting) या बिठालना कहते हैं। जब दाना भली प्रकार इस तरह ठीक हो जाता है, दाने पर ब्रुश से डब्बिन की हल्की तह देकर, बाँह से इकसार कर देते हैं। अब सूखने को टाँग देते हैं।

डब्बिन (Dubbin) में चर्बी और मछली का तेल होता है। चर्बी

को पिघला और उसमें तेल मिलाकर हिलाते हैं। जब दोनों मिलकर लप्सी से हो जाते हैं, तो ठंडा होने देते हैं परंतु हिलाते लगातार रहते हैं, जब तक कि बिल्कुल ठंडा न हो जाए। न हिलाने से दाने बन जाते हैं। ज्यादातर बराबर का तेल और चर्बी लेते हैं। मौसम के अनुसार तेल की मात्रा कम या अधिक की जाती है। डबिन को ऐसा बनाते हैं कि यह द्रव रूप में न रहे, जिसमें कि बह जाने का डर है। जाड़े में चर्बी से तेल अधिक और गर्मी में कम लेते हैं। ध्यान में रखने की दूसरी बात चमड़े के सूखने का तापक्रम (Temperature) है क्योंकि चर्बी का वह नर्म हिस्सा जो तेल में मिल गया है चमड़े में ठीक तापक्रम पर जा सकता है। यदि डबिन बहुत सख्त है तो यह कम चुसेगा : पर डबिन ऐसी पतली भी न होनी चाहिए कि उतनी गर्मी पर चमड़े पर से बह जाए। सूखने पर चमड़े की सतह पर चर्बी का अधिक गर्मी पर पिघलनेवाला हिस्सा रह जाता है। इसको बाद में स्लीकर से हटा लेते हैं तथा और तेल के साथ डबिन बनाने में इस्तेमाल करते हैं। इसे टेबिल ग्रीज (Table Grease) कहते हैं। कई बार काम में आ चुकने पर यह टेबिल ग्रीज फिर और डबिन के काम की नहीं रहती क्योंकि फिर इसमें न चुस सकनेवाला स्टीयरिक एसिड (Stearic Acid) ही रह जाता है। डबिन में इस कठोर चर्बी का काम तेल को चमड़े की सतह पर ठहराए रखने का है।

डबिन लगाते समय चमड़े में जितना पानी होता है, उस पर चमड़े की अन्तिम रंगत बहुत कुछ निर्भर है। चमड़े के तैयार होने पर दाने की सतह सब जगह एक सी रंगत की होनी चाहिए। यदि डबिन सब जगह एक सी न चुस गई तो जहाँ अधिक होगी वहाँ काली सी और जहाँ कम होगी वहाँ हल्की-सी रंगत होगी। डबिन का कम या अधिक चूसा जाना उसमें के पानी पर भी निर्भर है। इस समय पानी सब जगह एक सा और उचित मात्रा में होना चाहिए।

कितना पानी खाल में रक्खा जाए, यह जितनी चर्बी देनी हो उस पर निर्भर करता है। अक्सर इतना पानी रखते हैं कि दबाने से पानी की सिर्फ़ थोड़ी सी छोटी २ बूँदें निकल आवें। सूखने में जैसे २ पानी सूखता है उसकी जगह चर्बी लेती जाती है यहाँ तक कि सारी जगह चर्बी ही से भरी जा सकती है।

इन चमड़ों को धीरे २ सुखाना चाहिए, जिससे चर्बी को चुसने का समय मिल जाए और गर्मी इतनी होनी चाहिए कि चर्बी बस इतनी पिघली रहे कि बहने न पाए। यदि फफूँदी लगने लगे तो डबिन में थोड़ा सा कार्बोलिक एसिड या रोज़िन का तेल (Rosin Oil) आदि कीटाणु-संहारक (Disinfectant) डाल देने से यह बन्द हो सकती है।

कभी २ कुछ सूखने पर डबिन की और एक तह देते हैं और फिर पूरा सुखाते हैं। दूसरा लेप देने से पहिले पानी की मिक़दार हर जगह एक सी कर देते हैं। अधिक सूखी जगह को भिगोने के लिए गर्म पानी इस्तेमाल करते हैं।

बिल्कुल सूखने पर लोहे के स्लीकर से बची चर्बी हटाकर साफ़ करते हैं। काँच के स्लीकर से दाने को चमका देते हैं। गोश्त की सतह पर कभी २ सेलखड़ी (Whitening) लगा देते हैं। किसी २ चमड़ों को दाना छीलकर तैयार करते हैं। इस काम के लिए बफिंग स्लीकर या बफिंग मशीन प्रयोग होती है। यदि दाना ख़राब हो तो इस प्रकार तैयार कर देने से ऐब (Defects) छिप जाते हैं।

सस्ते चमड़ों में ढोल से चर्बी देते हैं। इस तरह चर्बी जल्दी ही अन्दर नहीं जाती, बल्कि बहुत सी ऊँचे ताप पर पिघलनेवाली चर्बी भी अन्दर चला जाती है। हाथ से अधिक से अधिक कुल १० % चर्बी जा पाती है। अमरीका के ढोल से भरे चमड़ों में ५० % तक चर्बी

होती है। इस प्रकार चर्बी भरने के लिए ढाल को भाप से ६०° श
(६०° C या १४०° फ़ा०—F) तक गर्म कर ठंडा भीगा चमड़ा उसमें
डालकर चलाते हैं। चर्बी को पिघला, उसमें तेल मिलाकर उसी गर्म
पर जिस पर चमड़ा है, खोखली नली द्वारा ढोल में डाल देते हैं। आध
घंटे में सब चर्बी चमड़े के अन्दर चली जाती है। फिर चमड़ों को ठंडा
होने के लिए फ़र्श पर डाल देते हैं। इसी गर्म और लचलची दशा में मेज
पर स्लोकर से बिठलाई (Setting) कर देते हैं। सुखाने के लिए वैसे
ही सुखाते हैं जैसे हाथ से भरे का। जितना ताप चमड़ा बिना बिगड़े स
सकता है उतने ऊँचे ताप पर पिघलनेवाली चर्बी इस काम में इस्ते
माल हो सकती है। ढाल में चलाने से चर्बी चमड़े में घुस जाती है
पर रेशों पर ठीक-ठीक नहीं फैलने पाती। उसके बह निकलने का तो ड
नहीं है, पर तो भी सुखाने की गर्मी इतनी ही होनी चाहिए कि अन्दर की
चर्बी नर्म रही आए। इस प्रकार स्टीयरीन (Stearine), ओलियो
स्टीयरीन (Oleostearin), पैराफ़ीन वैक्स (Paraffin Wax)
आदि कठोर चर्बी बहुत सी मिक़दार में दे देने पर भी दाना उठा देने से
चमड़े की रंगत अच्छी रहती है। अमरीका में १०० सेर साफ़ किये
(Scoured) सूखे चमड़े पर १००—११५ सेर तक चर्बी भर देते हैं
बिठालते समय ज़रा सी भी चर्बी नहीं निकल पाती। इन कठो
(ऊँचे ताप पर पिघलनेवाली) चर्बी के साथ थोडा सा डेग्रास (Degras
या मछली का तेल (Fish Oil) दे देने से चमड़ा अच्छा रहता है।

चर्बी के साथ बैराइटा (Baryta), आटा (Flour), केसी
(Casein), रोज़िन (Rosin) और रोज़िन के साबुन आदि भी
चमड़े में भरे जा सकते हैं। इँगलैन्ड में सिर्फ़ जूते के चमड़े में ढोल से
चर्बी भरते हैं। पर अमरीका में ज़ीन और बेल्टिंग (Belting) के
चमड़े में भी गर्म हवा के ढोल से चर्बी भरते हैं। गर्म हवा से चर्बी

भरने में ढोल में भाप के बजाए गर्म हवा देते हैं। इससे ताप और बढ़ाया जा सकता है। ठंडा करने के लिए फिर ठंडी हवा देते हैं।

जर्मनी में भारी बेल्ट के चमड़ों के लिये जो तरीक़ा प्रयोग होता है, वह बर्निंग इन (Burning in) कहलाता है। चमड़ों को पहिले ५०° श० पर सुखाते हैं। जब ज़रा सा भी पानी नहीं रहता, मेज़ पर रख उन्हें पिघली हुई चर्बी डालकर आँच पर दिखाते हैं, जिससे चर्बी अन्दर बैठ जाए। दूसरी विधि में सूखे चमड़े को पिघली चर्बी में डुबो देते हैं। इस समय चमड़े में चर्बी पूरी तरह भरी होती है पर चर्बी भरे चमड़े की सी नर्मी नहीं होती। यह नर्मी भिगोकर ढोल में चलाने से आती है। इसलिए ऐसा कह सकते हैं कि भीगे हो चमड़े में चर्बी भरी जा सकती है। इस विधि से फिटकरी और क्रोम से पके चमड़े में भी चर्बी भरी जा सकती है। इसमें यदि शुरू में चमड़ा बिल्कुल सूखा न होगा तो गर्म चर्बी से जलकर ख़राब हो जाएगा। दो हिस्सा राज़िन और एक हिस्सा पैराफ़ीन के मिश्रण में सूखे चमड़े को डुबोने से पानी का असर कम हो जाता है।

इन भरे हुए चमड़ों में एक ख़राबी जो अक्सर हो जाती है, वह स्प्यूइंग (Spueing) है। यह भी दो तरह की होती है। (१) सतह पर सफ़ेद झलकदार फफूँदी की सी चीज़ आ जाती है। पोंछने पर पुछ जाती है; पर फिर निकल आती है। यह कठोर चर्बी और छुट्टा फ़ैटी-एसिड (free fatty acids) के दाने बन जाने से निकल आती है। जब कठोर चर्बी न सूखनेवाले तेलों (Non-drying Oils), जैसे नीटस-फ़ुट का तेल, के साथ प्रयोग होती है, या जब चमड़े में नर्म चर्बी होती है तब ही यह सतह पर आती है। इससे चमड़ा कुछ ख़राब नहीं होता; देखने में बुरा लगता है।

दूसरी तरह की स्प्यूइंग (Spueing) तंग करती है। यह पहिले छोटे २ से दाने के रूप में सतह पर आती है। हटा देने से फिर निकल

आती है। यहाँ तक कि कभी २ चिपचिपी राज़िन की तह पूरे चमड़े पर जम जाती है। यह सूखनेवाले तेलों (Drying Oils) के प्रयोग में ही होती है, वैसे नहीं। नीटस फुट तेल या खनिज तेलों (Mineral Oils) के प्रयोग में नहीं आती। यह निकली हुई चीज़ इन सूखनेवाले तेलों का ऑक्सजिन लिया हुआ (Oxidised) पदार्थ है। पता नहीं यह चमड़े में न रहकर क्यों बाहर निकल आती है। रक्खे हुए तेलों के प्रयोग से नहीं निकलती। जिन चमड़ों में फफूँदी लग गई हो उनमें अक्सर स्प्यूइंग होती है। शायद यह फफूँदी इसको बढ़ाती है। या तेलों में अल्ब्यूमिन के होने से टूटने की शक्ति आकर ऐसा होता है।

यदि भरने के लिये केवल सूखनेवाले तेल ही प्रयोग हों, तो उनके ऑक्सीजिन ले लेने पर रेशों के कड़ा हो जाने का डर है, इसलिए न सूखने-वाले तेल अवश्य मिलाने चाहिए। मिट्टी के तेल इतनी नर्मी नहीं देते, दूसरे कुछ समय में उनके उड़ जाने का डर रहता है। उड़ जाने पर चमड़े के कड़ा हो जाने का डर रहता है। मिट्टी (Mineral खनिज) के तेल चमड़े में आसानी से घुस जाते हैं। भरने की चर्बी (Stuffing Grease) में पैराफ़ीन वैक्स मिला देने से ऐसा चमड़ा उन चमड़ों की अपेक्षा जिनकी चर्बी में यह मोम न डाले गए हों कम चिकना और कम सूखा लगता है।

चर्बी भरने से पहिले चमड़े में तो पानी रहता ही है, चर्बी में भी कुछ पानी मिला देने से अच्छा चमड़ा बनता है।

जैसा क्रोम से चमड़ा पकाने में कह चुके हैं, फ़ेटलिकर (तेल का मसाला) भी एक तरह का स्टफिंग (Stuffing) ही है। अंडे की ज़र्दी (Egg-yolk) प्राकृतिक फ़ैटलिकर है जिसमें ३० % जैतून का तेल (Olive Oil) का सा तेल मिला है। इसमें पामिटिन (Palmitin)

बहुत और थोड़ा सा अल्ब्यूमिन है। वनस्पति पदार्थ से पके हल्के चमड़ों को भी फ़ैटलिकर कर देते हैं।

मोम भरे (Waxed वैक्सड) चमड़ों पर (जैसे बछेले या चिरी हुई खालें--Splits) अमूमन दाना उठा देते हैं। इससे नमी भी आ जाती है, और यदि कठोर चर्बी प्रयोग की गई हो, तो रंगत चमक जाती है। जब इन चमड़ों को काला करना हो, तो गोश्त की सतह पर काजल (लैम्प ब्लैक Lamp black) और तेल या काजल और साबुन लगाते हैं। ऊपर से सरेश और चर्बी का घोल जिसको साइज़ (Size) कहते हैं, लगा देते हैं। कांच के स्लोकर से चिकनाकर फिर इसी का दूसरा लेप देते हैं, और फिर चिकनाते हैं। अमरीका में आटा और साबुन पहिले लगाते हैं: और फिर सरेश चर्बी और ट्रैगाकान्थ (Tragacanth) का लेप देते हैं।

वनस्पतियों से पके भारी चमड़ों को अक्सर ब्रुश से रँगते हैं और उन पर दाना उठाने के बदले दाना छाप देते हैं (Embossed एम्बास्ड)। यह काम मशीन से होता है। इस प्रकार किसी भी पशू के चमड़े पर किसी के चमड़े का सा जैसे गौ या भैंस के चमड़े पर मगर, गोह आदि का, दाना छापा जा सकता है। चिरी हुई गोश्त-वाली पट्टी (Flesh splits) पर साइज़ (size मसाला) लगाकर दाना छाप देते हैं। इस तरह छपे दाने को एम्बास्ड ग्रेन कहते हैं।

दाना छापने की मशीन (एम्बासिंग मशीन Embossing Machine) में एक धातु की प्लेट होती है जिस पर दाने का सा नक़्शा उभरा हुआ होता है। यह प्लेट भाप से गर्म की जाती है। इसके नीचे प्लेट के बराबर चौड़ी फ़ेल्ट की एक पट्टी होती है। इसे ही बेड कहते हैं। बेड के नीचे एक बेलन होता है जो बेड के लम्बान में एक सिरे से दूसरे सिरे तक आता-जाता है। चमड़े को बेड पर बिछाकर

बेलन को चालू करने से बेलन चमड़े को प्लेट से लगाता हुआ दूसरे सिरे पर पहुँच जाता है और चमड़े पर वह नक़शा जो प्लेट पर होता है, छप जाता है। इसे ही एम्बासिंग (Embossing) कहते हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार के चमड़ों के पकाने की विधि पहिले देख चुके, अब उनके तैयार करने (Currying करीइंग) को विधि लिखते हैं:—

फ़ीतों के पुट्ठों (Strap Butts) की तैयारीः—

ये चमड़े लेअर से निकलने पर सुखा लिए जाते हैं। इनको पहिले भिगोकर नर्म करना होता है। लगभग १२ घंटे ठंडे पानी में छोड़ देते हैं। कभी २ ढोल में चलाकर नर्म करते हैं। ढोल में से निकालकर ढेरी में लगा देते हैं। ठीक २ नर्म और लचलचा हो जाने पर इनको दाने और गोश्त दोनों पर से माँजते हैं। हाथ से मँजाई करने में पत्थर का और लोहे का स्लीकर और ब्रुश इस्तेमाल होता है। अब मशीनें अधिकतर प्रयोग में आ रही हैं। इनकी जैक्सन मशीन (Jackson Machine) पर दो बार गोश्त की तरफ़ पुट्ठे से कन्धे तक और रीढ़ से पेट तक मँजाई करते हैं: बाद में धब्बों को हाथ से ठीक करते हैं। इसी प्रकार दाने की भी मँजाई होती है। दाने पर तीन दफ़े मँजाई करते हैं। बुरडान (Bourdon) मशीन गोश्त की तरफ़ की मँजाई के लिये अक्सर काम आती है। मँजाई के बाद उनको सुमैक के गर्म (३८° श०) घोल में नाँद में रात भर डुबो देते हैं। घंटे भर ढोल में चला लेते हैं। इससे रंगत साफ़ हो जाती है, और मँजाई में जो मसाला निकल गया है, उसकी कुछ पूर्ति हो जाती है। फिर हल्की सी मँजाई कर धब्बे हटा दबाकर पत्थर फेरते हैं जिससे पानी निकल जाय और वे आसानी से सूख सकें। फिर हवा में कुछ सुखा कर उनको ढेर में लगा देते हैं जिससे नमी सारे में एक सी हो जाय।

चर्बी को भराई (स्टफिङ्ग) हाथ से करते हैं। पहिले पुट्ठों को मेज़ पर गोश्त ऊपर कर डालते हैं और ब्रुश से काड आयल लगा देते हैं। फिर उलटकर ५ हिस्सा चर्बी (टैलो) और ४ हिस्सा मछली का तेल मिलाकर दाने पर लगाते हैं। मोटी जगह पर अधिक और पतली जगह पर कम लगाते हैं। फिर सूखने को हल्के से गर्म घर में टाँग देते हैं। कुछ गीलो रहते हुये उतारकर ब्रुश से गर्म जल लगाते हैं। जल के ठीक अन्दर चले जाने पर अधिक द्रव डाबिन लगाकर ढेरो में लगा देते हैं, और फिर तेज़ पत्थर से बिठलाई करते हैं। मशीन से भी यह काम किया जाता है। कुछ सूखने पर फिर ढेरी लगाकर रख देते हैं। चन्द घंटे बाद फिर बिठलाई करते हैं। अब गर्म घर में कुछ और सुखाकर दाने और गोश्त पर से फ़ज़ूल चर्बी (Grease ग्रीज़) हटा देते हैं। फिर काँच के स्लीकर से रगड़कर (ग्लास लगाकर) धारी आदि दूरकर बिल्कुल चिकना करते हैं और टाँगकर बिल्कुल सुखा लेते हैं। अब दाने और गोश्त दोनों पर टैलो की हल्की सी तह देते हैं, जिससे तैयार चमड़ा भला मालूम होता है। यदि उनमें चर्बी कम मालूम दे, तो दाने पर टैलो और गोश्त पर डाबिन लगाना चाहिये। अब इनको अच्छी प्रकार फैलाकर ढेर में लगा देते हैं। फ़िज़ूल चर्बी को स्लीकर से हटा ब्रुश से जब तक चमक न आ जाए रगड़ते हैं। किनारों को छुरी से साफ़ करते हैं।

हारनेस के चमड़े की करीइंग—काली हारनेसः—इन चमड़ों को भी लेअर के बाद सुखाते हैं। फिर भिगोकर और नर्म कर (हाथ से चाहे मशीन से) छीलते और मँजाई करते हैं। मँजाई मशीन से और हाथ से या सिर्फ़ हाथ से जैसे ऊपर बता चुके हैं होती है। फिर सुमैक देते हैं, फिर स्लीकर से बिठाई कर दाने पर हल्का सा तेल लगा सुखाते हैं। कुछ सूखने पर फिर भिगोकर नर्मी हर जगह एक सी करते

हैं। ठीक होने पर यदि ग्ल्यूकोज़ (Glucose) आदि से भराई करनी हो तो भराई करते हैं।

अब चर्बी भरना है, यह भी क्रिया पहिले कहे प्रकार ही होती है। हाथ से भराई करने में पहिले दाने पर काड मछली के तेल के दो लेप देते हैं, और फिर उनपर डबिन लगाई जाती है। ढोल से भरने में ये मसाले प्रयोग करते हैं : (१) ३० हिस्सा ऊन की चर्बी, ३० हिस्सा टैलो, ४० हिस्सा काड आयल, या (२) ३० हिस्सा ऊन की चर्बी, २५ हिस्सा टैलो, ३० हिस्सा काड आयल, १५ हिस्सा डेग्रास (degras)। इस मिश्रण को चमड़े के वज़न पर लगभग १५% प्रयोग करते हैं। फिर टाँगकर सुखाते हैं। फिर उतारकर ढेरी लगा देते हैं, ठीक हो जाने पर बिठलाई करते हैं। दाने पर से छुट्टा चर्बी हटा देते हैं और कठोर ब्रुश से ब्रुश करते हैं। पत्थर और लोहे का स्लीकर भली प्रकार लगा, दबाव से काँच का स्लीकर (ग्लास) लगा देते हैं। फिर टाँगकर बिल्कुल सुखा लेते हैं।

काला करने के लिये अब हिमेटीन अमोनिया आदि लगाकर दाना से दाना मिला ढेरी लगाकर रख देते हैं। रात भर इसी तरह पड़े रहने के बाद दाने पर हल्की सी डबिन लगाकर कई दिन योंही छोड़ देते हैं। फिर पत्थर का स्लीकर लगाकर दाना बैठा देते हैं और ग्लास करते हैं। फिर टाँगकर सुखाते हैं, और दाने पर हिरन की चर्बी (टैलो) लगा कर जब तक तैयार न हो पड़ा रहने देते हैं। तैयार करने में दाने, गोश्त, और किनारों पर से छुट्टा चर्बी पोंछ देते हैं। गोश्त की तरफ़ कठोर ब्रुश से रगड़ते हैं और फिर ग्लास लगाते हैं। फिर दाने पर स्लीकर लगाते और ब्रुश फेरते हैं। कभी २ गोश्त की सतह घिस देते हैं। ब्राउन हारनेस बनाने के लिये काला रंग लगाने के बजाय ब्राउन रंग लगाकर तैयार करने से ब्राउन हारनेस बनेगी। बस इतनी बात ध्यान में रखनी होती है कि ब्राउन रँगने के लिये बे धब्बेवाले साफ़ चमड़े लेना चाहियें।

मोमवाले पुट्ठों (वैक्सड किप बट्स Waxed kip butts) की तैयारीः—

पुट्ठों को गर्म पानी से भिगोकर एक दिन ढेरी लगाकर रखते हैं। जब वे हल्की सी नमी लिये हों (सैम हों Sammed) तब उनकी मशीन से या हाथ से छिलाई करते हैं। बिल्कुल साफ़ छिलाई के बाद सुमैक के साथ ढोल में चलाते हैं। पर यह हर पकाई पर निर्भर है कि कितनी सुमैक में चलाया जाय। कभी-कभी कुछ दुबारा मर्तों से पकाते भी हैं जिसमें कई दिन लग जाते हैं। इनका ब्लूम सुमैक में निकल जाता है। किसी-किसी चीज़ से पकीपर गोश्त की बुरडोन मशीन से और दाने की जैक्सन मशीन से मँजाई करते हैं। अब वज़न बढ़ानेवाली चीज़ जैसे बेरियम क्लोराइड (Barium chloride) देते हैं। फिर मशीन या प्रेस से दबाकर अधिक पानी निकाल देते हैं और ढोल में चर्बी भरते हैं। इसमें (१) ऊन की चर्बी ३५ हिस्से, टैलो २५ हिस्से, काड आयल ३० हिस्से, डैग्रास १० हिस्से या (२) ऊन की चर्बी ३५ हिस्से, टैलो २० हिस्से, काड आयल ४५ हिस्से प्रयोग करते हैं। चमड़ों को ढोल में जब तक कि उनका ताप ऊँचा न हो जाय सूखा (बिना पानी के) चला देते हैं। फिर पिघलती हुई चर्बी उसमें डाल, दो घंटे तक चलने देते हैं। फिर खुला ढक्कन लगा चलने देते हैं जिससे वह ठंढे हो जायँ: १५ मिनट में ठंढे हो जाते हैं। फिर गोश्त और दाने पर स्लोकर लगा उनको सुखा लेते हैं। गोश्त पर हलकी-सी डबिन लगाकर तीन-चार हफ्ते पड़े रहने देते हैं। फिर गोश्त पर से स्लोकर से व्यर्थ चर्बी हटाकर उस पर ब्रुश से साबुन का घोल लगा देते हैं और फिर बफिंग स्लोकर से खूब देते हैं। दाने पर पत्थर और लोहे का स्लोकर लगा मरेश साबुन पोटाशियम बाईक्रोमेट फोसफीन (Phosphine) आदि का घोल लगा देते हैं। फिर घंटा भर के लगभग सुखाकर बोर्ड (Board) से दाना उठा देते हैं।

अब मोम भरना शुरू होता है। इसके लिये जो चीज़ें प्रयोग होती हैं, वे बहुत भिन्न-भिन्न हैं। तो भी दो मुख्य भेद हैं। एक में काला करने के लिए गोश्त पर एक गैलन तेल में २ पा० काजल मिलाकर लगाते हैं। फिर ग्लास लगाकर सूखने को डाल देते हैं। फिर हलका-सा तेल लगाकर साइज़ (size) का जिसमें दस सेर पानी में १ सेर सरेश, २ सेर साबुन, दो छटाँक हिमेटीन घली होती है लेप देते हैं। सूखने पर इस नई साइज़ का जिसमें २ सेर सरेश, ढाई सेर काड आयल, दो छटाँक निग्रोसिन, १ सेर टैलो, ४ छं० शहद की मक्खी का मोम, दो छटाँक वेनिस या ताड़पीन का तेल और (½ गैलन) ५ सेर पानी होता है लेप लगाते हैं। चिकनाकर सूखने को टाँगते हैं। दूसरी तरह के मसाले में साबुन हिमेटीन और काजल को पानी में घोलकर लगाते हैं जिसे सोप ब्लैकिङ्ग (Soap Blacking) कहते हैं। यह घोल मशीन से मज़े में लगाया जा सकता है। सूखने पर ऊपर बताए साइज़ के मसालों में से इच्छानुसार मसाले लगा देते हैं।

मोमवाले बछेले (वैक्सड काफ़ waxed calf) की तैयारी में भी ऊपर की-सी तरकीब करते हैं। इनकी मँजाई दोनों ओर भली प्रकार से करते हैं और हलकी-सी नमी रखते हुए हाथ से डबिन लगाते हैं या सुखाके फिर भिगोकर ढोल में चरबी भरते हैं। ढोल से चरबी भरने में स्टीयरिन डेग्रास और थोड़ी-सी पैराफ़ीन मोम और साथ में देते हैं और झट से सुखा लेते हैं। हाथ से भरने में धीरे-धीरे सुखाते हैं। फिर बाक़ी बात वैसे ही करते हैं जैसे वैक्सड बट्स के लिये बताया है।

मोमवाली चिरी पट्टी (वैक्सड स्प्लिट्स waxed splits) भी ज़रूरी चीज़ों में से है क्योंकि यह सस्ते जूते बनाने में प्रयोग होती है। इनको भी भिगो भिगा हलका सा छीलते हैं फिर गैम्बीयर के घोल में ढोल में चलाते हैं। फिर मशीन से बिठालते और हल्की सी गीली रख ढोल से

भराई के लिए तैयार करते हैं। मुख्यतया स्टीयरिन और ऊन की चर्बी का मिश्रण चमड़े के वजन पर ४०% प्रयोग करते हैं। आगे की विधियें ऊपर की सी हैं। चिरी सतह रँगने के लिए १½ सेर आयरिशमास, एक सेर सरेश, ½ छं० आकर (ochre), २½ छटाँक नट ब्राउन (Nut brown) को तीस सेर पानी में घोलकर प्रयोग करते हैं। जब इसका लेप सूख जाय, मशीन से ग्लेज़ करते हैं। अब मोम भरते हैं। काले के लिये तीन सेर खौलते साबुन के घोल में एक बालटी काजल धीरे-धीरे मिला देते हैं। गोश्त की सतह पर इसे लगा, फिर पेस्ट (Paste) लगाते हैं। पेस्ट बनाने में ३ सेर आटे को ३० सेर पानी में ३ घंटे औटाते हैं और फिर गरम घोल में १½ सेर साबुन, ३ सेर टैलो और २½ छटाँक निमोसीन मिला देते हैं। सूखने के बाद मशीन से घोटा फेरते हैं। फिर ट्रैगाकान्थ (Gum tragacanth) गोंद के घोल का, जिसमें थोड़ा-सा निमोसीन भी छोड़ देते हैं, लेप देकर सुखाते और तेल लगाकर तैयार करते हैं।

सेटिन लेदर (Satin Leather) की तैयारी (currying) में ऊपर की विधि से अंतर इतना ही है कि इसमें दाने की सतह पर तैयारी होती है। यह प्रायः पिटवार, कन्धे आदि पर तैयार किया जाता है। विधि ऊपर की सी है। हलका सुखाना, छीलना, सुमैक देना, मँजाई करना फिर हलका सुखाना, फिर ढोल में भराई करना होता है। सुखाने के पश्चात् इस पर के दाने को घिस (बफ़—Buff—कर) देते हैं। यह आवश्यक बात है। ऐसे चमड़ों के लिये दाने पर साबुन का घोल लगा बिठलाई कर मशीन से या बफिंग स्लीकर से बफ़ करते हैं। अब इनका काला करते हैं जिसमें लागवुड अमोनिया आदि प्रयोग होता है। फिर दाने पर पतली डबिन लगाकर रात-भर घोड़ी पर छोड़ देते हैं फिर बिठलाई कर सुखाते हैं। फिर घिसते बिठलाई करते और दो लेप साइज़ के देते हैं। चिकनाकर तेल लगा देते हैं; साइज़ ऊपर बताई ही सी प्रयोग करते हैं।

सेटिन काफ़ (satin calf) भी इसी तरह से तैयार करते हैं। पर इनकी हाथ से भराई करते हैं।

मैमल के पुट्ठों (memel butts) की तैयारी में जो भारी काम के लिये प्रयोग होते हैं दाने को काला करते हैं और छाप देते हैं। इनकी तैयारी में विधि ऊपर की-सी ही है। पर यहाँ काला करने और साइज़ लगाने के बाद दाने को ठोक बिठाल उस पर मैमल दाना छाप देते हैं। फिर सुखा लेते हैं। इसके बाद चार तरफ़ से दाना उठा गोश्त की सतह को घिसकर दाने पर रोज़िन (Rosin) मिला अलसी का तेल लगा देते हैं। और गोश्त पर फ़्रेन्च चाक (French chalk) लगाकर ग्लास लगा देते हैं।

लीवैन्ट के बनाने (Dressing of levant) में पूरी खाल व कन्धे आदि प्रयोग होते हैं। भिगाते छीलते चीरते सुमैक देते और मशीन से मँजाई आदि कर वजन देते हैं। फिर तेल लगा हल्का-सा सुखा लेते हैं। फिर बिठलाई कर दाने की ओर दाना छापते हैं, कालाकर, सुखा, दाना उठा, सीज़न लगा, सुखा, घोटा फेरते हैं। अन्त में ऊपर से खनिज तेल लगाते हैं। इसमें भराई (Stuffing) नहीं होती।

अस्तर के चमड़े बनाने में अच्छी रंगत की बड़ी खालें लेते हैं। भिगो, चीर, बराबर छील, सुमैक दे, तेल लगा, हल्का सा सुखा लेते हैं। दाने और गोश्त पर बिठलाई कर सुखाते और दाना छाप देते हैं। गोश्त की सतह को घिसकर (फलफ़कर), दाने पर फ़्रेन्च चाक लगाकर पालिश कर देते हैं। दाना खुरदुरा हो तो बिठलाई दोबारा भी करते हैं। पिटवार पर मसाले यही लगाते हैं पर छीलकर हल्के आक्सैलिक एसिड के घोल में चलाते हैं। फिर सुमैक दे मँजाईकर, पीतल का स्लीकर लगा देते हैं। इनके दाने पर कभी २ तेल लगाने के बजाय डब्बिन और पानी लगाते हैं।

बैग के चमड़े (Bag hides) बनाना—ये पकाने के घोल में से

आने पर सुमैक के पेस्ट में चलाये जाते हैं। धोकर रात भर निचुड़ने देते हैं। फिर हल्का सा तेल लगा कुछ सुखा लेते हैं। गोश्त और दाने पर स्लोकर लगा उनको पूरा २ सुखा लेते हैं। ठीक-ठीक भिगो बराबर छील सुमैक में चलाते हैं। हाथ से मंजाई कर दो दिन अधिक गाढ़े सुमैक के घोल में चलाते हैं। फिर स्लीकर लगा बिठाई कर दाने पर हल्का सा तेल लगाते हैं। हल्का सा सुखाकर पानी के सब जगह ठीक-ठीक हो जाने पर फिर स्लीकर से दाने की बिठाई कर पूरा-पूरा सुखा लेते हैं। अब रँग कर (stain) हल्का सा सुखा लेते है और दाना छापते हैं। अब दाने पर हल्की सी डबिन लगाकर सुखाते हैं। फिर दाने को खुर्च कर चमड़े को बोर्ड से नर्म करते और छपे दाने को उभारते हैं। फिर दाने पर ब्रुश लगाकर फलालैन से रगड़ते हैं।

रास के चमड़े (Bridle Leather) में हारनेस से अन्तर यह है कि खूब चर्बी देने के बजाय इन पर हल्का सा तेल लगाते हैं। पुट्ठे इसके लिये लम्बे रहते हैं। छिलाई आदि के बाद दोनों तरफ़ काड आयल अच्छी तरह से लगा देते हैं। खूब बिठलाई कर सुखाते हैं। फिर गोश्त पर मँजाई कर आयरिशमास (Irish moss) और .फ्रेन्च चाक की साइज़ लगाते हैं। जब यह बैठ जाय दाने पर ब्रुश लगा बिठाई कर फास्फीन (Phosphine) आदि का घोल ब्रुश से लगाकर रँगते हैं। और फिर सरेश और अलसी के लेस का जिसमें कुछ रंग भी हो लेप देते हैं। पोछकर ग्लास लगाते हैं। सुखाकर गोश्त पर ग्लास लगा दाने पर फलालैन से रगड़ते हैं। कभी २ बिना रँगे वैसे ही तैयार कर देते हैं।

पैरों के चमड़े (Legging Leathers) बनाने (ड्रेसिङ्ग) में अच्छे दाने के बिना ब्लूम के चमड़े लेते हैं। भिगो, छील, और माँज-कर सुमैक देते हैं। दाने और गोश्त पर स्लीकर लगाने के बाद अलसी

का तेल लगाकर सुखाते हैं। ठंढे पानी में जल्दी से डुबो, दाने पर पत्थर लगाते हैं। फिर पानी लगा ढेरो लगा देते हैं। गोश्त पर फिर आयरिशमास (Irish moss) और टैला का मिला अच्छी तरह ब्रुश से लगाते हैं। दाने का बिठाल, दाने पर ट्रेगाकान्थ का हलका सा लेप लगाते हैं। अर्धे सूखने पर गोश्त पर ग्लास लगाते हैं। पूरा सूखने पर दाने पर रंग क दो लेप दे ग्लास लगाते हैं। हाथ या मशीन से ब्रुश कर दूध और पानी का मांजन लगा मशीन से ग्लास लगाते हैं।

पिकिङ्ग-बैन्ड के पुट्ठों (Picking band butts) के बनाने में भी यही विधि काम आती है। इनमें चर्बी अच्छी तरह देते हैं। बिठलाई के बाद गर्म काड आयल लगाकर कई हफ्ते यों ही छोड़ देते हैं। थोड़े २ समय पर स्लीकर लगा और तेल लगाते हैं। कभी २ काला रँगते हैं।

हल्के चमड़ों को तैयार करनाः—

इनके तैयार करने को करीइंग नहीं कहते, जैसा पहिले भी कह चुके हैं। प्रायः भिगोना, छीलना, चीरना, सुमैक देना, माँजना, बिठालना आदि सब करीइंग में की ही तरह होता है। पर इनमें कुछ विशेषता की जाती है जो आगे लिखते हैं। ये चमड़े बहुधा रंगे जाते हैं। इस-लिये पकानेवाले पदार्थ के अनुसार इनको छाँटते (sort) हैं क्योंकि भिन्न-भिन्न प्रकार की पकावटें एक ही रंग पर भिन्न-भिन्न प्रकार का असर दिखाती हैं। कैटीकाल से पके पायरोगैलाल से पकों की अपेक्षा रंग अधिक जल्दी लेते हैं पर पायरोगैलालवाले रंग अच्छे लेते हैं। इनका ब्लूम बिल्कुल निकाल देना चाहिये। काली पकावट को खार के घोल में चलाकर दूर करते हैं : इसे स्ट्रिपिङ्ग (Striping) कहते हैं। ¼% खार का घोल ३०-३५° श॰ पर ठीक रहता है। एक दजन खाल के लिये १½—२ छटाँक सोडा, २—३ छं० साबुन, २ छं० सुहागा, ½ छं० अमोनिया काफी होता है। सोडे से उसमें का तेल (जैसे पर्शियनों

में होता है) निकल जाता है। खूब धो सल्फ्यूरिक एसिड के ½% के घोल में उजालते हैं जिससे क्षार के असर से काले हुए चमड़े साफ़ हो जाते हैं। खूब धोकर जिससे अम्ल जो कि हानिकारक है निकल जाए फिर सुमैक में चलाकर उजालते और फिर पकाते हैं जिससे वे रँगाई के योग्य हो जाती हैं। इन चमड़ों को बिठलाई मशीनों से भी करते हैं जो कई प्रकार की हैं। बिठलाई कर रँगते हैं, और फिर बिठलाई कर सुखाते हैं। सुखाने में क्रोम से पके चमड़ों की तरह फैला कर तख़्तों पर गाड़कर सुखाते हैं। सूखने पर बोर्ड से नर्म करते और दाना उठाते हैं।

जिनमें दाना छापना हो, उन पर मशीन से दाना छापते हैं। फिर सीज़न लगा सुखाकर घोटा फेरते हैं। सीज़न में चीजें वही होती हैं जो क्रोम के चमड़े के लिये होती हैं पर उनकी मात्रा आदि भिन्न होती हैं। घोटा फेरने के लिये मशीनें वही हैं जो बता चुके हैं। गोश्त की सतह को साफ़ करने, हमवार करने, तथा छीलने की मशीन को धारी दूर करने और उस पर मख़मल की लहर उठाने के लिये फ्लकिंग मशीन से फ्लक कर देते हैं। सीज़न के बाद ब्रश करने के लिये ब्रशिंग मशीन से ब्रुश करते हैं। चिकनो तैयार करने के लिये बेलन (Roller) फेर देते हैं।

अब यहाँ सारांश में कई प्रकार के चमड़ों को तैयार करने की विधि देते हैं। ये इतनी भिन्न होती हैं कि सबका लिखना मुश्किल है; नमूने के तौर पर देते हैं।

बकरी की खालों को मड़ाको के लिये तैयार करना—इसमें चढ़ाई, छुटाई, रंगत, पकावट के अनुसार छँटाई करते हैं। बड़ी मज़बूत खाल फ़र्नीचर (upholstery) के लिये और छोटी जिल्दबंदी व ऐसी कामों के लिये तैयार करते हैं। भिगोकर सुमैक देते हैं। दस दर्जन खालों के लिये एक दो बालटी सुमैक काफ़ी होता है। इसके गर्म

जुशांदे में डेढ़ घंटा चलाते हैं फिर रँगने के लिये बिठलाते हैं। जिल्द-बन्दी के लिये रँगने से पहिले और फ़र्नीचर के लिये बाद में छिलाई करते हैं। आम्लिक रंगों (acid dyes) से रँगकर कुछ देर ठंडे पानी में डाल देते हैं। अब रोढ़ (Ridge) पर से मोड़ निचुड़ने को घोड़ा पर लगा देते हैं। फिर बिठलाई कर हल्के ताप पर जल्दी से सैम करते हैं। जिल्दबन्दी के लिये गोड़ों से टाँगकर सुखाते हैं। वर्ना तख़्तों पर गाड़ के सुखाते हैं। एक पिन्ट (१० छं०) दूध ५ कार्ट (६½ सेर) पानी में मिला सीज़न के तौर पर उन पर लगाते हैं। इसको ब्रुश या स्पंज से अच्छी प्रकार लगा चमड़ों का दाने से दाना लगा रात भर छोड़ देते हैं। फिर उन पर बायें पिछले गोड़े से दाहिने आगे के और इसी तरह दायें पिछले से बायें आगे के गोड़ तक दाँतोंवाला बेलन फेरते हैं। कभी-कभी पेट से पेट तक भी यह बेलन फेरते हैं और दाने से दाना जुटा ढेरी लगा देते हैं। फिर जोड़ेदार खालों को उठा गोश्त बाहर रक्खे हुए ठंडे पानी में डुबो निचुड़ने के लिये ढेरी में लगा देते हैं। फिर भीगी अवस्था में कार्क के बोर्ड से उनको चार तरफ़ से मोड़ते हैं: पेट से पेट तक, बायें पिछले गोड़े से दायें आगे के गोड़ तक, दायें पिछले से बायें आगे के गोड़े तक और गर्दन से पुट्ठे तक। खालों को गर्म स्टोव में टाँगकर सुखा के दाने को कड़ा करते हैं। फिर बोर्ड से दाना और गोश्त पर रगड़कर चमड़ों को नर्म करते हैं। फिर ऊपर बताई सीज़न जिसमें थोड़ा-सा रंग भी मिला देते हैं लगाते हैं। कुछ देर टँगे रहने के बाद वे दाने से दाना मिलाकर ढेरी लगाकर डाल दी जाती हैं। चन्द घंटे बाद और सीज़न लगाकर गोश्त से दाना जुटा रख दी जाती हैं। फिर मसाला अच्छी तरह से ब्रुश से लगाते हैं और टाँगकर गर्म स्टोव में सुखाते हैं। फिर चारों तरफ़ से दाना उठाकर नर्मकर ब्रश फेर दिया जाता है।

कभी २ सीज़न लगाकर घोटा फेरते हैं और फिर दाना उठाते हैं। दाना इस तरह उठाते हैं कि जहाँ तक हो सके गोल दाना बैठे। फिर सुखाकर रंगत चटक करने के लिये रंग का घोल लगाते हैं। सुखाने के बाद दाना और गोश्त की तरफ़ बोर्ड से रगड़कर ५ हिस्सा अल्ब्यूमिन, १० हिस्सा दूध और थोड़ा-सा रंग १०० हिस्सा पानी में मिलाकर लगाते हैं। हल्का-सा सुखाकर ब्रुश से पालिश करते हैं और फिर बोर्ड लगा स्टोव में सुखाते हैं।

लीवैन्ट (Levant) के लिये सब कुछ लगभग ऐसा ही करते हैं। अन्तर यह है कि सीज़न लगाकर घोटा फेरते हैं। बोर्ड कर दाना उठा सीज़न लगा फिर घोटा फेरते हैं। अन्त में हल्का-सा घोटा फेर बोर्ड कर देते हैं।

काले लीवैन्ट के लिये सीज़न में खून, हिमेटोन, और हरा कसीस देते हैं। जैसे १० छटाँक हिमेटोन ३० सेर पानी में घोल; ४ छं० हरा कसीस थोड़े से ठंडे पानी में घोल, ५ सेर दूध, और ६ सेर बैल का खून ले सबको मिला पानी से नाप में ५० सेर पानी के बराबर कर लेते हैं। या ५ छं० दूध, ७ छं० खून, ४ छं० अमोनिया, ३ छं० आरकिल, ४ सेर हिमेटोन का घोल, और ३¾ सेर पानी मिलाकर सीज़न बनाते हैं। अन्त में चमड़ों पर हल्का-सा गर्म खनिज तेल लगाते हैं।

सील की खालों का मड़ाका बनाने के लिये विधि वही है जो बकरी की खाल से बनाने की है।

काले लीवैन्ट के लिए भिगोकर स्लीकर लगाते हैं। यदि बारीक दाना उठाना हो उन्हें चीरते हैं। पर बड़े दाने के लिये सिर्फ़ छील-कर बराबर करते हैं। मँजाईकर अलसी का तेल लगा गर्म घर में हल्का-सा सुखाते हैं। हाथ से बिठाईकर दाना छापते हैं जिससे दाना उठाने में सहूलियत हो। दाना पक्का करने को सुखा लेते हैं। नर्मकर भिगोते और काला करते हैं। पहिले हिमेटोन और अमो-

निया का लेप देते हैं और बाद में लोहे का घोल जिसमें सरेश मिला हो लगाते हैं। इसके लिए १$\frac{3}{4}$ सेर पानी में $\frac{1}{2}$ सेर सरेश घोल, उसी में ३$\frac{3}{4}$ सेर लोहे का घोल मिला देते हैं। या दो सेर सरेश को २$\frac{1}{2}$ सेर लोहे के घोल में भिगोते हैं और जब फूल कर घुल जावे तब लगाते हैं। इसका बहुत हल्का लेप देना चाहिये जो चमड़े में भली प्रकार जज्ब हो जावे। हवा में ज़रा सुखा गीली अवस्था में चार तरफ़ से दाना उठाते हैं और गर्म घर में सुखाते हैं। ठंडे होने पर गोश्त की तरफ़ से घिस (फ़्लफ़ कर) देते हैं और फिर ७$\frac{1}{2}$ छं० दूध, १५ छं० खून और ५ सेर पानी मिले सीज़न से सीज़न करते हैं। काले को चटकाने के लिये निग्रोसीन या कारबोलिन या नैफथायलमीन ब्लैक भी घोल में मिला देते हैं। सीज़न अच्छी तरह रगड़कर लगाते और सुखाकर घोटा फेरते हैं। दाना उठाकर नर्म आदि (जैसे ऊपर) कर गर्म घर में सुखा उन पर हल्का-सा गर्म अलसी का तेल लगाते हैं।

रंगीन चमड़ों के लिये सब कुछ ऐसे ही करते हैं, बस काला करने के बजाय मँजाई के बाद इच्छित रंग से रँग देते हैं। सीज़न सिर्फ़ दूध और पानी को लगाते हैं। गहरे रँगे चमड़ों पर सीज़न के बाद अलसी का तेल लगाते हैं, फिर घोटा फेरते, फ़्लफ़ करते, दाना उठाते और गर्म घर में सुखाते हैं।

अस्तर के लिये बेज़िल्स का बनानाः—सूखी पकी भेड़ी की खालों को छाँटकर, भिगोकर, छीलते हैं। छीलकर, सुमैक में चला, गोश्त पर पीतल का स्लीकर लगाते और तख़्तों पर गाड़कर सुखाते हैं। फिर रँगते हैं। इसके लिये रंग (stain) इस प्रकार बनाते हैं—१ छं० (२ आ०) स्टार्च को ७$\frac{1}{2}$ सेर (१$\frac{1}{2}$ गैलन) पानी में घोल दो चम्मच 'रूबी रैड' या और कोई रंग उसमें मिलाते हैं। सबको खूब उबालकर उसमें १० छटाँक (एक पिन्ट) दूध मिलाकर प्रयोग करते हैं। टाँग-

कर, सुखाकर, घोटा फेरते हैं। यदि खालें कठोर हैं तो उनको बोर्ड से रगड़कर नर्म करते हैं।

फ़ैन्सी स्लीपर आदि के लिये बिना भिगोये दाने पर रँग लगाते हैं। २ हिस्से डेक्सट्रीन (dextrin) और १/१० हिस्सा अमोनिया को १०० हिस्से पानी में मिलाकर लगाते हैं, और सुखा के रँगते हैं। रँगकर, सुखाकर, तुड़ाई करते हैं। फिर दाने को घिस (फ़्लफ़ कर) देते हैं; सीज़न लगाते और घोटा फेरते हैं।

टाँग और पैर (legging and gaiters) के चमड़े के लिये इनको गोश्त की तरफ़ से तैयार करते हैं। इसके लिए कुछ भारी चमड़े लेते हैं। वैसे ही भिगोते छीलते हैं। रँगने के लिये अलसी की जैली में बादामी रंग मिलाकर लगाते हैं। इसको लगाकर ग्लास और लोहे के स्लीकर से ठीककर गर्म घर में सुखाते हैं। नर्म करने के लिये मून नाइफ़ से काम लेते हैं। फ़ीते के चमड़े पैडिल में रँगे जाते हैं, और सुखा लेने के बाद उन पर अलसी की जैली लगाते हैं। उन्हें गोश्त की सतह अमरी के पहिए पर घिस (फ़्लफ़) कर तैयार करते हैं।

स्काईवर—इनको पेस्टग्रेन (Paste grain) के लिये इस प्रकार तैयार करते हैं। यह पाकेट बुक्स, जेवरों के डिब्बों पर लगाने, व सस्ती जिल्दों आदि के लिये काम आते हैं। इनको भिगोकर १० मिनिट सल्फ्युरिक एसिड के हल्के घोल (dilute solution) में डालते हैं। फिर खूब धोते हैं। ये पैडिल या ट्रे में रँगी जाती हैं। फिर धोने, सुखाने और गोश्त पर पीतल का स्लीकर लगाने के बाद इनके गोश्त पर १०% सरेश की जैली पेस्ट की तौर पर लगाते हैं। इसको लगा कर, ब्रुश से हमवार रगड़, कपड़े से चिकना देते हैं। अब इन्हें हल्की गर्मी पर कम से कम १२ घंटे सुखाते हैं। यदि आवश्यकता हो तो अब ½ % रंग का घोल और लगा, सुखा, फिर सीज़न लगाते हैं। इसके लिये ३ हिस्से पानी

में १ हिस्सा दूध मिलाकर; या २ छं० (४ आ०) खून का अल्ब्यूमिन १२३ सेर (१० कार्ट) पानी में घोल और ८ छं० ($\frac{3}{4}$ पिन्ट) दूध मिलाकर प्रयोग करते हैं। जब सूखकर छपने योग्य हो जायँ, इन पर आड़ा दाना (cross grain) गोड़े से गोड़े तक और आड़ा छापते हैं और फिर हल्का-सा ५ नम्बर का दाँतेवाला बेलन फेर घोटा फेरते हैं। फिर दो तरफ़ से दाना दाब, गर्म घर में सुखाते हैं। बोर्ड से रगड़कर नर्म करते हैं। ऐसी ही दशा में यह बिकती हैं। पर कभी २ दाने पर हल्की साइज़ लगाते हैं जिससे दाना जम जाता है और चमक आ जाती है।

दूसरी विधि में सीज़न लगाने के बाद सुखा, नम्बर ४ के दाँतेदार बेलन से दो तरफ़ से दाना बना सादा बेलन फेर देते हैं। फिर बोर्ड से रगड़कर नर्मकर साइज़ लगाकर तैयार करते हैं।

सीधे दाने (straight grain) वाली पेस्ट ग्रेन (paste grain) पर सीधे दानेवाले बेलन से पिटवार से पिटवार तक छापते हैं। फिर इन पर नम्बर ७ का दाँतेवाला बेलन तीन तरफ़ से फेरते हैं।

टोप के चमड़ों (Hat leathers) के लिये स्काईवर अच्छी मज़-बूत खाल की होनी चाहियें। इन पर सादा फ़िनिश देते हैं। यदि सफ़ेद या दूधिया तैयार करना हो तो सीसे (Lead) से उजालते हैं। गोश्त की सतह साफ़ चाहिये, इसलिये ट्रे में रँगते हैं। पहिले ४५° श० पर डिरेक्ट काटन क्लर्स से और फिर ३५° श० पर खारी रंग से रँगते हैं। बादामियों के लिए प्रायः टिटाक्स (titox) से पैडिल में फ़िक्स (fix) कर ट्रे में खारी रंग से रँगते हैं। फिर फ़ौरन धो सुमैक में देते हैं जिससे रंग जम जावे। रँगने के बाद स्लीकर लगा, आयरिश मास या १—२ % स्टार्च (मैदा) का घोल लगा, चमड़ों को तख़्तों पर गाड़कर सुखाते हैं। एक दफ़े यह मसाला और लगा, बेलन फेरकर, तैयार करते हैं।

रोन्स (Roans)—इनको भिगोने, सुमैक में देने, सुखाने, सीज़न लगा घोंटा फेरने के बाद गर्म पानी में डाल, ढेर में लगाकर, कठोर दानेवाले बेलन से दबने योग्य तैयार करते हैं। नमी हल्की-सी रहते हुए पहिली बनाइ चार तरफ़ से दाना दाबते हैं। अब हल्के ताप पर सुखा, बाडकर, गर्म घर में सुखाते हैं। सीधे ग्रेन के लिये गर्दन से पुट्ठे तक सीधे दानेवाले बेलन से छापते हैं। फिर दाँतोंवाले बेलन को फेरकर, सुखाकर, घोंटा फेरते हैं। फिर बोर्ड लगा ठंडे गर्म घर में हवा लगाते हैं।

रोलर लैदर (Roller leather) के लिये बिल्कुल चिकना दाना चाहिये जिसमें चर्बी और खिचाव ज़रा न हो। इसके लिये पकी हुई सूखी भेड़ी की खालों को बड़ी होशियारी से छाँटते हैं। फिर भिगो, छील, सुमैक में देते हैं। और फिर ओक की छाल और ओक की लकड़ी के सत के घोल में लटकाते हैं। फिर धोकर पीतल का स्लीकर लगाते हैं। रँगना हो तो अब रँगते हैं। इस पर प्रायः हल्की पीली, सुनहरी, बदामी या नारंगी रंगत दी जाती है। पहिले अलसी के लेस का लेप देते हैं और फिर सूखे चमड़े पर ½% रंग के घोल के ३ लेप देते हैं। कभी २ लेस में ही रंग मिला देते हैं। १½ सेर (३ पा०) अलसी के बीज का लेस ५० सेर (१० गैलन) पानी में बनाते हैं और उसमें ¼ सेर (½ पा०) रंग देते हैं। यदि सादा ही तैयार करना हो जैसा कि बहुधा होता है, तो ऊपर केवल अलसी या आयरिशमास आदि के लेस का लेप देते हैं। खिचाव को दूर करने के लिये खूब तानकर सुखाते हैं। फिर उखाड़कर दूध अलसी और आयरिशमास को सीज़न लगाते हैं। थोड़ी देर बाद लोहे का बेलन उस पर फेरते हैं। फिर मुननाइफ़ से नर्मकर, फ्लफ़कर, सीज़न लगा, गर्म घर में सुखा, गर्मकर, घोंटा फेरते हैं। फिर मूननाइफ़ से नर्मकर, फिर घोंटा फेर, लोहा लगाकर तैयार करते हैं।

तेरहवाँ अध्याय

तेल से चमड़ा पकाने की विधि

OIL TANNAGE

(आयल टैनेज)

आदिकाल में जब कि मनुष्य शिकार से अपना पेट भरते थे, खाल को पकाने की यही विधि थी। जानवरों का गोश्त खाकर खाल की गोश्त-वाली सतह पर जानवरों के सिर के गूदे (brains) और चर्बी को रगड़ देते थे। और धीरे-धीरे सुखाते हुए उसकी तुड़ाई करते थे, जिससे वे खालें पक जाती थीं। सूखने पर रेशे एक दूसरे से तेल के कारण अलग-अलग रहते हैं—एक प्रकार का तेल का चमड़ा बन जाता है। अच्छे बालवाली खालों को अब भी सूखनेवाले तेलों (drying-oils) के साथ रगड़कर बनाते हैं।

ऐसे चमड़ों में वे सबसे अच्छे होते हैं, जो शैमाय की विधि से बनाए जाते हैं। शैमाय (chamois) बनाने के लिये हिरन (Ante-lope) की खाल काम में लाते हैं, पर सस्ते चमड़ों के लिये भेड़ की खाल की गोश्तवाली पट्टी (flesh split) काम में लाते हैं। चीरने के लिये भेड़ की खालों को ऐसा चूना देते हैं कि वे फूलकर खूब ठोस हो जायँ, फिर उनको रीडर स्पिलिटिंग (Reader splitting) मशीन पर चीरते हैं। गोश्त की पट्टी का शैमाय (chamois) और

दाने की पट्टी के फ़ैन्सी (Fancy) चमड़े बनाते हैं। इसी पट्टी को स्काइवर (skiver) कहते हैं।

गोश्त की पट्टी को थोड़ी सी देर चोकर में डालकर निकाल लेते हैं, पर चूना दूर करने की कोई आवश्यकता नहीं। इसमें चूना रहना ही चाहिए। फिर इनको 'फ़ुलिंग मिल' (fulling mill) या 'फ़ालर स्टाक' (faller stock) में थोड़े से बुरादे के साथ मसलते हैं। मसलते-मसलते जब वे कुछ सूखी, सूराख़दार (porous) और हवा भर जाने से अपारदर्शक (opaque—जिनमें से आर-पार दिखाई न दे) हो जाती हैं, तब उन पर काड मछली का तेल लगाते और उन्हें कूटते हैं। थोड़ी-थोड़ी देर बाद उनको हवा में बाँसों पर ठंडा होने के लिये टाँग देते हैं। यदि वे बीच-बीच में इस प्रकार ठंडी न की जाएँ, तो तेलों के आक्सीजिन (Oxygen) लेकर गर्म हो जाने से खालें जल जाएँ। ठंडी हो जाने पर फिर तेल देकर उन्हें कूटते हैं। जब तक कि चूने की गन्ध उड़ नहीं जाती और उसके बदले तीव्र (Pungent) गन्ध नहीं आने लगती और खालें तेल से पुर नहीं जातीं, इसी तरह करते हैं। जब खालें इतनी तैयार हो जाती हैं उनको एक सन्दूक़ में भरकर ढक के रख देते हैं। तेलों के आक्सीजिन लेने से वे गर्म हो जाती हैं, इसलिये समय-समय पर निकालकर उनको ठंडा करते हैं। यदि ऐसा न किया जाए तो आग तक लगने का डर रहता है। इस क्रिया में बहुत सी तीव्र एक्रोलीन (Acrolein) नामी गैस निकलती है। इस तरह सन्दूक़ में बन्द करने को दो-तीन बार दोहराते हैं। जब खालें और गर्म नहीं होतीं, आक्सीजिन लेना (Oxidation) बन्द हो जाता है, खालें सारे में बादामी हो जाती हैं, और चमड़ा-सी हो जाती हैं, तब इस काम को बन्द करते हैं।

अब खालों को खार के घोल (alkali solution) में धोते हैं।

इससे उनमें का तेल जो छुट्टा (free) है निकल आता है। इस घोल के खार को अम्ल (acid) से शिथिल (neutralise) करने पर एक तेल निकलता है। इस ही तेल को साड आयल (sod oil) कहते हैं।

फ्रांस (France) में जो विधि काम में लाते हैं, वह इससे कुछ भिन्न है। फ्रांस की विधि में जब खालें बुरादे में कूटने से ऐसी हो जाती हैं कि उनमें से आर-पार नहीं दिखाई देता, उन्हें झाड़कर मेज़ पर डालते और उन पर तेल लगाते हैं। फिर उनका बन्डल बना उन्हें स्टाक (stock कूटने की मशीन) में देते हैं। काड आयल (cod oil) के बदले सील (seal) और ह्वेल के तेल का मिलाकर इस्तेमाल करते हैं। इस कारण खालें अन्त में अधिक पीली होती हैं। उनमें से तेल पतला और ज्यादा निकलता है। थोड़ी २ देर कूटने के बाद ८-१० घंटे हवा में झुलाते हैं। इस काम के लिये गर्म कमरे होते हैं। बहुत कुछ तेल इन्हीं गर्म कमरों में आक्सोजिन लेता है। इस बात का यहाँ ध्यान रखते हैं कि इस समय खालों का कोई हिस्सा तेल से संयुक्त होने से पूर्व सूखने न पाए वर्ना कड़े पारदर्शक चकत्ते (hard transparent patches) पड़ जाते हैं जो फिर नहीं बदल सकते : फिर तेल इन जगहों पर असर नहीं कर सकता। फ्रांस में सन्दूकों में नहीं भरते। गर्म कमरों में ही कार्य्य पूरा हो जाता है। खालों में के छुट्टा तेल को खालों को गर्म पानी में डुबाकर, धोती फींचने की तरह फींचकर या प्रेस में दबाकर निकालते हैं। इसी से डैग्रास (degras) बनाते हैं जो करीइंग और फ़ैटलिकरिंग में बहुत अच्छा काम देता है। इतने पर भी कुछ तेल खालों में रही जाता है। इसे खालों को खार के घोल में धोकर निकालते हैं। ये निकले घोल खारी होते हैं। अम्ल से इनका खार शिथिल करने पर जो तेल निकलता है, उसे हो साड आयल कहते हैं। यह डैग्रास का-सा

होता है ; पर वैसा अच्छा नहीं होता। अँगरेज़ी विधि में सन्दूक़ों में बन्द करने और काड आयल इस्तेमाल करने से तेल ऐसा गाढ़ा पड़ जाता है कि आसानी से नहीं निकलता। सब साड आयल के रूप में निकालना पड़ता है। अच्छे डैग्रास में २५% पानी होता है। अब प्रायः इसे, बिना खालों के, तेलों को आक्सीजिन देकर (oxidising) बनाते हैं। चर्बी (tallow) व ऊन की चर्बी (wool fat) के साथ डैग्रास मिलाने से जो फ़ैटलिकर बनता है, वह अच्छे चमड़ों पर इस्तेमाल होता है।

शैमाय को वाश लैदर (wash leather) भी कहते हैं। यह सामान साफ़ करने और पालिश करने के लिये अक्सर इस्तेमाल होता है। बढ़िया शैमाय हिरन की खाल से ही बनाया जाता है और दस्ताने आदि के लिये इस्तेमाल होता है। इस काम के लिये यह सफ़ेद भी किया जाता है (Bleached) और रँगा भी जाता है। असल शैमाय तो शैमाय नामी पशु की खाल से बनाया जाता था। यह पशु अब नहीं मिलता।

सफ़ेद करने की विधियें (bleaching procesees) ये हैं:—
(१) चमड़ों को साबुन मिले पानी में, फ़ैटलिकर में, या डैग्रास के खारी घोल में भिगाकर धूप में रख देने से रंगत सफ़ेद हो जाती है।
(२) आक्सीजिन देनेवाले रसायनों (oxidising agents) जैसे पोटाशियम परमैंगनेट (Potassium Permanganate) और अम्ल (acid) या सोडियम पैराक्साइड (Sodium Peroxide) और अम्ल के प्रयोग से सफ़ेद करते हैं। चमड़ों को पहिले ०.५% पोटाशियम परमैंगनेट के घोल में डालते हैं; जब गहरी बादामी रंगत आ जाती है, तब चमड़ों को सल्फ़्यूरस एसिड (sulphurous acid) या आक्सैलिक एसिड (oxalic acid) के घोल में डालते हैं। रंगत दूर होने पर चमड़े सफ़ेद हो जाते हैं।

बफ़ लैदर (Buff Leather) जो पहिले फ़ौजी सामान के लिये

बहुत इस्तेमाल होता था, इसी प्रकार बनाया जाता था। इसके बनाने में गर्म होना जल्दी बन्द कर देते थे, जिससे यह चमड़ा बहुत नर्म और कपड़े सा नहीं होने पाता था। यह चमड़ा बैल या गाय की खाल से बनता था। जितने चमड़े, बिना चीरे, तेल से बनाए जाते हैं, उनका दाना तेज़ छुरी से रगड़कर निकाल देते हैं। इसे फ्रिज़िंग (Frizing) कहते हैं। दानेवाली खालों में तेल आसानी से नहीं घुस सकता। तेल से पकने के बाद, इन चमड़ों को गर्म सांडे के घाल में देकर सिकोड़ देते (shrink) हैं। यह विधि हल्के दस्तानों के चमड़ों पर भी प्रयोग होती थी। इसको टकिंग (tucking) कहते हैं।

फ़ारमैल्डीहाइड (Formaldehyde) के १% घोल (१०० सेर पानी में एक सेर) का खारी कर उसमें खालों को पकाने से बिल्कुल ऐसा चमड़ा तैयार होता है जैसा तेल से पका होता है। फ़ौज के लिए बहुत सा 'बफ़ लैदर' इस विधि से भी बनाया गया था। इससे अन्दर तक सफ़ेद चमड़ा बनता है ः इसको सफ़ेद करने की ज़रूरत नहीं। शैमाय से मिलाने के लिए, इसको पीला रँगकर ऊपर से सफ़ेद कर देते हैं। रंगीन चमड़ा बनाने के लिए रंग भी देते हैं।

क्राउन (crown) और हैलवीशिया (Helvetia) चमड़े चर्बी से बनते थे। इनके लिए भीगी खाल को आटे और पशु की चर्बी की लेई से लेप कर गर्म ढाल में चलाते हैं, जिससे सब मसाला घुस जाए। मोटी खालों के लिए तीन बार लेपकर, आठ घंटे चलाते हैं। इस लेई में ७ हिस्से आटा, ७ हिस्से नर्म चर्बी—जैसे घोड़े की चर्बी, २ हिस्सा टैलो (tallow), ४ हिस्सा पानी और ज़रा सा नमक या शोरा लेते हैं। घोड़े की चर्बी के बदले टैलो और तेल ; आटे के बदले पाइपक्ले (Pipe clay) या आकर (ochre) इस्तेमाल कर सकते हैं। साबुन और मछली का तेल भी इस्तेमाल हो सकता है।

अमरीका का 'राहाइड' (Rawhide) चमड़ा थोड़ा सा चूना निकली खालों को चर्बी और नीट्स फुट के तेल के साथ २४ घंटे ढोल में कुछ ऊँचे ताप पर चलाकर बनाया जाता है। ये चमड़े बहुत लचलचे और मज़बूत (tough) होते हैं। रीम्स (Reims) के, जो दक्षिणी अफ्रीका में बनते हैं, और कितने ही कामों में इस्तेमाल होते हैं, बनाने में चूना लगी खाल में से चक्कर देते हुए एक लम्बी डोरी-सी काट लेते हैं। उसे फिर लपेटकर ऊँचे से लटका देते हैं। नीचे के सिरे पर बोझ बाँध देते हैं। इस गीली डोरी पर तेल लगाकर बट देते हैं और खोलते हैं। तेल चुस जाने पर और तेल लगाते हैं। और जब तक कि पानी न सूख जाए, और वे तेल से संपृक्त न हो जाएँ इसी प्रकार करते हैं। इस विधि से बड़ा कड़ा लचलचा (tough) चालू चमड़ा बनता है।

गो सब पशुओं की चर्बी से नर्म और लचलचा चमड़ा बन सकता है; सूखनेवाले तेलों से ही तेल की ख़ासियतवाला चमड़ा बनता है। मछली का तेल ही ज्यादातर इस्तेमाल होता है; परन्तु अलसी का तेल भी प्रयोग हो सकता है। जापान में बहुत कड़ा लचलचा चमड़ा जो फ़ीतों (brace tabs--ब्रेस टैब्स) के लिए प्रयोग होता है, पानी में भिगो, सरसों का तेल (Rape oil) लगा, धूप दिखाकर बनाया जाता है। अमरीका का नापा (Nappa) चमड़ा नर्म साबुन भरकर बनाया जाता है।

चौदहवाँ अध्याय

मिश्रित पकावट

COMBINATION TANNAGE

(कम्बिनेशन टैनेज)

पकाने के लिये कितने ही पदार्थ प्रयोग हो सकते हैं, जैसा पीछे बता चुके हैं; यथा फिटकरी, क्रोमियम, वनस्पति, तेल, अल्डीहाइड, बनावटी टैनिन (Synthetic tannins) आदि २। वनस्पतियों के प्रयोग में देख चुके हैं कि कभी कभी कई वनस्पति मिलाकर चमड़ा पकाने मे काम आते हैं। इसी भाँति इन पकाने के भिन्न भिन्न पदार्थों के मेल से जो चमड़ा पकाया जाय उसको पकावट को मिश्रित पकावट (combination tannage) कहते हैं। पुराने ज़माने में वनस्पति और फिटकरी के मिश्रण से चमड़े बनाये जाते थे। शायद सबसे पहिले जो इस विधि से चमड़ा बनाया गया, वह स्वेडिश (Swedish) या डैनिश (Danish) दस्ताने का चमड़ा था। इसी विधि से कई प्रकार के बड़े कड़े (tough) और लचलचे चमड़े बनाये जा चुके हैं, जैसे ग्रीन-लैदर (Green leather), पिकरबैन्डस (Picker bands), लेसेज़ (Laces), कूम्बिंग लैदर्स (combing leathers) आदि। अमरीका में इस विधि से डंगोला नामी (Dongola) एक प्रकार का ग्लेज्ड किड (Glazed kid) बनता था, जो जूते बनाने में प्रयोग होता था।

फिटकरी से पके चमड़े कड़े (tough) और लचलचे होते हैं। खनिज की पकावट (mineral tannage) वनस्पति की पकावट (vegetable tannage) की अपेक्षा आसानी से घुसती है ; खाल के रेशों को अच्छी तरह अलग अलग कर देती है। उसमें ठोसपन (Plumpness) और ठुसावट (solidity) कम होती है ; खिंचने की शक्ति बड़ी होती है ; पानी का असर अधिक होता है (क्रोम में बहुत कम) ; बिना तुड़ाई के नर्मी नहीं आती ; गोश्त की सतह खुरदरी होती है। वनस्पति से पकों की गोश्त की सतह पुख्ता हमवार (firm and compact) होती है। जिन चमड़ों पर गोश्त की सतह तैयार करनी हो, जैसे 'वैक्सड काफ़' (waxed calf) में, उनके लिये वनस्पति पदार्थों (vegetable products) से पकाना ठीक होता है। मिश्रित पकावट में खनिज पकावट के यह गुण थोड़े बहुत आ हो जाते हैं। खनिज से पके चमड़े सिर्फ़ ऐसे काम में प्रयोग हो सकते हैं जिसमें दाने की सतह तैयार करनी हो और गोश्त की सतह पर नर्मी और मखमलीपन चाहिये। खनिज पकावट पहिले देने से टैनिन शीघ्रता से घुस जाती है। वनस्पति पदार्थ से जब चमड़ा पूर्णतया पक गया फिर खनिज की पकावट का कुछ असर नहीं होता। खनिज से पहिले पकाने पर, वे पके हुए चमड़े बहुत सा टैनिन ले सकते हैं फिर भी खनिज की पकावट के गुण बहुत कुछ बने रहते हैं। जो-जो पकावट (tannage) जितना-जितना प्रयोग की जायँ, उनके वैसे गुण तो चमड़े में होंगे ही, पर मुख्यतया उस पकावट के गुण होंगे जो पहिले दी जाय।

यदि फिटकरी (alum) और वनस्पति (vegetable products) एक ही घोल (solution) में प्रयोग करने हों, तो उनको निथार या छान लेना चाहिए, क्योंकि फिटकरी से वनस्पतियों के घोल में

से तलछट (precipitate) बनता है। ये तलछट रंगत देनेवाली चीज़ों के फिटकरी से सम्मिलित पदार्थ हैं। क्रोम से भी ऐसा ही होता है। पुटैशियम बाईक्रोमेट एसिड के साथ होने से चेतन (organic) चीज़ों को आक्सीजन देता है, अतः टैनिन के साथ प्रयोग नहीं हो सकता; और न वनस्पति से पका चमड़ा दो घोल की विधि से क्रोम किया जा सकता है।

डेनिश दस्ताने का चमड़ा पहिले फिटकरी और नमक से पकाया जाता है जिसमें आटा और अन्डे की जर्दी देते हैं (कभी २ नहीं भी देते हैं); फिर विलो (willow) की छाल से पकाया और रँगा जाता है। चमड़ों को पकाते में ही रंग की लकड़ी डाल कर रँग देते हैं। चमकदार 'फ्रैंचकिड़' (French kid) के बनाने में टैनिन और रंग के घोल को मिलाकर दाने पर ब्रुश से लगाते हैं जिससे सिर्फ़ दाना पक जाय और सतह पर घोटा फेर के चमक लाई जा सके। अन्दर से यह खाली फिटकरी से पका होता है।

ग्रीन लैदर (Green Leather) के पकाने में खालों को लगभग एक हफ़्ता हल्के गेम्बियर (Gambier) के घोल में हैन्डलर्स में की तरह पकाते हैं, और फिर गर्म और तेज़ नमक और फिटकरी के घोल में डालते हैं। रात भर उसी में छोड़कर, बिना धोये, जल्दी से सुखा लेते हैं; इससे सतह पर फिटकरी के दाने बन जाते हैं। इसको स्लीकर से हटा, भिगोकर, बहुत सा साड आयल उसमें भरते हैं। यदि अच्छी तरह बनाया जाय तो ये चमड़ा बिना फिटकरी का निकलने दिये धुल सकता है। फिटकरी, नमक और गैम्बियर दोनों के घोल मिलाकर प्रयोग करने से भी अच्छा चमड़ा बनता है।

डंगोला लैदर (Dongola leather) अमरीका में इसी विधि से बनता था। जिन चमड़ों में सतह को चमकती तैयार करना हो, उनको

सतह अवश्य टैनिन से पकाई जानी चाहिये। इसलिये प्रायः पहिले कुछ दिन गैम्बियर के घोल में देते है, जिसमें कुछ समय बाद नमक और फिटकरी छोड़ देते हैं। डल डंगोला (Dull Dongola यानी जिसमें सतह पर चमक न देनी हो) को पहिले फिटकरी से पकाते हैं। ग्लेज्ड डंगोला किड के लिये १ दर्जन बकरी की खालों को ४ पा० (२ सेर) ढंजेवाले गैम्बियर, ½ पा० (¼ सेर) फिटकरी और ¼ पा० (२ छं०) नमक के घोल में पकाते हैं। २४ घंटे के लगभग काफ़ी होते हैं। पकाने के बाद उनको गर्म पानी से अच्छी प्रकार धोकर, छुट्टा फिटकरी और गैम्बियर निकल जाने पर, क्रोम की तरह हो फ़ैटलिकर करते हैं; बस ताप बहुत कम रखते हैं। ½ % साबुन और ¾ % तेल काफ़ी है। जिन पर घोटा (Glaze) न फेरना हो उसमें कुछ अधिक फ़ैटलिकर दे देते हैं। खाली वनस्पति से पके चमड़े भी फ़ैटलिकर किए जा सकते हैं, और खासकर वे जिनको तेल से चिकना हुए बिना नर्म करना हो; जैसे रंगीन चमकदार बछेड़े बनाने में। तिल्ली का तेल (Sesame or gingelley oil) भी प्रयोग हो सकता है; भारत की पकी भेड़ और बकरी की खालों ('पर्शियन') में यद्यपि यह तेल उनके वजन पर ३० % तक होता है, वे चिकनी नहीं होतीं। नक़ली (Imitation) डंगोला बनाने में इनको थोड़ी सी टैनिन को खार (alkali) से दूर कर, फिर फिटकरी से पका, डंगोला की तरह फ़ैट-लिकर कर तैयार करते हैं। काला रँगने को फ़ैटलिकर के बाद ही या सूखने के बाद जब कि तेल और साबुन रेशों पर जम लें काला रँग देते हैं।

सैमी क्रोम (Semi chrome)—वनस्पति से पके चमड़े की पकावट को कुछ कमकर फिर उसे क्रोम से पकाकर तैयार करने को सैमी क्रोम बनाना और चमड़े को सैमी क्रोम कहते हैं। बछेले, गोंखा (kips), चिरी खालें (split hides) इस तरह से सैमी क्रोम बनाने

में काम आती हैं। इसके लिये सूखे चमड़े को ३५° श० के पानी में ढोल में डालकर कुछ देर चलाते हैं। फिर चलते ढोल में १०० सेर सूखे चमड़े के लिए २½ सेर सोडे का घोल छोड़ देते हैं और आध घंटे तक ढोल में चलने देते हैं। इस तरह वनस्पति पकावट (vegetable tannage) को दूर कर खूब धोते हैं: दो-तीन बार पानी बदलते हैं। ताप ३५° श० (35° C) रखते हैं। जब तक धोवन का पानी साफ न आ जाए धोते हैं। अब क्राम से पकाते हैं। क्राम का घोल बनाने के लिये ५ सेर क्रोम की फिटकरी को गर्म पानी में घोलकर उबालते हैं और फिर १ सेर सोडे को पानी में घोल उसमें धीरे-धीरे मिलाकर ठंडा होने देते हैं। ये ६०—७० सेर सूखे चमड़े के लिये काफी है। इसको तीन हिस्सों में करके चलते ढोल में डालते हैं। हर दफ़ा घोल डालने के बाद ½—¾ घंटा ढोल चलने देते हैं। अन्त में १ घंटा भर चलने के बाद बायलिंगटेस्ट (Boiling test) करते हैं। यह चमड़े इस जाँच में लगभग तो उतरने ही चाहियें। जब इस तरह जाँच करने पर पकावट पूरी मालूम हो, तो उनको निकाल दो तीन दिन घोड़ी पर छोड़ देते हैं, फिर ५०° श० के पानी से धोते हैं और ½% सुहागे (Borax) से शिथिल (neutralise) करते हैं। तत्पश्चात् जैसे क्राम से पके चमड़े का तैयार करते हैं, वैसे ही इसे भी करते हैं। अर्थात् रँगते, फ़ैटलिकर करते, सुखाते, तुड़ाई करते, सीज़न (Season) लगा, घोटा फेरते और दाना उठाते हैं।

पन्द्रहवाँ अध्याय

वार्निश का चमड़ा बनाना

JAPANNED AND ENAMELLED LEATHERS

(जैपेन्ड और इनामिल्ड लैदर्स)

वार्निश का चमड़ा जिसके जूते बनते हैं और वह जो गाड़ियों के ढकने आदि के लिये प्रयोग होता है चमड़े पर सुखानेवाले तेलों की एक वार्निश जिसको जैपैन (Japan) या इनामिल (Enamel) कहते हैं लगाकर बनाया जाता है। गो इसे पेटेन्ट लैदर भी कहते हैं, यह किसी पेटेन्ट से नहीं बनाया जाता। अँगरेजी में इसको जैपेन्ड या इनामिल्ड लैदर्स (Japanned या Enamelled Leathers) भी कहते हैं। जैपेन्ड लैदर में यह वार्निश गोश्त की सतह पर और इनामिल्ड में दाने की सतह पर लगाई जाती है जिस पर प्रायः दाना छाप दिया जाता है। गोश्त की तरफ़वाली चिरी हुई पट्टियों का भी वार्निश लगाकर और दाना छापकर इनामिल का चमड़ा बनता है।

वार्निश के चमड़े के लिये किसी चीज़ से भी पका चमड़ा प्रयोग हो सकता है : आवश्यकता उसमें इतनी ही है कि एक तो उसमें खिचने की शक्ति न हो वरना खिचने ही वार्निश की तह टूट जायगी, दूसरे उसमें तेल व चरबी भी न हो। तेल होने से यह वार्निश चिपकती नहीं, एक सी लगती नहीं, चमक नहीं आएगी और चिपचिपायेगी। इस काम के

लिये चमड़े में का खाल का तेल भी बेनज़ाइन (Benzine) द्वारा निकाल देते हैं, और इस प्रकार के तेलों से फैटलिकर करते है, जो वार्निश को किसी प्रकार की हानि न पहुँचायें।

यह वार्निश प्रायः अलसी के तेल की बनती है। अलसी का तेल (Linseed oil) सूखनेवाला तेल (Drying oil) है। आक्सीजन लेकर यह जम जाता है (इसे ही सूखना कहते हैं)। यों ही हवा में रहने से भी वह आक्सीजन लेकर ऐसा हो जाता है कि उसकी तह जम जाती है। इसी तह के जम जाने के कारण यह लकड़ी की चीज़ों पर लगाया जाता है। यह जमी हुई तह ही वार्निश है। वार्निश में और भी चीज़ें पड़ती हैं; ख़ाली अलसी का तेल नहीं प्रयोग होता है। गर्म करने से और सुखानेवाले पदार्थों (ड्रायर्स Driers) के प्रयोग से यह गुण और भी बढ़ जाता है। ऐसे तेल की हलकी तह जल्दी सूखती है और सूखने पर कड़ी तह (film) हो जाती है। तेल को इस प्रकार का तैयार करने में गर्म करना पड़ता है; इसे तेल औटाना (आइल बाइलिंग Oil Boiling) कहते हैं। तेल को औटाते हुए साथ में सुखानेवाले पदार्थ भी मिला देते है। ये वे रसायनिक पदार्थ हैं जो हवा में से आक्सीजन लेकर तेल को देते हैं और फिर स्वतन्त्र (free) हो जाते हैं। अलसी का तेल आक्सीजन लेकर जम जाता है, इसी से इसको सूख जाना (Drying) कहते हैं। सूखना पानी के उड़ जाने से होता है, जैसे कपड़ों का सूखना; यहाँ ऐसी कोई बात नहीं होती, पर प्रयोग में इस बात के लिये सूखना शब्द आ ही गया है।

इस वार्निश के लिये तेल ऐसा औटाना चाहिये कि चमड़े पर लगने पर वह चमड़े में न घुसे, बहुत जल्द सूखे, चिपचिपा न रहे और उसकी तह इतनी लचलची रहे कि चमड़े को दोहरा-तेहरा करने से भी नहीं कड़के। वार्निश लगाने की विधि यह है कि चमड़ों की चर्बी

दूर कर चमड़ों को तख़्तों पर फैलाकर कीलों से गाड़ देते हैं। फिर उसके छेदों को बादामी काग़ज़ से बन्दकर, स्लोकर से वार्निश का फैला कर रगड़कर सब जगह एक-सो कर देते हैं। सूखने पर झामे (Pumice stone) से व अमरो (Emery) से रगड़ कर साफ़ और एकसा कर वार्निश का दूसरा लेप देते हैं। इसके सूखने पर वैसे हो साफ़ कर, कभी कभी तीसरा लेप भी देते हैं। सुखाने के लिये तख़्तों को जिन पर चमड़े गड़े हैं गर्म घर (Stove—स्टोव) में रख देते हैं, जिनका ताप ७१° श० (C) होता है। जर्मनी में ६०°श० से अधिक ताप नहीं देने पर कुछ समय धूप में रखते हैं। अमरीका में ६३° श० (२००° फ़ा०) तक का ताप देते हैं और धूप में भी सुखाते हैं। आख़री लेप में प्रायः कोपल की वार्निश (Copal varnish) या आजकल सैल्यूलाइड (celluloid जिसकी तसवीर खींचने की फ़िल्म व खिलौने बनते हैं) की वार्निश मिलाकर लेप करते हैं। इससे चमक अच्छी आती है।

औटा हुआ तेल (Boiled oil) बनाने के लिए पुराना रक्खा हुआ तेल जिसकी गाद बैठ चुकी हो या रसायनों द्वारा गाद दूर कर शुद्ध किया तेल प्रयोग करते हैं। लिथार्ज (Litharge), प्रशियन ब्ल्यू (Prussian blue), आदि पुराने सुखानेवाले पदार्थ हैं; यही प्रयोग किये जाते हैं। हर बनानेवाले की विधि भिन्न भिन्न हैं : यहाँ पर एक विधि देते हैं।

वह तेल जो कुछ महीने तक रक्खा रहा हो, इस काम में लाते हैं। कच्चे अलसी के तेल को औटाने के लिये खुली आँच पर खुली कढ़ाई में चढ़ा देते हैं। ताप धीरे धीरे बढ़ाते हुए ३००° श० पर ले आते हैं, और १२ घंटे तक ३००° श० पर रखते हैं। फिर गर्मी देना कम करते जाते हैं, यहाँ तक कि ताप २००° श० पर आ जाये; तब रात भर यों ही छोड़ देते हैं। दूसरे दिन फिर ३००°—३२०° श० तक की गर्मी पर

औटाते हैं। औटाने में लोहे के छेददार चमचे से हिलाते रहते हैं। दूसरे दिन औटाते औटाने जब उसको जैली-सी बन जाती है, तो ताप गिराते हैं। ईंटों तक को पानी डालकर ठंडा कर देते हैं, जब सब ठंडा हो जाये और तेल का ताप २००' श० पर हो तब जितना तेल का आयतन (Volume) था उसका तिहाई पैट्रोलियम नैपथा (petroleum naptha) डालते हैं और खूब हिलाते हैं। धीरे धीरे और नैपथा डालते और हिलाते हैं, यहाँ तक कि १⅓ हिस्सा नैपथा पड़ जाता है। इतनी गर्मी पर बहुत सा नैपथा उड़ जाता है।; पर गर्म में ही मिलाना होता है क्योंकि ठंडे में मिलाने से यह मिलता नहीं। इसमें फिर फ़ी १० सेर पीछे ½ सेर काजल मिलाते हैं। इसको स्लीकर से रगड़कर चमड़े पर लगाते हैं और अधिकता को पोंछ देते हैं। इसको हवा और धूप में पूर्णतया सुखा लेते हैं, तब दूसरी तह देते हैं जिसके बाद ४५°—५०° श० पर गर्म घर (Stove) में सुखा लेते हैं। इनामिल के चमड़े के लिये यह दो लेप काफ़ी हैं ; पर चिकने जैपेन के चमड़े के लिये एक तीसरा लेप और देते हैं।

इनामिल के चमड़े के लिये अब इतने पतले औटे हुए तेल को जितना शीरा (treacle) होता है चमड़े पर लगाते हैं और १२ घंटे गर्म घर (stove) में सुखाते हैं। फिर झामा फेरकर उस पर इनामिल को वार्निश लगा देते हैं। यह इनामिल की वार्निश फ़ी दस सेर अलसी के तेल में दो से छै छटाँक तक चाइनीज ब्लू (chinese blue) डालकर ८ घंटे औटाने से बनती है। इसको भी नैपथा से शीरा जैसा पतलाकर प्रयोग करते हैं। फिर झामा फेर आख़री लेप देते हैं, और सूखने पर उस पर दाना छाप देते हैं। ६०° श० पर गर्म घर (stove) में सुखाकर धूप में रखते हैं, जिससे चिपचिपापन जाता रहता है, और चमक (lustre) आती है।

चिकना जैपेन का चमड़ा तैयार करने को तीसरे लेप के ऊपर दो

लेप काली वार्निश के देने हैं, और बीच में झामा फेर देते हैं। फ़ी १० सेर कच्चे अलसी के तेल को ¼ सेर अम्बर (umber) के साथ ८—१० घंटे तक २६०°—३००° श० पर औटाते हैं, और इतना नैपथा मिलाते है कि ब्रुश से लगाने लायक़ पतली हो जाए। यही काली वार्निश है, जिसके दो लेप देते हैं, और गम घर में ७५°— ८०° श० पर सुखाते हैं। इसके बाद अच्छी तरह झामे से साफ़कर, सूखे कपड़े से झाड़, फिर गीले से साफ़ करते हैं। अब इस पर आख़िरी लेप इनामिल की सी वार्निश का लगाते हैं, जो कुछ अधिक औटाकर नैपथा से पतली कर बनाई जाती है। इसके तीन लेप लगाते हैं, और ४८ घंटे तक ७०°—८०° श० पर सुखाते हैं।

अब प्रायः इनके साथ नाइट्रोसैल्यूलोज़ (Nitro cellulose) या सैल्यूलायड (celluloid) मिलाकर आख़िरी वार्निश बनाते हैं। धूप में रखने के बजाय पारे के लैम्प (mercury lamp) की अल्ट्रा-वायलेट (ultraviolet) किरणों में रखकर सुखाते हैं।

सोलहवाँ अध्याय

चर्मकार्यालयों का बनाना

चर्म बनाने का कार्यालय कहाँ बनाया जाए, इस प्रश्न पर विचार करते हुए कितनी ही बातों पर ध्यान रखना होता है। इस काम को सिर्फ़ ऐसी ही जगह कर सकते हैं जो बस्ती से बाहर हो, जहाँ म्यूनिसिपैलिटी को कोई एतराज़ न हो। हर कार्यालय में चाहे वह किसी काम का हो, एक प्रकार की बू होती है, चमड़े के कारखाने में भी बू होती है जिससे प्रायः मनुष्यों को परहेज़ होता है। ठीक प्रकार से कार्य करने में हानिकारक बदबू नहीं हो सकती; फिर भी जहाँ शहर के स्वास्थ्यरक्षकों को कोई एतराज़ न हो वहाँ ही यह कार्यालय खोलना ठीक है। हर शहर में थोड़े-बहुत चमार मिलेंगे जो कि अपना कार्य कर रहे हैं; यह शहर के बाहर रहते हैं। दूसरी विचारणीय बात यह है कि इस काम में बहुत सा धोने-धाने का पानी और प्रयोग किए हुए घोल जैसे चूने के, टैनिन के घोल आदि फेंके जाते हैं। इनमें खाल से प्राप्त बहुत से चेतन पदार्थ होते हैं, जो सड़कर बदबू देने लगते हैं। इसलिए ऐसे घोलों को यों ही बहा देना ठीक नहीं। चर्मकार्यालय ऐसी जगह होना चाहिए जहाँ इनके बहा देने का सुभीता हो। नदी, नाले या म्यूनिसिपैलिटी के गन्दे नाले जिनमें इनको बिना झंझट बहाया जा सके पास होने चाहिएँ। तीसरे इस काम में पानी की बहुत ज़रूरत होती है। जहाँ अच्छा काफ़ी और सस्ता पानी मिल सके यह

काम करना चाहिए। पानी जितना हल्का (Soft) और साफ मिल सके उतना अच्छा। यदि जहाँ से पानी मिले उसकी सतह कार्यालय से ऊँची हो तो और भी अच्छा है; इससे बिना पम्प की मदद के पानी इधर-उधर चला जाएगा। चौथी बात—रेतीली जमीन अच्छी नहीं होती क्योंकि ज़मीन में हौदे बनाने होते हैं। चिकनी मिट्टी की ज़मीन अच्छी होती है। पाँचवें—जिस शहर में यह काम किया जाए वह इसके व्यौपार के ध्यान से अच्छी जगह (Trade centre) होना चाहिए। वहाँ कच्ची खालें बहुतायत से, आसानी से, अच्छी मिलनी चाहिएँ। जहाँ यही कठिनता से प्राप्त हों वहाँ इस काम में लाभ कम होगा। साथ ही चूना, बकला आदि काम की वस्तुएँ वहाँ सुलभता से प्राप्त होनी चाहिएँ। बने हुए सामान को निकासी में भी कठिनता न होनी चाहिए। छठे—सामान लाने ले जाने की चीज़ें (Means of communications and transport) रेलगाड़ी सड़क आदि भी पास होनी चाहिएँ।

इस प्रकार कारखाने की जगह निश्चित कर, कारखाने का नक़शा बनाना चाहिए कि कहाँ-कहाँ क्या काम हो। इसमें चूना गुदाम, चाकर गुदाम, लाच, पकाने के हौदे, करीयरी (curriery) आदि सब एक-दूसरे से इस प्रकार बनने चाहिएँ कि खालों को एक काम की जगह से दूसरे काम की जगह ले जाने में इधर-उधर बहुत न ले जाना पड़े। जैसे भिगोने के पास, कच्ची खालों का गुदाम हो : वहाँ से लिया सीधा भिगोने को डाल दिया। भिगोने के स्थान से मिला चूनागुदाम होना चाहिए, क्योंकि भिगोने से चूने में डालते हैं। यदि भिगोने का काम एक सिरे हो, चूने का दूसरे सिरे, चाकर का तीसरे सिरे, तो इधर-उधर ले जाने का फ़िज़ूल खर्चा होगा—यह ठीक नहीं। जहाँ तक हो सके यह सब जगह ऐसे सिलसिले से होनी चाहिएँ कि जितना कम हो सके उतना कम खालों को इधर-उधर ले जाया जाए। चूना गुदाम से मिला जाँच का गुदाम (Inspection

yard), फिर वोकर, पकाने के हौदे आदि होने चाहिएँ। जैसी जगह हो वैसे ही सब चीज़ों का लगाना चाहिए। कोई ख़ास नक़शा (Plan) हर जगह लागू नहीं हो सकता। पानी को टंकी ऐसी ऊँचाई पर लगानी चाहिए कि हर जगह पानी आसानी से जा सके। लीच का हैन्डलर से ऊँची सतह पर होना अच्छा है।

बॉयलर और ऐंजिन (Boiler and engines) बीच में या जहाँ उनकी आवश्यकता हो वहाँ होने चाहिएँ। दूर होने से शैफ्टिंग (Shafting) आदि ही कितनी शक्ति (Power) ले लेंगे जो हानि होगी। बकला, हड्डी पीसने की चक्की, और मशीन घर जिनको ऐंजिन की दरकार है वह ऐंजिन घर के पास हों। मशीन घर से मिले सुखाने के कमरे हों जिनमें भाप पहुँचाने का भी प्रबन्ध हो। इनसे मिला मँजाई (scouring), बिठलाई (setting) आदि का प्रबन्ध होना चाहिए। चमड़े के कार्यालय में आग लगने का डर अधिकतर बकला पीसने की जगह होता है। इस जगह को इस प्रकार सबसे अलग बनाना चाहिए कि आग लगने पर भी आग और जगह न पहुँच सके। आग बुझाने के लिए पानी आदि का भी प्रबन्ध रखना चाहिए। शुरू में थोड़ी जगह में काम निकल आता है, पर उन्नति करने पर काम बढ़ने से उसमें और स्थान की जरूरत होती है, इसलिए हर काम के स्थान को शुरू में ही इस प्रकार रखना चाहिए कि काम बढ़ाने पर भी चमड़े आदि ले जाने का सुभीता रहे और पहले बने गुदामों को न तोड़ना पड़े। यदि इस बात का पहिले से ध्यान न रक्खा गया, तो मुमकिन है कि समय पर और गुदाम बढ़ाने के लिए कुछ उखाड़कर फिर से बनाना पड़े।

ऐंजिनों में कन्डैंसिंग ऐंजिन्स (condensing engines) की अपेक्षा हाई प्रेशर ऐंजिन्स (High Pressure Engines) चर्मकार्यालय के लिए अच्छे होते हैं, क्योंकि इनकी भाप सुखाने के घर को गर्म करने के

लिए प्रयोग हो सकती है। ऐंजिन के साथ एक डाइनेमो (Dynamo) लगाने से कारखाने में ही बिजली भी पैदा हो सकती है। मशीनें इस बिजली से चलाई जा सकती हैं। इस तरकीब से दूर ले जाने में भी इतनी शक्ति नहीं खराब होती जितनी शैफ्टिंग (Shafting) से ले जाने में होती है। वनस्पति पदार्थों के पीसने की मशीनों के चलाने के लिए ढकी हुई (आरमर्ड armoured या आयरन केस्ड Iron cased) मोटर अच्छी होती है। थोड़े काम के लिए गैस के या तेल के ऐंजिन अच्छा काम देते हैं।

वनस्पतियों से पकाने के स्थान में छत स्लेट या फ़ैल्ट की बनाना अच्छा होता है। छत में लोहे के शहतीर या कोई भी लोहे की चीज़ का होना हानिकारक है। जो जल ठंडा होकर उन पर जम जाता है, उससे उनमें ज़ंग लग जाती है। यह ज़ंग इन पकानेवाले घोलों में गिर कर चमड़े पर लोहे के धब्बे दे देती है। वनस्पतियों से पकाने के स्थान में धूप का आना हानिकर है, इसलिए उत्तर दिशा में काँच की खिड़की द्वारा रोशनी का प्रबन्ध करना चाहिए। फ़र्श के लिए कांक्रीट का फ़र्श सब जगह ठीक है। जहाँ ज़मीन सस्ती न हो वहाँ दुमंज़िले पर भी काम किया जा सकता है। हौदे ढोल आदि तो नीचे के फ़र्श पर ठीक रहते हैं; मशीनें, सुखाने के घर आदि ऊपर बनाए जा सकते हैं।

हौदों के बनाने में ढाल का ख़याल रखना होता है। जिन-जिन हौदों के (भिगोने के, चूना देने के, बेट्स के, सस्पेन्डर्स के) घोल फेंके जाने को हों, उन हौदों की नाली गंदे नाले की सतह से काफ़ी ऊँची होनी चाहिए जिससे कि इनमें के घोल आसानी से बहाए जा सकें। इस बात को देख कर यदि हौदे ज़मीन में खोदकर बन सकें तो खोदकर वर्ना ज़मीन पर बनाए जाएँ। ज़मीन को हमवार और ठोसकर ईंट की या रीइनफ़ोर्स्ड कांक्रीट (Reinforced concrete) की तली बनानी चाहिए।

दिवालें ईंटों की बनाई जाएँ। एक काम के हौदे बराबर बराबर दो पंक्तियों में बनाए जाते हैं। हर हौदे के बीच में ऊपर चलने को फुट भर जगह छोड़ देते हैं। दीवालों के बीच की जगह मिट्टी से भर देते हैं और सब हौदों की सतह इस प्रकार बराबर कर देते हैं। दोनों पंक्तियों के बीच में दो-तीन फुट जगह छोड़ देते हैं। इसमें नाली रखते हैं जो इतनी चौड़ी होनी चाहिए कि एक आदमी आसानी से घुस कर साफ़ कर सके। इस नाली की सतह हौदों की तली की सतह से नीची होनी चाहिए और उसका ढाल गंदे नाले की तरफ़ होना चाहिये। हर हौदे में तली पर कोने के पास एक छेद रखते हैं, जिसमें समकोण के रूप (like a right angle) पोर्सिलेन की एक नाली बैठा दी जाती है। इसमें होकर हौदे का पानी बीच की नाली में बहता हुआ बाहर चला जाता है। इस बीच की नाली को ऊपर से पत्थर से ढक देते हैं, जिसमें ज़रूरत पर पत्थर को हटा आदमी नीचे उतर जाता है। हौदे की खड़ी नाली में लकड़ी का डाट लगा देते हैं, जिसकी मूठ हौदे की सतह से ऊपर रहती है। ऊपर से ठोक देने से नाली बन्द हो जाती है। जब हौदे का जल निकालना हो इस डाट को निकाल लेते हैं : पानी निकल जाता है। हौदे की ईंटों पर सीमेन्ट कर देते हैं। पर इसमें लोहे का अंश न होना चाहिए, क्योंकि इससे वनस्पति घोल ख़राब हो जाते हैं। इसलिए औटे हुए अलसी के तेल का या ऐसी वार्निश का इस पर लेप कर देते हैं जो वनस्पति घोलों को ख़राब न करे। हौदों के ऊपर एक तरफ़ से नाली बना देते हैं, जिसमें होकर हौदों में घोल या पानी दिया जाता है। जिस हौदे में जल आदि देना हो उस पर से इस नाली की डाट खोल देते हैं।

सुखाने के घर या गर्म घर (Drying rooms, Hot chambers, Stoves)—यूरोप और अमरीका में बहुत तरह के गर्म घर बनाए जाते हैं उन सबका आधार यही है कि भाप या गर्म हवा देकर कमरों

को गर्म किया जाए। भाप देने के लिए लोहे के नल कमरे के फ़र्श पर लगा देते हैं। इनमें भाप छोड़ने से कमरे की इनके पास की हवा गर्म होकर ऊपर उठती है; उसकी जगह ठंडी हवा आकर गर्म हो जाती है। यही हाल चलता रहता है और इससे तमाम कमरा गर्म हो जाता है। नलों में भाप का पानी पकड़ने के यंत्र (steam traps) लगा देते हैं जिससे भाप का जो पानी बने बहकर निकल जाए। कमरे की हवा बदलने के लिए फ़र्श के पास ठंडी हवा के आने के लिए और छत्त के पास गर्म हवा के बाहर जाने की खिड़कियाँ होती हैं। दूसरी प्रकार के गर्म घर में ठंडी हवा को पंखे द्वारा गर्म करने के यंत्र (हीटर Heater) में से देते हुए कमरे में भेजते हैं। हीटर में होकर जाने से हवा गर्म हो जाती है। इस गर्म हवा को कमरे में सारे में फैलाने के लिए कितनी ही तरकीबें करते हैं। कहीं तो पंखों से इसको सारे में फैलाते हैं। कहीं हीटर से मिले हुए नल होते हैं जो कमरे में सारे में लगे होते हैं। इनमें नन्हे नन्हे छेद होते हैं। इन छेदों में होकर गर्म हवा निकलती है और सारे में फैल जाती है। इस प्रकार घर को गर्म करने के सिवाय, कहीं कहीं चमड़ों को कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे ले जाने का प्रबन्ध होता है। एक तरफ़ चमड़े टाँगे जाते हैं; दूसरे सिरे पहुँचने तक वे सूख जाते हैं और उतार लिए जाते हैं। इस प्रकार हिलते रहने से चमड़े जल्दी सूखते हैं। इस तरह के कमरों को टनैल (Tunnel) कहते हैं। छोटे कमरों को गर्म करने की सबसे हल्की तरकीब भट्टी से गर्म करने की है।

इन कमरों का ताप और हवा में का पानी देखने के लिए हाइग्रोमीटर (Hygrometer) रखना चाहिए। इसके होने से गर्मी और हवा के सुखाने की शक्ति का पता चल जाता है।

सत्रहवाँ अध्याय

संयुक्त प्रान्त के चर्म व्यवसाय का वर्णन तथा कुछ सम्मतियाँ

चर्म व्यवसाय की खालों के व्यवसाय से इतनी अधिक घनिष्ठता है कि खालों के व्यवसाय को बिना देखे चर्म व्यवसाय का पूरा वर्णन नहीं हो सकता। चमड़ों का मुख्य आधार तो खालें ही हैं और जब तक इनकी उन्नति न हो चमड़ा ठीक कैसे हो सकता है। भारतवर्ष में खालें तो बहुतायत से होती हैं, पर वे अधिकतर विदेशों में चली जाती हैं। केवल थोड़ी ही सी का यहाँ पर चमड़ा बनता है। विदेशों का बना हुआ चमड़ा भी यहाँ काफ़ी आता है। इससे प्रकट है कि इस व्यवसाय में उन्नति के लिए अवकाश है। क्यों न, यह खालें कच्ची दशा की अपेक्षा चमड़े के रूपान्तर में विदेशों को जाएँ और यह धन देश में रहे।

यहाँ की खालों के इतने अच्छे दाम नहीं उठते जितने कि उठ सकते हैं। इसके कई कारण हैं। जो बुराइयें कि खालों में होती हैं, वे पीछे लिख चुके हैं। ये बुराइयाँ तीन स्थानों पर पैदा हो जाती हैं। (१) पशु को जीवित अवस्था में, जैसे कोड़े, चाबुक आदि से मारने के निशान; गोदने के निशान; नार्कीले बाड़े आदि की खुचटों के निशान। (२) पशु पर से उतारने (flaying) में। (३) रक्षित रखने के प्रयोग

(curing) के ठीक प्रकार से न किए जाने में। भोजन, बीमारी और कीड़ों के काटने का भी खाल पर बहुत काफ़ी असर पड़ता है। यह पहिली श्रेणी में आ जाता है। यदि पशु स्वामी उनके भोजन की ओर ध्यान रक्खें, उनको कीड़ों से बचाएँ, बीमारी में पशु के अस्पतालों (Veterinary hospitals) से सहायता लें, तो वे पशु उनको अधिक लाभकारी अधिक कार्य करनेवाले साबित होंगे। मनुष्य का स्वभाव भी दूसरों को दुख से बचाने का है : इसलिए भी उनका स्वस्थ रखना चाहिए। ऐसा होने से जो खालें कि चर्म व्यवसाय के लिए आएँगी, उनसे अच्छा चमड़ा बनेगा और उनके दाम अधिक मिलेंगे।

पशुओं पर से खाल उतारने का काम क़साई करते हैं, गो मरे हुए पशु पर से हिन्दुओं की एक विशेष जाति ही खाल उतारती है। पशुओं के बध करने तथा उन पर से खाल उतारने का कार्य म्युनिसिपैलिटी से निर्मित बधस्थानों (butcheries) में और थोड़ा-बहुत इधर-उधर गाँवों में होता है। यह बधस्थान शहर से बाहर बने होते हैं। क़साई दिन में पशुओं को यहाँ ले आते हैं और रात्रि में दिन निकलने से पूर्व इनको बधकर इनकी खाल उतार लेते हैं। यह पशु भोजन के लिए बध किए जाते हैं। इनका गोश्त अधिकतर यहाँ ही खाने के काम में आता है; कुछ सुखाकर विदेश, प्रायः बर्मा (Burma), चला जाता है। जाड़े के दिनों में यह व्यापार बढ़ जाता है और इसी कारण इस ऋतु में बहुत खालें निकलती हैं। अक्सर खालों की अपेक्षा गोश्त क़ीमती समझा जाता है। उसके ऊपर सफ़ेद झिल्ली रहते हुए उसकी क़दर होती है। छावनियों में जो गोश्त जाता है, उस पर इस झिल्ली का रहना ज़रूरी है। इसी से क़साई अक्सर खाल से लगाकर गोश्त उतारते हैं, जिससे खाँचे (cuts) पड़ जाते हैं और खाल ख़राब हो जाती है।

हर जगह यह पुकार है कि भारत की खालें ख़राब आती हैं। बात यह नहीं है कि यहाँ की खालें ऐसी ख़राब होती हैं बल्कि उतारने में और रक्षित रखने के प्रयोगों में वे ख़राब हो जाती हैं। यदि उतारने में उनमें खाँचे न पड़ने पाएँ तो वे अच्छे दामों में बिक सकती हैं। इसका यह मतलब नहीं कि क़साइयों को खाल उतारना नहीं आता या वे उतार नहीं सकते, कारण यह है कि उनको कठिन समस्याओं का सामना करते हुए यह कार्य करना पड़ता है। वधस्थानों में जगह काफ़ी नहीं होती; रोशनी का ठीक प्रबन्ध नहीं होता; जाड़े में कार्य बढ़ जाने से यह कार्य खुले मैदानों में भी करना पड़ता है, समय भी दिन भर का सबसे ठंडा समय होता है—जाड़े में तो कहना क्या! काँपते हुए हाथों से अँधेरे में खालों के कट जाने में क्या ताज्जुब है। फिर गोश्त भी झिल्ली के लिए सटाकर उतारना होता है। इनकी छुरिएँ भी अच्छी नहीं होतीं जिनसे बहुत कुछ हानि हो जाती है। बहुत से मनुष्य जिन्हें खाल उतारना नहीं आता पर सीखना चाहते हैं, जैसे क़साइयों के लड़के आदि, इस अधिक काम के समय इस काम में लग जाते हैं। इनकी अनभिज्ञता के कारण बहुत सी खालें इनसे ख़राब होती हैं।

खाल उतारने की मज़दूरी फ़ी जानवर मिलती है, इसलिए उनको जल्दी भी पड़ी रहती है। जितने अधिक जानवरों पर से उतार लें उतने ही अधिक पैसे मिलते हैं। यह मज़दूरी भी बहुत थोड़ी होती है, जिससे जीवन निर्वाह के लिये उन्हें शीघ्रता करनी पड़ती है। यदि उनकी आर्थिक अवस्था सुधारी जाए, उनको काफ़ी मज़दूरी मिल जाए, तो वे अवश्य, समय का ख़याल न कर, काम करें और उसे अच्छी तरह पूरा करें। यदि खालों को बिना कटे उतारना है तो काफ़ी स्थान और रोशनी का भी प्रबंध होना चाहिए। यदि बड़े बड़े स्थानों में जहाँ बहुत सी खालें निकलती हों, दक्षिणी अमरीका के वधस्थानों (Saladeros) के से वध-

स्थान बनाए जाएँ तथा उस प्रथा पर काम हो, तो और भी अच्छा हो। वहाँ कई आदमी मिलकर एक पशु पर से खाल उतारते हैं। हर मनुष्य केवल किसी खास भाग पर से खाल उतारता है और फिर दूसरे को दे देता है। इस प्रकार जब एक आदमी एक ही भाग पर से उतारता है, वह उससे कहीं अधिक दस्तगत हो जाता है जो सारे पशु पर से उतारता है। इसका असर यह होता है कि खाल के ठीक उतरने से उसके दाम बढ़ जाते हैं।

दूसरी खराबी जो खालों में पाई जाती है, वह इधर-उधर गोश्त का लगा रह जाना है, जो कि अक्सर खाल का वज़न बढ़ाने के लिये छोड़ दिया जाता है। चाहे जितनी भली प्रकार भी नमक लगाया जाए पर यह गोश्त सड़ने लगता है और यह सड़न सारे में फैलकर खाल को खराब कर देती है। इसलिए यह अति आवश्यक है कि खाल पर का गोश्त बिल्कुल निकाल दिया जाय। मुर्दा पशुओं पर से जो लोग खाल उतारते हैं वे क़साइयों के से होशियार नहीं होते और जहाँ-तहाँ गोश्त लगा छोड़ देते हैं; ऐसा नहीं होना चाहिए।

खालें किन किन दशाओं में बाज़ार में आती हैं, तथा उनमें क्या क्या अच्छाई और बुराई होती हैं, तीसरे अध्याय में लिख ही चुके हैं। उस से यह साफ़ प्रतीत होगा कि नमक के सिवाय और कोई चीज़ खालों को रक्षित रखने के लिए उतनी ठीक नहीं है। जहाँ तक हो खालों को सुखाया न जाय; सब खालें नमक लग कर ही बाज़ार में आनी चाहिएँ। नमक लगकर भी बहुत सी खालें आती हैं; पर उनमें से भी कुछ खराब निकल जाती हैं, तथा वे बहुत दिन नहीं रक्खी रह पातीं। इसका कारण यह है कि इन पर काफ़ी नमक नहीं लगता, लगाने का ढंग ठीक नहीं है, तथा पुराना प्रयोग किया हुआ नमक, जिसमें हानि-कारक कीटाणु होते हैं, नए के साथ में मिलाकर प्रयोग होता है। नमक खाल के वज़न पर कम से कम २५ प्रतिशत तो लगना चाहिए। नमक

लगाने का सबसे अच्छा तरीक़ा पृ० १५ पर बता ही चुके हैं। जब तक कीटाणु और लोहादि रहित शुद्ध नमक न प्रयोग किया जाएगा खालों का अच्छा रहना असम्भव है। ज़रा से ख़र्चे से खालों की क़ीमत इतनी बढ़ सकती है कि ऊपरी ख़र्च मज़े में पूरे हो सकते हैं।

चमड़ा बनाने के संयुक्त प्रान्त में चन्द बड़े बड़े कारख़ाने (टैनरी Tannery) हैं ; और कुछ चमड़ा देहात (cottages) में बनता है। कारख़ानों में सब प्रकार के कामों का चमड़ा बनता है, यथा ज़ीन, साज़, सूट केस, हैन्ड बैग, जूते के ऊपर का, अस्तर का, तले का। जूते के ऊपर का चमड़ा छोड़कर बाक़ी चमड़े वनस्पतियों से पकाए जाते हैं।

यह ऊपर का चमड़ा क्रोम से केवल दो तीन कार्यालयों में बनता है और बाक्स साइड या क्रोम का चमड़ा कहलाता है। जूतों के ऊपर का ग्लासी किड (Glace kid) या पेटेन्ट संयुक्त प्रान्त में ही क्या भारत में कहीं नहीं बनता, यद्यपि यहाँ की बकरी की खालें इसके लिए उपयुक्त हैं और इन्हीं का अमरीका में ग्लासी किड बनता है। इन भारी चमड़ों को छोड़कर और ख़ुशनुमा चमड़े (fancy leathers), पेटेन्ट का चमड़ा, क्रोम से पका तले का चमड़ा, करघे—पिकर और पिकर बैन्ड (Picker and picker band)—का चमड़ा, कताई के बेलन का चमड़ा (रालर Roller leather), शैमाय आदि विदेश से आते हैं; यहाँ नहीं बनते हैं।

इन कार्यालयों में जो चमड़ा बनता है, वह अच्छा बनता है, फिर भी उसमें उन्नति का काफ़ी अवकाश है। इसकी उन्नति तब ही हो सकती है जब कि ये कार्यालय भी अपने काम को रसायनिक संरक्षण (analytical control) में करें, नए नए अच्छे तरीक़ों को और यंत्रों को चमड़ा बनाने में प्रयोग करें ; तथा मज़दूरों की दशा को भी सुधारें। कार्यकुशल संतुष्ट मज़दूर जितना और जैसा अच्छा काम कर सकता है उतना नया

या असंतुष्ट आदमी कभी नहीं कर सकता। इसलिए उनके वेतन, रहन सहन, आराम, शिक्षण आदि की ओर ध्यान देना चाहिए।

रसायनिक संरक्षण में कार्य्य करने की ओर तो यहाँ पर तनिक ध्यान नहीं है : यहाँ तक कि इसको फ़िज़ूल समझते हैं। पर ऐसा नहीं है। इस तरह कार्य्य करने से कार्य्यकर्ता को पूर्ण विधि के हर भाग का पूरा पूरा ज्ञान हो जाएगा और वह उसमें आसानी से उन्नति कर सकेगा। इसके अतिरिक्त रसायनवेत्ता कच्चे माल जैसे चूना, चाकर, बाइक्रोमेट, हाइपो, बकला, हड्डा, चर्बी आदि की ख़रीदारी में मदद दे सकता है। बिना जचवाए चीज़ लेने में धोखा रहता है। जैसे बकला लिया ; देखने से पता नहीं चल सकता कि उसमें कितनी टैनिन है जो कि उसमें की प्रधान कार्य्यकर्त्री वस्तु है और जिसका उचित मात्रा में होना आवश्यक है। उससे कम होने में उस बकले को लेने में घाटा है। रसायनवेत्ता तमाम नमूनों को जाँचकर बता सकता है कि उचित मात्रा में टैनिन किस किसमें है। यदि इस प्रकार १ % टैनिन ही ज़्यादा आ जाए तो एक कारख़ाने में जहाँ हज़ारों मन बकला प्रतिवर्ष लिया जा रहा है, बहुत काफ़ी लाभ होगा। अन्दाज़ करने के लिए यों समझिए कि यदि बबूल की छाल १ रु० ४ आ० फ़ी मन हो और बिना जाँचे लेने में उसमें १६ % टैनिन की अपेक्षा १५ % हो तो १ % टैनिन की कमी से १ आ० ३ पा० की हानि हुई। १००० मन पर ७८ रु० की हानि हो गई। जब कि लाखों मन छाल ली जाए तो यह हानि बहुत होगी और यदि १ % से भी अधिक टैनिन कम हो जैसा असम्भव नहीं है तो हानि हज़ारों रुपए की होती है। इसलिए जाँच करवाकर लेने से चीज़ अच्छी आती है और लाभ होता है। इस कार्य पर का ख़र्च स्वार्थ ही नहीं हो जाता पर उसी में से निकल आएगा। इसी प्रकार वह प्रयोगित वनस्पति पदार्थ को जाँचकर उसमें उचित मात्रा से अधिक टैनिन न जाने देकर व्यर्थ

की हानि न होने देगा। इन बातों पर विचार करने से साफ़ प्रतीत होता है कि उन्नति के लिए इन कार्यालयों को इस ढंग पर कार्य करना चाहिए।

देहात में भी बहुत काफ़ी चमड़ा बनता है, परंतु यह अच्छा नहीं होता और इसकी उन्नति की ओर ध्यान देना आवश्यक है। देहात में जो चमड़ा बनता है, वह देसी जूते, सस्ते जूतों के तले, सस्ते हैंड बैग, सूटकेस, मोठ, मशक, अस्तर आदि के काम में आता है। यह सब वनस्पति पदार्थों से पकाया जाता है। यह चमड़ा जल्दी ख़राब हो जाता है, पानी लेकर सड़ने लगता है। वैसे भी प्रायः दाना ख़राब होता है। इसमें बदबू आती है। बरसात में इसकी बनी चीज़ों पर फफूँदी आ जाती है। बढ़िया चीज़ों के लिए इसका प्रयोग नहीं होता। अस्तर के लिए जहाँ-तहाँ थोड़ी सी क्रोम की भेड़ी भी बनाई जाती है।

देहात में खालों को सड़ते हुए पानी में व पोखरों में भरे हुए बरसात के पानी में भिगोते हैं। इसमें खालें भीग अवश्य जाती हैं, पर जो बुराइयें चमड़े में पैदा हो जाती हैं वे फिर दूर नहीं हो सकतीं। दाना अमूमन ख़राब हो जाता है। इन बुराइयों का वर्णन पीछे कर ही चुके हैं। इनके हौदे ज़मीन में गड़ी हुई गोल नाँदे होती हैं, जिनमें चमड़ा फैलकर नहीं पड़ सकता। उसमें मोड़ने व धारियें पड़ जाती हैं। चूना भी पुराना प्रयोग करते हैं। अमूमन इनके काम में कोई तरतीब या नियम नहीं होता। जैसा मौक़ा देखा वैसा काम कर दिया। हरएक अपनी अपनी झोपड़ी में दो-चार भारी चमड़े एक साथ पकाता है और उसी से अपना निर्वाह करता है। बकरी इत्यादि के छोटे चमड़ों को अधिक संख्या में भी पकाते हैं। पुराने चूने से बहुत अनर्थ होता है। किसी किसी के यहाँ ये हौदे खुले मैदान में होते हैं : जब चाहते हैं पत्थर से ढक देते हैं। ज़मीन में एक नाँद गाड़ते हैं और उसमें गोश्त की छीलन और पानी

भर देते हैं। यह सड़ती रहती हैं। चूना दूर करने के लिए इसी में चूना लगी खालें डालते हैं। ऐसे में सड़ायंद न हो तो क्या हो : चूना इस रीति से अवश्य दूर हो जाता है। पर कीटाणुओं से चमड़े को भी पूरी हानि होती है। कितना ही खाल का पदार्थ व्यर्थ चला जाता है।

पकाने के लिए बबूल की छाल ही ज्यादातर प्रयोग होती है, पर यह लोग इतने ग़रीब होते हैं कि पैसा न होने के कारण छाल न लेके जो कुछ वनस्पति पदार्थ हाथ लग जाता है उसी से पका डालते हैं। अधिकतर थैली बनाकर पकाते हैं। इसके लिए अंधेरी जगह में हौदे के ऊपर थैली को लटकाकर उसमें हल्का घोल छोड़ते हैं। घोल खाल में से निकलकर उस हौदे में टपकता रहता है। उसे फिर थैली में डाल देते हैं। दो-तीन दिन में इस तरह खाल पक जाती है। उसे निकालकर, सुखा के, तुड़ाई कर, पानी के छींटे दे, मुलायम करते हैं। सतह कपड़े से साफ़कर इनको फिर बेच देते हैं। ऐसी कम पकी दशा में वह चमड़ा जल्दी सड़े न और कठोर न हो, तो क्या हो। कभी कभी इस तरह दो-तीन दिन पकाकर थैली को खाल हौदों में पकाते हैं। जो कुछ भी इस तरह इनकी पकावट होती है बहुत हल्की होती है। केवल बबूल की छाल से पकने से इनकी रंगत भी गहरी होती है, जिससे हल्की रंगतें (Light Shades) इन पर नहीं चढ़ सकतीं।

मदरास प्रान्त के देहात में भेड़ और बकरी की खालें तरवद (आवारम) से बहुत पकाई जाती हैं। इससे इनकी रंगत साफ़ आती है और यह मुलायम भी होती हैं। यह विदेशों में बहुत जाती हैं क्योंकि इन पर चाहे जैसी रंगत चढ़ सकती है ; ये दूसरे वनस्पति पदार्थों से और पकाई भी जा सकती हैं ; तथा इनमें वज़न भी दिया जा सकता है। विदेशों में इनको और पकाते हैं तथा रँगते हैं। इनको हाफ़टैन्ड (Half tanned अध-पकी) कहते हैं, गो यह पकी पूर्णतया होती

हैं। यह नाम पड़ गया है। यह कार्य यहाँ भी हो सकता है, पर इसके लिए चमारों को वैसी ही हल्की पकावट देनेवाले पदार्थों का प्रयोग मालूम होना चाहिए। इस पुस्तक में चमड़ा बनाने के सिद्धान्तों का वर्णन है तथा जगह ब जगह भिन्न भिन्न प्रकार के चमड़ों के बनाने के तरीक़े दिये हुए हैं। इनसे वे अपने तरीक़ों को सुधार सकते हैं तथा नए चमड़ों का बनाना हाथ में ले सकते हैं। करघे का चमड़ा, क्रोम से पका मोठ और मशक का चमड़ा आदि बिना मशीन के देहात में बनाए जा सकते हैं।

पर इतने ही मात्र से या बताने से ही काम न चलेगा। वे ग़रीब हैं, उनके पास पैसा नहीं है जो वे अच्छा माल ख़रीदें, उनमें संगठन भी नहीं है। कम से कम इन चीज़ों के ठीक दाम पर मिलने का प्रबंध करना होगा तथा उन्हें इनके प्रयोग की विधि बतानी होगी। इनको सिखाने के लिये स्कूलों का खोलना मेरी राय में तो लाभदायक न होगा। इस बात की जरूरत नहीं है कि उनको सब प्रकार के चर्म बनाने की सब विधियें पढ़ाई जाएँ बल्कि यह प्रयत्न करना है कि उनके बनाए हुए चमड़े अच्छे हों। इसलिए स्कूलों की अपेक्षा एक सरकारी चर्मकार्यालय होना चाहिए, जहाँ पर व्यवसाय की कठिनाइयों को हल किया जाय तथा प्रयोगों द्वारा नई अच्छी विधियाँ निकाली जाएँ। यह विधियाँ उन चमारों को समझाने तथा उसके अनुसार कार्य करना बताने के लिए अलग मनुष्य नियत होने चाहिएँ। जो चर्मकार देखना चाहें वे यहाँ आकर स्वयम् देख जाएँ। जब इस प्रकार चर्मकारों में जागृति होगी और वे इस कार्यालय में नए-नए प्रकार के चमड़ों का बनाना देखेंगे वे आप ही उनका बनाना शुरू करेंगे व अपने आदमियों को सीखने भेजेंगे। तब आवश्यकतानुसार ज़िलों में चर्म बनाने का पूरा वृत्तान्त सिखानेवाले स्कूल खोल दिए जाएँ जो इनके स्थानों से दूर न हों और इनको अच्छी शिक्षा दें।

ऊपर बताई हुई विधि का सरकारी चर्मकार्यालय कानपुर के हारकोर्ट बटलर टैकनोलाजिकल इंस्टीट्यूट में है ही। और के खोलने की तो आवश्यकता नहीं है पर उसके ठीक ढंग पर चलाने की ज़रूरत है। यहाँ पर बढ़िया-बढ़िया मशीनें, ढोल, पैडिल आदि सुप्रकार लगे हैं: पर बेकार पड़े हैं: कभी-कभी यहाँ के विद्यार्थी उन पर थोड़ा-बहुत काम करते हैं। शुरू में तो यही विचार था कि यहाँ पर खोज का कार्य हो, और साथ ही सिखाया भी जाए; पर समयान्तर से खोज पर ध्यान न देकर ख़ाली शिक्षा का कार्य हो रहा है। सन् २५ से अब तक खोज तो यों ही हुई है। हो भी कहाँ से? सिर्फ़ एक आदमी सब कार्य्य करने पर नियत है। वही पढ़ाए; वही कार्यालय को देखे; वही सरकार को चर्म व्यवसाय के बारे में सलाह दे। इतना होते हुए अकेला आदमी खोज (research) को नहीं देख सकता। इसलिए यहाँ पर कई खोजकर्त्ता (research workers) नियत होने चाहिएँ, जिनका काम केवल चमड़े बनाने के बेहतरीन तरीक़ों पर तथा नए प्रकार के चमड़ों के बनाने के तरीक़ों पर अन्वेषण करना हो। यदि इन सामानों के होते हुए भी यह कार्य न हो जिसकी बड़ी आवश्यकता है तो यह सामान व्यर्थ हैं। ऐसे कार्यों के करने की यहाँ से अधिक सुविधा और कहीं नहीं हो सकती। इस काम को करना इन पर लगे रुपए का सदुपयोग करना है। चर्म व्यवसाय की उन्नति करने का यही उत्तम साधन है। चर्मकारों में भी इसकी काफ़ी चर्चा होनी चाहिए जिससे यहाँ के कार्यकर्त्ताओं को उनकी ज़रूरतें मालूम होती रहें तथा चर्मकार यहाँ की खोजों से लाभ उठा सकें।

इसके अतिरिक्त इनकी और कठिनाई कच्चे पदार्थ को ख़रीदने और पक्के को बेचने की है। हरएक थोड़ा-सा कच्चा माल ख़रीदता है और उसके पास थोड़ा ही सा चमड़ा बेचने को होता है। ऐसी दशा में वह माल

अच्छा और सस्ता नहीं खरीद पाता, न पक्के के अच्छे दाम उठा पाता है। एकता ही से यह प्रश्न हल हो सकता है। इसके लिए इनको हर देहात में अपने संघ (सहकर्त्री सभा Co-operative Society) बनाने चाहिएँ। संघ की ओर से देहात में ही कच्चे माल की दूकान होनी चाहिए जहाँ से उचित मूल्य पर ठीक पदार्थ मिल सके। इसका प्रबंध संघ के ही हाथ में होना चाहिए। हर चर्मकार को अच्छे तरीक़े से अच्छा चमड़ा बनाकर संघ को दे देना चाहिए। संघ की ओर से इस माल को बेचने की दूकान गाँव तथा उचित मंडी में होनी चाहिए। इस प्रकार करने से यह अपने पदार्थ का उचित मूल्य उठा पाएँगे; इनको आम दूकानदार के हाथ चाहे जिस मूल्य पर न बेचना पड़ेगा। पर यह बिचारे इतने पैसे कहाँ से लाएँगे कि अच्छी खाल बकला आदि खरीद सकें। यह प्रश्न भी सहकारी बैंक (Co-operative Bank) खोलने से हल हो जाएगा। यह बैंक इनको माल दिलाएँ और जब यह माल तैयार हो जाए उसे ले लें और उसके बिकने पर अपने दाम अपने पास रक्खें और चर्मकार के दाम उसे दे दें। इसी प्रकार मशीनों का प्रश्न भी हल हो सकता है। संघ की ओर से आवश्यक मशीनें लगा दी जाएँ। उनके चलने का प्रबन्ध संघ की ओर से हो और काम की दर नियत हो। जिसको जरूरत हो वह अपना काम यहाँ आनकर करा ले और पैसे दे दे। इस प्रकार हर एक बिना झंझट किए मशीन से लाभ उठा सकेगा। इस थोड़ी सी जगह में सहकारिता (Co-operative lines) से कार्य करने के तरीक़े का संक्षेप में दिग्दर्शन करा दिया है; हेर-फेर तथा नियम परिस्थिति अनुसार बनाए जा सकते हैं। सहकारिता से कार्य करने में ही देहाती चर्म व्यवसाय की उन्नति की आशा की जा सकती है।

अनुक्रमणिका